



हिन्दी प्रचारिणी सभा: (कैनेडा) की अंतर्राष्ट्रीय त्रैमासिक पत्रिका
Hindi Chetna: International quarterly magazine of Hindi Pracharini Sabha Canada
वर्ष : १६, अंक : ६३, जुलाई २०१४ • Year 16, Issue 63, July 2014

हिन्दी चेतना



पास दास

संरक्षक एवं प्रमुख सम्पादक
श्याम त्रिपाठी
(कैनेडा)

सम्पादक
सुधा ओम ढिंगरा
(अमेरिका)

सह-सम्पादक
रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' (भारत)
पंकज सुबीर (भारत)
अभिनव शुक्ल (अमेरिका)

परामर्श मंडल
पद्मश्री विजय चोपड़ा (भारत)
कमल किशोर गोयनका (भारत)
पूर्णमा वर्मन (शारजाह)
पुष्पिता अवस्थी (नीदरलैंड)
निर्मला आदेश (कैनेडा)
विजय माथुर (कैनेडा)

सहयोगी
सरोज सोनी (कैनेडा)
राज महेश्वरी (कैनेडा)
श्रीनाथ द्विवेदी (कैनेडा)

विदेश प्रतिनिधि
डॉ. एम. फ़िरोज़ ख़ान (भारत)
चाँद शुक्ला 'हृदियाबादी' (डेनमार्क)
अनीता शर्मा (शिंघाई, चीन)
दीपक 'मशाल' (फ़्रांस)
अनुपमा सिंह (मस्कट)
रमा शर्मा (जापान)

वित्तीय सहयोगी
अश्विनी कुमार भारद्वाज (कैनेडा)

रेखाचित्र : पारस दासोत
आवरण : अरविंद नारले

डिज़ायनिंग
सनी गोस्वामी (सीहोर, भारत)
शहरयार अमजद ख़ान (सीहोर, भारत)



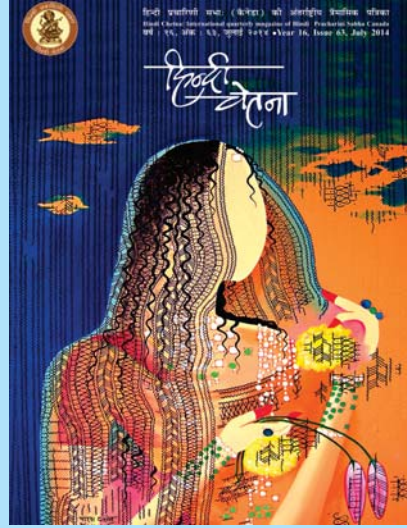
हिन्दी चेतना



(हिन्दी प्रचारिणी सभा कैनेडा की त्रैमासिक पत्रिका)
Hindi Pracharini Sabha & Hindi Chetna
ID No. 84016 0410 RR001

Financial support provided by Dhingra Family Foundation

वर्ष : १६, अंक : ६३
जुलाई-सितम्बर २०१४
मूल्य : ५ डॉलर (\$5), ५० रुपये



घूँघट पट भाषा ने खोले इस आँगन में,
विधि ने भी नूतन विधान महकाया है,
फूल-फूल, चुन-चुन कर पथरीली राहों से,
चेतना की सुरभि ने जहान महकाया है।

-अभिनव शुक्ल

HINDI CHETNA

6 Larksmere Court, Markham Ontario, L3R 3R1
Phone : (905) 475-7165, Fax : (905) 475-8667
e-mail : hindichetna@yahoo.ca
Hindi Pracharini Sabha & Hindi Chetna
ID No. 84016 0410 RR001

Hindi Chetna is a literary magazine published quarterly in Toronto, Ontario under the editorship of Mr. ShiamTripathi. Hindi Chetna aims to promote the Hindi language, Indian culture and the rich heritage of India to our children growing in the Canadian society. It focuses on Hindi Literature and encourages creative writers, young and old, in North America to write for the magazine. It serves to keep readers in touch with new trends in modern writing. Hindi Chetna has provided a forum for Hindi writers, poets, and readers to maintain communication with each other through the magazine. It has brought local and international writers together to foster the spirit of friendship and harmony.

इस अंक में



वर्ष : 16, अंक : 63

जुलाई-सितम्बर 2014

सम्पादकीय 4

उद्गार 5

कहानी

एक ही सवाल

रीता कश्यप 8

कितने चेहरे

रजनी गुप्त 12

उसका नाम

आस्था नवल 17

क्या आज मैं यहाँ होती....

नीरा त्यागी 22

कहानी भीतर कहानी

संस्कृति, विकास और सामाजिकता पर सवाल

सुशील सिद्धार्थ 29

व्यंग्य

पीर पराई मत जानिए

कमलानाथ 28

विश्व के आँचल से

दिव्या माथुर की कहानी 'पंगा' का अंतर्पाठ

साधना अग्रवाल 30

लघुकथाएँ

हकीकत

बालकृष्ण गुप्ता 'गुरु' 16

बचपन

मनोज सेवलकर 27

महानगर का प्रेम-सम्वाद

मधुदीप 29

बचा लो उसे

डॉ. पूरन सिंह 33

पहलौठी किरण

फॉर्दर्स डे

शैली गिल 32

संस्मरण

प्रथा-कुप्रथा

शशि पाधा 34

दृष्टिकोण

समकालीन हिन्दी कहानियों में चित्रित...

सिराजोदिन 37

साक्षात्कार

डॉ.मारिया नेज्येशी

विजया सती 39

गज़ल

सौरभ पाण्डेय 42

कविताएँ

शशि पुरवार 43

सरस दरबारी 44

रश्मि प्रभा 45

रचना श्रीवास्तव 46

ज्योत्सना प्रदीप 47

सविता अग्रवाल 'सवि' 48

हाइकु

डॉ.सतीशराज पुष्करणा 49

डॉ. उर्मिला अग्रवाल 49

हरकीरत 'हीर' 49

नव अंकुर

अदिति मजूमदार 50

भाषांतर

इन्नेबोर्ग बाखमन की दो कविताएँ

हरमन हेस्से की कविता

अनुवाद: अमृत मेहता 51

अविस्मरणीय

अपनी भाषा

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र 52

ओरियानी के नीचे

क्योंकि औरतों की नाक नहीं होती.

डॉ. रेनू यादव 53

पुस्तक समीक्षा

प्रेमचंद की कहानियों का कालक्रमानुसार अध्ययन

देवी नागरानी 55

नीले पानियों की शायराना हरात

रघुवीर 56

उत्तराखण्ड में महाप्रलय

डॉ. सुधा गुप्ता 57

प्रार्थना के बाहर और अन्य कहानियाँ

पंकज सुबीर 58

हमसफ़र पत्रिकाएँ 60

पुस्तकें 60

साहित्यिक समाचार 62

चित्र काव्य शाला 63

विलोम चित्रकाव्यशाला 64

आख़िरी पन्ना

सुधा ओम ढींगरा 65

हिन्दी चेतना को पढ़िये, पता है :

<http://hindi-chetna.blogspot.com>

हिन्दी चेतना को आप

ऑनलाइन भी पढ़ सकते हैं :

Visit our Web Site :

http://www.vibhom.com/hindi_chetna.html

फेसबुक पर हिन्दी चेतना से जुड़िये

<https://www.facebook.com/hindi.chetna>

हिन्दी चेतना का सदस्यता फार्म

यहाँ उपलब्ध है

<http://www.shabdankan.com>

http://www.vibhom.com/hindi_chetna.html

'हिन्दी चेतना' सभी लेखकों का स्वागत करती है। आप अपनी मौलिक रचनाएँ ही भेजें चित्र और परिचय के साथ। 'हिन्दी चेतना' एक साहित्य पत्रिका है अतः रचनाएँ भेजने से पूर्व इसके अंकों का अवलोकन जरूर कर लें।

रचनाएँ भेजते समय निम्नलिखित नियमों का ध्यान रखें :

- हिन्दी चेतना जनवरी, अप्रैल, जुलाई तथा अक्टूबर में प्रकाशित होगी।
- प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों का पूर्ण उत्तरदायित्व लेखक पर होगा।
- पत्रिका में राजनैतिक तथा विवादास्पद विषयों पर रचनाएँ प्रकाशित नहीं की जाएंगी।
- रचना को स्वीकार या अस्वीकार करने का पूर्ण अधिकार संपादक मंडल का होगा।
- प्रकाशित रचनाओं पर कोई पारिश्रमिक नहीं दिया जाएगा।

पत्रिका में प्रकाशित सामग्री लेखकों के निजी विचार हैं। संपादक मंडल तथा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।



कहाँ से सफ़र शुरू हुआ और कहाँ हम पहुँच गए

‘हिन्दी चेतना’ उस लक्ष्य को छूने जा रही है; जो अब तक सिर्फ कल्पनाओं में था। उसकी पूर्ति हेतु निरन्तर संघर्ष जारी था। ‘ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउन्डेशन’ ने नव प्रभात की नई किरण समान हमारी कल्पना में यथार्थ के रंग भर कर सुदृढ़ सहयोग दिया और यह किरण लक्ष्य को साधने में सहायक बनी।

मैथिली शरण गुप्त की पंक्तियाँ—

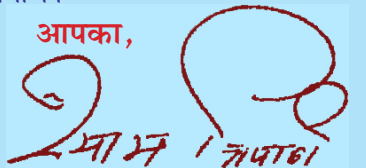
हम कौन थे, क्या हो गए हैं, और क्या होंगे अभी।

आओ विचारें आज मिल कर, ये समस्याएँ सभी ॥

आज हम पर सटीक प्रतीत होती हैं। इन्हीं पन्नों पर हम हिन्दी चेतना की यात्रा का वृत्तान्त लिख चुके हैं और आप उससे जान भी चुके हैं कि विदेश की धरती पर हिन्दी का कार्य करना कठिन और शूलों से भरा हुआ है। कहाँ से सफ़र शुरू हुआ और कहाँ हम पहुँच गए। ‘ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउन्डेशन’ और हिन्दी चेतना द्वारा 26 जुलाई 2014 को हिन्दी भाषा के तीन प्रतिष्ठित साहित्यकारों को कैंनेडा में सम्मानित किया जा रहा है। कैंनेडा एवं ट्रिनिडाड के साहित्यकार प्रो. हरि शंकर आदेश, ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउन्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय साहित्य सम्मान, भारत के श्री महेश कटारे, ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउन्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय कथा सम्मान (उपन्यास), अमेरिका की डॉ. सुदर्शन प्रियदर्शिनी, ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउन्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय कथा-सम्मान (कहानी), से सम्मानित होंगे। पाठक मित्रो, आप सबके सहयोग और आशीर्वाद की हिन्दी चेतना को हमेशा ही आकांक्षा रहती है।

भारत में प्रधान मंत्री नरेन्द्र मोदी ने अनेकों वायदों के साथ ‘हिन्दी भाषा’ के भविष्य और उसके उत्थान का भी वायदा किया है। हमें आशा है कि देश में हिन्दी का भविष्य उज्ज्वल होगा। जिस प्रकार अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता; उसी प्रकार अकेले मोदी जी कुछ नहीं कर पाएँगे। इस कार्य में देशवासियों का हिन्दी के प्रति समर्पण भाव और संवेदनशीलता की आवश्यकता है। हम प्रवासी तो हिन्दी के लिए बहुत कुछ कर रहे हैं और भविष्य में भी करते रहेंगे।

हिन्दी का कार्य दिन-प्रति-दिन कठिन होता जा रहा है; क्योंकि भारतवासी चाहे भारत में हों या भारत के बाहर; विशेषकर हिन्दी वाले एक साथ मिलकर कोई काम नहीं कर सकते। आपस में एक दूसरे के प्रति ईर्ष्या, द्वेष, वैमनस्य, बेहद बढ़ गया है। रोज साहित्य के नए-नए अखाड़े जन्म ले रहे हैं। हर व्यक्ति अपनी ख्याति और नाम के लिए किस हद तक जा सकता है, देखकर ही शर्मिंदगी होती है। अच्छे-अच्छे साहित्यकार इस बीमारी के शिकार हैं। अगर लेखक अपने अहं को साहित्य और लेखन से ऊँचा न समझे, तो यह बीमारी लाइलाज नहीं; ‘अहं’ मरता है तो कलम अपनी बात कह पाती है। फिर जो साहित्य जग के लिए, समाज के लिए, जन-जन के लिए लिखा गया है; ‘अहं’ उस साहित्य से ऊँचा कैसे हो गया? जिस दिन यह बात साहित्यकारों की समझ में आएगी, हिन्दी का विस्तार निर्बाध गति से होगा। निज स्वार्थ से ऊपर उठकर सबके पास एक ध्येय होगा-मानव हित के लिए अच्छे साहित्य का निर्माण।

आपका,

श्याम त्रिपाठी

आज का दर्पण

‘चेतना’ रूपी विहग के पंख विकसित हो गए, समय के अनुरूप ही सौंदर्य चित्रित हो गए। व्योम विस्तृत चाहिए, अब पंख फैलेंगे जहाँ, धरनि से नभ तक पसारा, ज्ञान पसरेंगे वहाँ। प्रगति के सोपान चढ़, निखरी हैं ‘हिन्दी चेतना’ भाव-भीना रूप उद्भूत मूल की संचेतना। आज का दर्पण, विगत के ज्ञान का आधार है, नमन ‘हिन्दी चेतना’ से सात्विक प्रासार है।

-डॉ.मुदुल कीर्ति, एटलांटा, अमेरिका

वैविध्यपूर्ण लेख

‘हिन्दी चेतना’ का जनवरी २०१४ अंक काफी प्रतीक्षा के उपरान्त प्रारम्भ हुआ। धन्यवाद ! हमेशा की तरह सबसे पहले सम्पादकीय और आखिरी पन्ना पढ़ा। ‘हिन्दी चेतना’ पत्रिका को आरम्भ से अंत तक पढ़ना बड़ा ही सुखद लगता है। पत्रिका में हमेशा की तरह ही वैविध्यपूर्ण लेख मिलते हैं। इस बार भी कुछ बहुत रुचिकर मिला। जैसा कि प्रथम ‘साक्षात्कार’ मन को बाँध लेता है। और सुषम बेदी जी ने अपने मन की बात जिस सच्चाई से कह दी है वह कहीं न कहीं अपने मन से एकरूपता लिये हुए लगी। लेखक को पता ही नहीं चलता कि वह अपने लेखन की कौन सी पंक्ति से अपना लिखना आरम्भ करता है और कहाँ उसके मन की भावनाएँ अनायास ही किस विधा के धरातल पर अपने पाँवों की पकड़ को मजबूत पाती हैं और धीरे-धीरे वह रुचि के अनुसार उसी विधा में लिखना आरम्भ कर देता है; क्योंकि उस अपने आसपास के वातावरण से कुछ विचार मिलते हैं और वह अपने मन की बात दूसरों के साथ बाँट लेना चाहता है। अधिक समय मिले और लेखनी का परवाह न रुके तो संभवतः कहानी बड़ा रूपाकार लेकर शायद पाठकों के लिए वह एक रुचिकर उपन्यास बन जाए। मेरे साथ भी ऐसा ही हुआ। आरम्भ में काफी कहानियाँ और कविताएँ लिखीं। छोटी-छोटी कविताएँ हिन्दी साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत हुईं और ‘अंकुर’ नाम से पुस्तक रूप में प्रकाशित

हुई। नारायण दत्त पालीवाल-सचिव-हिन्दी साहित्य अकादमी ने उन्हें सराहा और प्रकाशन हेतु प्रोत्साहन दिया। श्री संतोष आनंद हिन्दी कवि ने पुस्तक की भूमिका लिखकर प्रोत्साहित किया। बस धीरे-धीरे कविताएँ लिखने में रुचि बढ़ने लगी।

-डॉ. चन्द्र सूद, टोरंटो, कैंनेडा

आँखें गीली कर दीं

‘हिन्दी चेतना’ का अप्रैल अंक पढ़ने को मिला। एक प्रख्यात शायर के एक शेर का मिसरा याद हो आया...‘एक चिराग कई आँधियों पर भारी है।’ यँ तो इस अंक के सभी स्तम्भ साक्षात्कार, कहानी, कविताएँ, आलेख, समीक्षा आदि महत्त्वपूर्ण और उत्कृष्ट थे; लेकिन पहली कहानी ‘पापा का फेस बुक अकाउंट’ हिन्दी चेतना के इस अंक की जान लगी। आद्योपांत इस कहानी में एक भावनात्मक बुनावट थी। यँ तो मेरी कविताओ में अधिक रुचि है, हिन्दी काव्य मंचों का छोट-सा कवि हूँ; लेकिन कहानियाँ भी यदा-कदा पढ़ता रहता हूँ। इस कहानी ने मेरी आँखें गीली कर दीं। मुझे लगा इसे मुझे अपने बेटे को भी पढ़ाना चाहिए। वो दिल्ली से एम् टेक कर रहा है। मैंने उसे इस पत्रिका का लिंक भेजा। उसने अपने लैपटोप पर इस कहानी को पढ़ने के १५ मिनट बाद मुझे फोन किया। मुझे उससे जिस प्रतिक्रिया की उम्मीद थी, वही मिली, उसकी भी आँखे नम हो गई थीं। आप अच्छा करते हैं कि रचनाकार का पता और मेल आइडी लिख देते हैं। इस से पाठक सीधे रचनाकार के संपर्क में आ जाता है। मैंने भी मोनी जी को बधाई का मेल किया तो बहुत प्रसन्न हुए। ढींगरा फेमिली फ़ाउन्डेशन सम्मान आरम्भ करने के लिए बहुत-बहुत बधाइयाँ और शुभकामनाएँ।

-डॉ. विष्णु सक्सेना गीतकार, अलीगढ़

विविधता देखने को मिली

‘हिन्दी चेतना’ २०१४ अप्रैल वाली मिली। पढ़कर बहुत अच्छा लगा। एक ऐसी विविधता देखने को मिली; जिसका अभाव अन्य पत्रिकाओं में खलता है। एक साथ इतना कुछ, वह भी एकदम चुनिंदा.....पढ़कर बेहद संतुष्टि हुई। पत्रिका की साज-सज्जा भी अत्यंत मनमोहक है। कुल मिलाकर

नए क्षितिज को ओर अग्रसर

मैंने अनुभव किया है कि विगत तीन-चार अंकों से ‘हिन्दी चेतना’ का स्वरूप सामान्य धरातल से उठकर नए क्षितिज को ओर अग्रसर हो रहा है। इसकी सीमा-फलक भी विश्व की परिधि छूने लगा है। श्री रामेश्वर काम्बोज ‘हिमांशु’ जी तथा श्री पंकज सुबीर जी आदि हिन्दी के वरिष्ठ साहित्यकारों का सहयोग अत्यंत उज्वल भविष्य की सम्भावनाएँ प्रदान करता है। अब ‘हिन्दी चेतना’ भारत से भी प्रकाशित होने लगी है। तदर्थ बधाई स्वीकार कीजिए। हिन्दी चेतना का वर्तमान स्तर सामान्य पाठकों के स्तर से ऊपर उठकर शोधकर्ताओं के लिए अधिक उपयोगी बन गया है। पत्रिका के प्रत्येक अंक में सम्पादकीय, आखिरी पन्ना तथा अभिनव शुक्ल जी की आवरण अथवा चित्र सम्बंधित चार पंक्तियाँ मेरे लिए प्रमुख आकर्षण होती हैं। स्तर बनाए रखिये। जनवरी-मार्च 2014 के अंक में नरेंद्रकुमार सिन्हा की हिन्दी कविता ‘नए वर्ष का नया विहान’ सराहनीय है। विस्मृति के गर्भ में समाई हुई स्वर्गीय श्री श्यामलाल गुप्त ‘पार्षद’ की रचना ‘विजयी विश्व तिरंगा प्यारा’ प्रकाशन के लिए धन्यवाद। यह नई पीढ़ी के लिए सुंदर संदेश है। सर्वश्री रमेश तैलंग, अखिलेश तिवारी तथा अशोक मिजाज की उर्दू ग़ज़लें सुंदर हैं। यदि संभव हो तो हिन्दी की शुद्ध लयात्मक अथवा छन्दात्मक निर्दोष कविताओं को भी प्रोत्साहन दीजिये। अमेरिका के अभिनव शुक्ल जी तथा कैंनेडा के कविवर डॉ. शिवनंदन यादव सिद्धहस्त कवि हैं। इनकी कविताओं का आनंद-लाभ प्राप्त हो सके तो श्रेयस्कर होगा। इस भावाभिव्यक्ति का अभिप्राय है कि अब ‘हिन्दी चेतना’ उस स्तर पर पहुँच चुकी है, जहाँ पर प्राप्त रचनाओं का भली-भांति चयन किया जा सकता है। चेतना परिवार के सभी सदस्यों को शुभकामनाएँ तथा यथोचित अभिवादन।

-महाकवि प्रो. हरिशंकर आदेश, त्रिनिडाड

‘हिन्दी चेतना’ एक सार्थक रूप में आई है। आप निःसंदेह बधाई की हकदार हैं। मेरी शुभकामनाएँ हमेशा आप और आपके सभी सहयोगियों के साथ है।

-मृदुला प्रधान, दिल्ली

बेघर सच-की परतें

‘हिन्दी चेतना’ का अप्रैल अंक मिला। प्रतीक्षास्त हृदय को सुकून मिला। विविध विधाओं पर पठनीय सामग्री में मन खूब रमा। कविता वाचकनवी के साहित्य का चरम उद्देश्य ही लोकमंगल बताया गया जो स्तुत्य है। पुरस्कार प्राप्त करने वाले तीनों साहित्यकारों को बधाई। सुधा जी साहित्यिक चेतना को जगाने, पुरस्कृत करने में सदा चिन्तनशील है। हाइकु, गजल, कविता मन को उद्वेलित करती रही। पुस्तकीय समीक्षा उत्कृष्ट रही। पुष्पिता अवस्थी की कविता गहरे तक उतरती है और उठती है संवेदना का ज्वार-भाटा। जानवर, लिटमस-लघुकथा आधुनिक मानव मन पर करार व्यंग्य है। पापा का फ़ेसबुक एकाउंट-मनमोहन मोनी की दिल को छूती कहानी है; जो फ़ेसबुक की अच्छाइयों को गुलाब की पंखुड़ी सम खोलती है। मोनी जी कहानी में प्रथम पुरुष व अन्य पुरुष दोनों का सम्मिश्रण रखते हैं। नया प्रयोग है। सुशील सिद्धार्थ जी ने सुधा जी की कहानी-बेघर सच-की परतें खोल दी हैं। बिना पढ़े कहानी सामने आ खड़ी होती है और नंगा हो जाता है प्रश्न कि औरत का घर कौन सा है, कहाँ है। सुधा जी व सुशील जी बधाई के पात्र हैं। ब्रजेश राजपूत एक प्रश्न उछालकर झकझोर देते हैं। कर्ज कहानी मानवीय संवेदना पर चोट करती है। मानव का मानव होना सार्थक किया है। प्रतिफल-सामाजिक विसंगतियों पर आघात करती है। अन्य सभी स्तम्भ ताज़गी का एहसास कराते हैं। पत्रिका निरन्तर चहुँमुखी प्रगति की ओर अग्रसर है।

शोभा रस्तोगी, दिल्ली, भारत

वैश्विक साहित्य का मंच

‘हिन्दी चेतना’ लगभग बाल्यावस्था में थी, जब सुधा जी ने मुझे इस पत्रिका के साथ जुड़ने का आमंत्रण दिया। आज यह षोडशी हो गई है और विभिन्न रंगों से सुसज्जित इसके स्वरूप को देखकर

ममतासिक्त आनन्द का अनुभव हुआ। धीमे-धीमे उन्नति के सोपान चढ़ती हुई आज यह वैश्विक साहित्य का मंच बन कर लेखकों को और बेहतर, प्रेरणाप्रद और शिवम् से ओतप्रोत साहित्य लिखने के लिए उत्साहित और प्रेरित करती है। इस के माध्यम से हम विश्व के अन्य लेखकों से जुड़ से गए हैं। ‘ढींगरा फ़ेमिली फ़ाउन्डेशन’ की ओर से साहित्यकारों को सम्मानित करने का निर्णय एक बहुत ही सराहनीय कदम है, उसके लिए हिन्दी चेतना और फ़ाउन्डेशन के सदस्यों को साधुवाद। हर बार की तरह पत्रिका में समेटी सभी विधाओं को पढ़ना सुखद लगा। इस अंक में मेरी कुछ नई रचनाओं को स्थान देने के लिए सम्पादक मंडल का आभार।

-शशि पाधा, अमेरिका

साहित्यकारों का चयन बेहतरीन

पंकज सुबीर द्वारा जारी एक विज्ञप्ति से पता चला कि ढींगरा फ़ाउन्डेशन और हिन्दी चेतना के साहित्यिक सम्मानों की शुरुआत हो गई है। साहित्यकारों का चयन बेहतरीन है। मैं कथा यू.के. की ओर से पंकज सुबीर और सम्मानित साहित्यकारों को बधाई देता हूँ। यह हिन्दी जगत में एक नए युग की शुरुआत है।

-तेजेन्द्र शर्मा, महासचिव-कथा यूके लन्दन

उत्तरदायित्वपूर्ण फैसला

ढींगरा फ़ेमिली फ़ाउन्डेशन और हिन्दी चेतना परिवार सहित श्याम त्रिपाठी जी को हार्दिक बधाई और शुभकामनाएँ। हिन्दी यूनिवर्स फेडरेशन की ओर से सम्प्रेषित है कि आप लोगों के द्वारा वैश्विक स्तर पर समकालीन उत्कृष्ट साहित्य की प्रज्वलित मशाल की ज्योतिष चेतना से जनमानस को आलोकित करने के लिए अपनी तरह सम्मान प्रदान करने का जो उत्तरदायित्वपूर्ण फैसला लिया है। साहित्य साधकों को मेरी ओर से तथा मेरी पति भगवान की ओर से हार्दिक बधाई और विशेष प्रणाम। इस श्रेष्ठ धारणा के साथ कि सम्मान देना और सम्मान लेना एक गौरवशाली परम्परा है। दरअसल साहित्य सम्मानों की इस सुविचारित प्रक्रिया में साहित्य के माध्यम से उस साहित्य की भाषा, संस्कृति और समाज ही सम्मानित होता है

डॉ. कमल किशोर गोयनका का पत्र प्रो. हरिशंकर आदेश के नाम

‘हिन्दी चेतना’ का पुरस्कार सम्मान इस बार आपको प्रदान किया जाएगा। मुझे इससे आत्मिक प्रसन्नता हुई है। आपकी दीर्घ साधना तथा भारतीय संस्कृति की उपासना को देखते हुए यह सम्मान और बड़ा हो सकता था, किन्तु पुरस्कार प्रदाताओं के मन में आपके प्रति श्रद्धा तथा आपके सघनकार्य के प्रति जो सम्मान है, वह बहुत ही पवित्र एवं सात्विक है, अतः स्वागत-योग्य है। बड़े हर्ष और गौरव की बात है कि आपका सार्वजनिक रूप से कनाडा में सम्मान होगा। आपका कार्य भारतीय संस्कृति, धर्म, संगीत, साहित्य, भाषा में इतना है कि उसे सम्मानित करने का कोई साधन हमारे पास नहीं है। सिवाय इसके कि हम ईश्वर से प्रार्थना करें कि आप दीर्घ आयु पाएँ, स्वस्थ रहें, राम पर महाकाव्य को पूरा करें और अपनी आत्मकथा लिखें। हम कितने स्वार्थी हैं कि आपसे चाहते ही हैं, हमारी झोली में कुछ नहीं है। आपने अपना जीवन अर्पित कर दिया, यह भारतीय होने का प्रसाद है, यह हिन्दू संस्कृति के उपासक होने का वरदान है कि आपका नाम और काम इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में लिखा जाएगा। भारत का दुर्भाग्य है वह आपके बारे में कम जानता है। आप तो ‘भारत-रत्न’ हैं, चाहे हमारी सरकार माने या न मानें। सच्चे भारत-रत्न का यही स्वरूप है कि वह भारत को आत्मा का अंग बना ले, भारत के श्रेष्ठतम रूप से विश्व को परिचित कराए और संस्कृति के विकास में जीवन अर्पित कर दे। आपका जीवन धन्य है, केवल इस पुरस्कार से नहीं अपितु आपके कृतित्व से, आपकी रचनात्मक प्रतिभा से, आपके भारत-प्रेम से और आपके ज्ञान एवं प्रतिभा से। ईश्वर से प्रार्थना है कि आप स्वस्थ रहें, अपने कार्यों को पूरा करें और हमारा मार्ग-दर्शन करते रहें।

-डॉ. कमल किशोर गोयनका, भारत

व्यक्ति तो सिर्फ माध्यम भर है.....एक सार्थक गौरवशाली बहाना है। अमेरिका की धरती से हिन्दी चेतना और ढींगरा फ़ाउण्डेशन के द्वारा प्रो. हरिशंकर आदेश, सुदर्शन प्रियदर्शिनी जी और श्री महेश कटारे जी पुरस्कृत हो रहे हैं; उससे वह देश हिन्दी भाषायी संस्कृति, उसका समाज, वहाँ का संघर्ष.. वहाँ की चेतना और उत्साह पुरस्कृत हो रहे हैं। ढींगरा फ़ेमिली फ़ाउण्डेशन को पुनः हम दोनों की बधाई और शुभकामनाएँ।

-भगवान प्रसाद-पुष्पिता अवस्थी, नीदरलैण्ड

सफल संपादन

‘हिन्दी चेतना’ का नया अंक हासिल हुआ। उसकी पठनीयता जीवन को साहित्य और संस्कृति से जोड़े रखती है। आगाज़ से आखिरी पन्ने तक हर लेख, कथा, लघुकथा व काव्यरस का कलश फिर से पढ़ने की प्यास को बनाए रखने में मददगार बनता है। सफल संपादन के लिए आपको व समस्त टीम को मेरी ओर से बहुत बहुत बधाई एवं शुभकामनाएँ।

-देवी नागरानी, न्यूयॉर्क, अमेरिका

दुल्हन-सी सजी हुई पत्रिका

‘हिन्दी चेतना’ का अप्रैल २०१४ अंक प्राप्त हुआ। नई नवेली दुल्हन-सी सजी हुई पत्रिका देख कर अच्छा लगा। आपने उसका घूँघट उठने ही नहीं दिया, पहले ही सम्मानों की घोषणा कर दी। मज़ा तो तब आता जब पत्रिका खुलती तो सम्मानों की घोषणा नज़र आती। ख़ैर बहुत-बहुत बधाई। मैं तो उस दिन की प्रतीक्षा कर रहा हूँ; जिस दिन ऑन लाइन पत्रिका की साज-सज्जा मुद्रित पत्रिका में दिखाई देगी यानी पूरी की पूरी रंगीन। सामग्री का स्तर दिन-ब-दिन बढ़ता जा रहा है। हिन्दी चेतना पढ़ते हुए अब महसूस होता है कि मैं स्तरीय पत्रिका पढ़ रहा हूँ। पहलौटी किरण की कहानी ल्युमिनिता और नव अंकुर में गीता घिलोरिया की कविताएँ पसंद आईं। कहानी पापा का फेसबुक अकाउंट नयापन लिए हुए है। लघुकथा जानवर अच्छी लगी। कहानी भीतर कहानी में सुशील सिद्धार्थ ने जिस तरह ‘बेघर सच’ कहानी का सच अनावृत्त किया है, पाठक बिना पढ़े ही कहानी के मर्म तक पहुँच

जाता है। पुष्पिता अवस्थी और दीपक मशाल की कविताएँ मन भायीं। अमर नदीम की गज़लें भी बहुत पसन्द आईं आखिरी पन्ना मैं सबसे पहले पढ़ता हूँ। सुधा जी की कहानियों में जो तेवर होते हैं, वे आखिरी पन्ने पर आने अभी बाकी हैं। विविधता अपने आप में सम्पूर्णता होती है और हिन्दी चेतना के पास वह है।

-अनूप बत्रा, टेक्सास, अमेरिका

कहानियाँ उद्देश्यपरक

मैं एक पाठिका हूँ और पुस्तकें पढ़ना मेरा शौक है। दिल करता है कि लेखकों, कवियों को मिलूँ और धन्यवाद दूँ। यथार्थ को जीवन में उतारने की उनकी सूझ-बूझ को दाद देती हूँ। मन करता है कि उनका लिखा सब कुछ घोट कर पी जाऊँ। सबको समझाऊँ यह कितना अच्छा लिखा है, पढ़ा पर कुछ कह नहीं पाती और लिख भी नहीं पाती। भाव भीतर ही सिमटे रहते हैं। अभी तो मैं केवल त्रैमासिक पत्रिका ‘हिन्दी चेतना’ के बारे में ही अपने उद्गार व्यक्त कर रही हूँ। कैनेडा से प्रकाशित होने वाली पत्रिका लगभग सोलह वर्षों से छप रही है और करीब सभी अंक मेरे पास हैं। इसकी प्रतिदिन की उन्नति देखी है और इसे लगातार पढ़ रही हूँ। हिन्दी चेतना का अप्रैल अंक बहुत ही अच्छा है, शुरु से अंत तक बाँध लिया। यह जानकार प्रसन्नता हुई कि यह पत्रिका भारत से भी छप रही है। इसकी सभी कहानियाँ बहुत अच्छी हैं, कई छुपे सन्देश देती हैं। मुझे एक बात की खुशी है कि हिन्दी चेतना की कहानियाँ उद्देश्यपरक होती हैं। यह नहीं होता कि लेखक ने बस शब्दों की जुगाली कर दी या अपनी बौद्धिकता झाड़ दी। हम जैसे पाठकों को कठिनाई होती है; जो प्रेमचंद, शरत्चन्द्र, विमल मित्र का साहित्य पढ़कर बड़े हुए हैं। प्रतिभा सक्सेना की कर्ज कहानी से प्रेरणा मिली। विधवा औरत ने फिर से पढ़ाई शुरू की। कहानी पापा का फेसबुक अकाउंट भी अच्छी लगी। मृत्यु के उपरांत भी फेसबुक से सबकुछ ठीक-ठाक चलता रहा व बेटे की शादी भी उसी अकाउंट से तय हुई। अन्य सब आर्टिकल, गज़लें, स्तंभ और कविताएँ भी अच्छी लगीं।

-मालती सत्संगी, शार्लट, अमेरिका

सभी अंकों में बेहतरीन

सामग्री का चयन इस वर्ष की हिन्दी चेतना के सभी अंकों में बेहतरीन। अप्रैल अंक में कहानियाँ बहुत अच्छी हैं पर पापा का फेसबुक अकाउंट में मुख्य पात्र का द्वितीय से प्रथम पुरुष में बदलाव कुछ अटपटा लगा हालाँकि कहानी अच्छी है। मीरा गोयल का संस्मरण कुछ तैरती यादें अधूरा लगा, कहीं कुछ कमी रह गई। कविता वाचकनवी का इंटरव्यू छोटा लगा, कुछ और प्रश्न पूछने थे। डॉ. विशाला का अमर फिल्म तीसरी कसम पर लेख रुचिकर लगा। ओरियानी के नीचे स्तंभ से मैं अभी जुड़ नहीं पाया, लेखिका क्या कहना चाहती है, स्पष्ट नहीं होता। सुशील सिद्धार्थ की लेखनी से तो मैं पहले से ही परिचित हूँ। साधना अग्रवाल को भी पढ़ता रहता हूँ। ढींगरा फ़ेमिली फ़ाउण्डेशन और हिन्दी चेतना ने सम्मान शुरू किए हैं, बधाई एवं शुभकामनाएँ! यह एक ऐसा कार्य है; जिसकी विदेशों में बहुत ज़रूरत थी। साहित्यकारों का अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सम्मानित होना साहित्य जगत् की एक बड़ी उपलब्धि है।

-पवन जैन, कोटा, राजस्थान, भारत

कहानियाँ बहुत प्रभावी और हृदय स्पर्शी

‘हिन्दी चेतना’ के जनवरी अंक में सम्पादकीय हमेशा की तरह चेताने वाला है। कहानियाँ बहुत प्रभावी और हृदयस्पर्शी हैं। विशेष रूप से उषा देवी कोल्हटकर की ‘पीला रंग आशा का’ और रचना त्यागी आभा की कहानी ‘दिलासों की छाँव में’ बहुत अच्छी लगी। आप को और आप के सहयोगियों को हार्दिक बधाई और साधुवाद।

शुभ कामनाओं सहित,

-गजेश, मस्कट

सम्भावनाओं के प्रति आश्चस्त

सुधा ओम ढींगरा जी द्वारा लिया गया कविता वाचकनवी जी का साक्षात्कार पढ़ कर लगा कि वे एक नैसर्गिक लेखिका और कवयित्री हैं। उनकी उपलब्धियों से मन प्रसन्न हुआ और उनकी सम्भावनाओं के प्रति आश्चस्त हूँ। मेरी शुभकामनाएँ।

-एस पी सुधेश



नई दिल्ली की रीता कश्यप का लक्ष्य कलम के माध्यम से समाज को नई दिशा तथा नई सोच देना है। आकाशवाणी में ३० वर्षों तक कार्यरत रह स्वैच्छिक सेवानिवृत्त। रीता जी के 'विवश', 'जड़ों की तलाश में' कहानी संग्रह हैं और 'मेरी तौबा' हास्य व्यंग्य संग्रह तथा 'नियति' उपन्यास है। लगभग २०० कहानियाँ, लघुकथाएँ, व्यंग्य, लेख आदि प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित एवं पुरस्कृत।

सम्पर्क-बी ३०२, सागर सदन,
११३ आई.पी.एक्सटेंशन (पटपड़ गंज) दिल्ली
११००९२
ritakashyap@gmail.com
दूरभाष-९९५८६२२९९२

उस दिन वर्षों बाद मैं इतनी गहरी नींद में सोया कि मुझे सुबह होने का पता ही नहीं लगा। मन में असीम शान्ति थी और तन एकदम तरोताजा महसूस हो रहा था। मुँह से चादर उतारी तो आँखें विस्मय से फटी की फटी रह गई और मुँह खुला का खुला। देखता क्या हूँ-मेरे आसपास सभी अपने जमा हैं। बेटे-बहुएँ, पोते-पोतियाँ और कुछ पड़ोसी तथा दोस्त भी। सभी चुप थे और दुःखी नजर आ रहे थे। मुझे लगा मैं सपना देख रहा हूँ। एक सुखद सपना जिस में मेरे अपने मेरे पास मेरे सपने में आए हुए हैं; लेकिन उनमें मेरी पत्नी भागो, भाग्यश्री नहीं थी। इतनी नाराज़ हो गई है मुझ से? जीवन से क्या गई, सपनों में भी आकर नहीं मिलती। यह सपना टूटना नहीं चाहिए। पुनः चादर ओढ़कर लेट जाऊँ, शायद वह भी आ जाए। यही सोचकर मैंने चादर मुँह पर खींचनी ही चाही कि मेरे आसपास बैठे लोगों में शोर सा मुखर हो गया। हर कोई मुझे पुकार उठा। घर में एकाएक उठे हंगामे से मुझे यकीन हो गया था कि यह कोई सपना नहीं है। इससे पहले कि मैं कुछ पूछता- 'मैं यहाँ ऐसे कैसे जमीन पर बिछी एक दरी पर सफ़ेद चादर ओढ़कर पड़ा हुआ हूँ। रात तो मैं अपने कमरे में अपने पलंग पर सोया था। यहाँ कैसे पहुँचा?' सभी एक स्वर में चिल्ला उठे- 'आप ज़िन्दा हैं?'

मुझे समझते देर नहीं लगी कि मैं मौत की नींद से जागा था। सामने दीवार घड़ी पर नजर पड़ी, तो सुबह के साढ़े ग्यारह का समय था। सुबह के पाँच बजे उठने वाला मैं अब तक मौत की सुखद नींद ले रहा था। ये सब मेरी अन्तिम विदाई के लिए जुटे थे; जो अगले ही पल एक दूसरे के साथ फुसफुसाते हुए कमरे से बाहर जाने शुरू हो गए। पड़ोसियों के जाते ही बहुएँ भी उठकर चली गईं और अपने अपने काम में लग गईं, बेटे भी उठकर बाहर चले गए। उनके चेहरे पहले से कहीं ज्यादा गम्भीर हो गए थे। उनके चेहरों पर बाप के ज़िन्दा होने की खुशी कहीं दिखाई नहीं दे रही थी। शायद मैंने

ज़िन्दा होकर उनकी उम्मीदों पर पानी फेर दिया था। वे बाहर जाकर फ़ोन पर शेष दोस्तों, रिश्तेदारों को आने से मना करने की खबर देने में जुट गए थे।

जो सवाल अब तक मुझसे किसी ने नहीं किया था, वह पोते पोतियों ने मुझसे पूछा। सभी एक साथ मेरे गले से लिपट कर पूछ रहे थे- 'दादाजी, आपको क्या हो गया था? सभी कह रहे थे- आप मर... नहीं- नहीं भगवान् जी के पास चले गए हैं। आपने देखा भगवान् जी को? कैसे दिखते हैं?' मुझे उनके प्रश्नों के उत्तर देने की ज़रूरत ही नहीं पड़ी। वे चारों आपस में ही उलझ गए थे। एक बोला- 'तुझे नहीं पता भगवान् जी कैसे दिखते हैं?' दूसरे ने समझाया- 'ठीक वैसे ही तो हैं, जैसे हम मन्दिर में उनकी मूर्तियाँ देखते हैं।' तीसरे ने उसे झुठलाते हुए कहा- 'बुद्धू भगवान् दिखाई नहीं देते, वे बस सब जगह होते हैं।' चौथा उसका मज़ाक उड़ाते हुए बोला- 'जो चीज़ दिखाई नहीं देती, मतलब वह चीज़ होती ही नहीं है। इसका मतलब भगवान् होते ही नहीं हैं।'

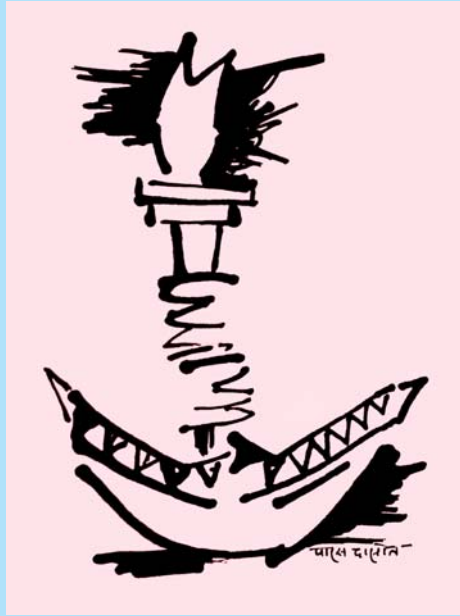
मैं बच्चों की इस लम्बी खिंचती बहस में भाग लेने के मूड में नहीं था; इसलिए मुझे उन्हें बाहर भेजना पड़ गया। अब मैं कमरे में अकेला ज़मीन पर बिछी दरी पर बैठा था। मेरे मरने की खबर पाकर इतने जुट गए थे, ज़िन्दा के लिए किसी के पास दो पल भी नहीं थे। मेरे एक दो हमउम्र पड़ोसी लौटने से पहले ठिठके भी थे, शायद मुझसे कुछ पूछना या कहना चाहते थे; लेकिन मेरे अपनों का रवैया देखकर वे भी रुके नहीं, लौट गए। हो सकता है उन्हें अपने ज़रूरी काम ही याद आ गए हों। आज की इस भागदौड़ भरी ज़िन्दगी में यूँ अचानक समय निकालना कितना कठिन होता है, हम सभी जानते हैं।

रिटायरमेंट के बाद अपने ख़ालीपन को मैंने किताबों से भरना शुरू कर दिया था। ऐसे में मेरे हाथ नियर डेथ एक्सपीरियंस के बारे में कुछ ऐसा

पढ़ने को लगा; जिसने मेरी उत्सुकता और बढ़ा दी। मैं अक्सर कल्पनाओं में खोया रहने लगा। इसके पीछे की सच्चाई जानने की इच्छा बलवती होने लगी थी। चार साल पहले जब भाग्यश्री का देहान्त हुआ था, तब उसे चिता पर लियाने तक मैं इस आशा से उसपर टकटकी लगाए था कि शायद वह उठकर बैठ जाए। भले ही मौत के मुँह से लौटने वाले लाखों-करोड़ों में से एक दो ही होते हैं, लेकिन होते तो हैं। वह खुशकिस्मत मेरी भागी भी तो हो सकती थी। तब मैं उससे पूछता कि उसने कैसा अनुभव किया, उसने क्या देखा? साथ ही मैं उसके बिना बुढ़ापा काटने की त्रासदी से भी बच जाता।

भाग्यश्री के साथ तो ऐसा न हुआ; लेकिन मैं क्या जानता था कि ईश्वर मुझे ही यह सौभाग्य देने की सोचे बैठे हैं। लेकिन इस माहौल में मैं अपनी गहरी नींद के रहस्य को याद ही नहीं कर पा रहा था। मैंने अपनी हथेलियाँ रगड़कर अपनी आँखों पर रख लीं और ध्यान की मुद्रा में बैठकर उस रहस्य के बारे में सोचने की कोशिश करने लगा। तभी बड़े बेटे का स्वर कानों में पड़ा-‘अब घर के बड़े-बूढ़े भी इस तरह से मजाक करने लगें, तो कहना ही क्या? बच्चों को भी मात कर दिया पापा ने तो। सुबह से सब को दुखद समाचार का फ़ोन करने में लगा हूँ और अब एक-एक को फ़ोन करके पूरी कहानी सुनाओ और आने से मना करो। कितने लोग तो रास्ते में हैं बस पहुँचते ही होंगे।’ उसकी पत्नी ने उसकी खीज में अपनी खीज मिलाते हुए कहा-‘तुम्हें तो फ़ोन ही करने हैं। हमारी सोचो, जिनका बिना बात आने वालों की रेटियाँ पकाते दिन निकल जाएगी।’

मझला बेटा तुनक उठा ‘क्या तमाशा है? बच्चे स्कूल नहीं गए। हम ऑफिस नहीं जा पाए। मेरी सोचो आज ग्यारह बजे मेरी क्लाइंट के साथ इतनी ज़रूरी मीटिंग थी; जिसमें मैंने नए प्रोजेक्ट का डैमो देना था। दो घंटे पहले मैं ऑफिस में खबर करता हूँ कि मेरा बाप मर गया है, इसलिए मीटिंग पोस्टपोन कर दो। पता नहीं सब कैसे मैंनेज किया होगा। अब जब उन्हें पता लगेगा कि मेरा बाप तो जिंदा है, तो क्या सोचेंगे सब मेरे बारे में, यही न कि डैमो से बचने के लिए मैंने इतना घटिया बहाना बनाया। मुझे तो डर है कहीं मेरी नौकरी ही न..।’ कहते हुए मुझसे नज़रें मिलते ही वह खामोश हो गया। उसके चेहरे पर बाप के मरने के दुःख की अपेक्षा नौकरी



जाने का दुःख ज़्यादा गहरा गया था। मुझे भी उसे इस स्थिति में पहुँचाने का दुःख था; लेकिन जो कुछ भी हुआ उस में मेरा क्या दोष था। हाँ, इतना ज़रूर है कि अपने इस बेटे को मैं इतना नहीं कह पाया कि मैं जीवित हूँ, तो क्या मेरा अन्तिम संस्कार कर तुम अपने ऑफिस में अपनी पोजीशन ठीक कर लो। कैसे भी अपनी नौकरी बचा लो। बस एक छोटा बेटा परेशान-सा अन्दर बाहर चक्कर काट रहा था। चलो किसी को तो बाप से प्यार है यही सोच कर मैं खुश था; हालाँकि वह भी कॉलेज नहीं जा पाया था। उसकी भी पढ़ाई का नुकसान तो हुआ ही था।

ऐसे माहौल में भला कोई क्या सोच सकता था। अतः मैंने हार मानकर जब अपनी आँखें खोलीं तो अपने सामने बहुत से अपनों को अचम्भित खड़े पाया। उन सब की परेशानी और हैरानी उचित भी थी। आज तक उन्होंने कभी किसी मुर्दे को ज़मीन पर बैठे नहीं देखा था। मेरे पुकारते ही उनकी खुशी का ठिकाना नहीं रहा। उन्हें हुई परेशानी के लिए मेरे माफ़ी माँगने पर उनका कहना था कि मेरे जीवन के सामने उनकी यह परेशानी कोई मायने नहीं रखती। वे खुश थे कि उन्हें जैसी खबर मिली थी और जो वे सोचते हुए आए थे, वह सब उन्हें देखने को नहीं मिला था। उन सब की बातें सुनकर मैं खुशी-खुशी उठा और सब मेहमानों से गले मिलने लगा। हर अपने के आलिंगन का अनुभव अलग था। कोई बड़ी गर्मजोशी से मिला, कोई बस यूँ ही औपचाकितता से। कोई खुशी जतलाते हुए मिला,

तो कोई उपहास करता हुआ-सा लगा। मेरे कई वर्षों पुराने भरम तोड़ गया यह मिलन।

तभी मुझे अपनी बहुओं की परेशानी का ख्याल आया। ठीक ही कह रही थी बड़ी बहू कि बैठे बिठाए इतने लोगों का खाना बनाने की आफ़त उनके सिर आ पड़ी थी। इन बिचारियों को तो रोज़ अपने ही परिवार का खाना बनाना भी भारी पड़ता है। मैंने तुरन्त अपने भानजे को पास बुलाकर उसे रुपये देते हुए कहा कि वह फ़ौरन पहले कुछ चाय-नाश्ते का और बाद में पास के किसी होटल या ढाबे से सब के खाने का इंतज़ाम करे। सुनते ही कुछ ने इसके लिए मना भी किया; लेकिन मैंने हँसते हुए कहा खाना तो आप सबको वैसे भी यहीं खाना था। अब दुःख में नहीं खुशी में खाते हैं। मैं मरने से बच गया और आप सब इतनी ठंड में मुझे फूँककर नहाने से। इतना सुनते ही एक ठहाका पूरे वातावरण में गूँज गया।

मेरी दोनों बहनों ने आगे बढ़कर मेरे मुँह पर हाथ रखते हुए डाँट-‘खबरदार जो फिर कभी ऐसी बात की। मरें तेरे दुश्मन। हमारी राखी के धागे इतने कमजोर नहीं। भगवान ने हमारी सुन ली।’ बड़ी दीदी ने अपने बेटे को आज्ञा दी कि वह मेरे पैसे वापिस कर दे। आज पार्टी उनकी तरफ़ से होगी। इसी बात पर खुश होकर मैंने कुछ और नोट निकाल कर छोटे भानजे को भी दिए और उसकी पीठ थपथपाते हुए कहा-‘जल्दी जाओ दोनों मिलकर सब के खाने-पीने का अच्छा सा इंतज़ाम कर दो।’

अन्दर छोटी बहू, बड़ी से व्यंग्य भरे स्वर में बोली-‘देखा पापाजी को, इस उम्र में भी जीने की कितनी लालसा है। वैसे तो कभी जेब से धेला न निकालें; लेकिन अपने दोबारा ज़िन्दा होने की खुशी में कैसे जोरदार पार्टी हो रही है।’

बड़ी बहू ने भी हामी भरी-‘देखो तो कैसी किस्मत लिखवाकर लाए हैं हमारी छाती पर मूँग दलने के लिए। एक हमारे माँ-बाप हैं-एक बार मरे तो मर ही गए। दोबारा ज़िन्दा होने का कोई चांस ही नहीं।’

इन दोनों की बातें घर आए महमानों ने ज़रूर सुन ली होंगी। सच कहूँ तो उन्हें सुनाने के लिए ही वे ऐसी बातें कर रही थी। मुझे बहुत बुरा लग रहा था। यह सब कहने के लिए लोगों के जाने का इंतज़ार तो कर ही सकती थीं। दुःख मुझे अपने

लिए नहीं; बल्कि उन दोनों के लिए ही हो रहा था। आज तक अपनी बहुओं के व्यवहार पर जो पर्दा मैंने डाल रखा था, वह आज उन्होंने उठा दिया था। मुझे लगा मैं पुनः ज़िंदा तो भले ही हो गया हूँ लेकिन सब अपनों के सामने नंगा हो गया हूँ। इससे तो अच्छा था मैं मर ही जाता कम से कम बहू बेटे इसे मेरा अन्तिम कार्य समझ कर जैसे-तैसे खुशी-खुशी सम्पन्न कर देते।

जल्दी ही लोगों के आने का सिलसिला शुरू हो गया। लोग आते रहे। खाना-पीना चलता रहा। कुछ अपनों को तो मेरे पुनः जीवित होने का समाचार भी मिल गया था। वे फिर भी आए मुझसे मिलने। मुझे मुबारकबाद देने। मुझसे बहुत कुछ जानने। बहुत कुछ पूछने। शाम होते-होते मेरा एक और भ्रम भी टूट गया। छोटा बेटा घण्टों फ़ोन पर अपनी महिला दोस्त को निरन्तर सुबह मिलने न आ पाने की सफाई देते मिला। उस दिन वह शायद उसी से बात करने के लिए एकान्त की तलाश में परेशान-सा अन्दर-बाहर चक्कर काट रहा था और मैं मूर्ख इसे उसका अपने प्रति प्यार समझ कर खुश हो रहा था।

रात को अपने कमरे में अकेले बैठ कर मैं फूट-फूटकर रोया। माँ बताया करती थी कि जब मैं पैदा हुआ था; तब हमारे संयुक्त परिवार में बहुत खुशियाँ मनाई गई थीं। दादाजी ने तब पूरी गली में लड्डू बाँटवाए थे। मेरी पहली लोहड़ी बड़ी धूमधाम से मनाई गई थी। पिताजी ने मेरा मुंडन सपरिवार वैष्णों देवी जाकर कराया था। मेरे स्कूल में दाखिले के दिन पूरे स्कूल के बच्चों में बताशे बाँटे गए थे और आज मेरे पुनः जीवित हो जाने पर मेरी अपनी ही औलाद कितनी परेशान है! कितनी दुःखी है! जब-तब उनकी जली-कटी बातें ही कानों में पड़ रही हैं।

भाग्य तो देखिए, न खुदा ही मिला; न विसाल-ए-सनम, न यहाँ के रहे, न वहाँ के रहे। मैंने तो अब तक नियर डैथ एक्सपीरियंस के बारे में जो कुछ पढ़ा है, वैसा कोई अनुभव भी मुझे नहीं हुआ। इतनी गहरी मौत की नींद में मुझे न कोई तेज़ प्रकाश नज़र आया, न कोई यमदूत, न चित्रगुप्त, न स्वर्ग, न नरक और न भगवान् ही दिखाई दिए।

अगली सुबह हमेशा की तरह पाँच बजे उठकर जब मैं योगाभ्यास के लिए छत पर गया तो सब

देखकर सन्न रह गया। वहाँ मेरी अन्तिम विदाई का सारा सामान यानी मेरी अर्थी, कफ़न, कोरा मटका, दुशाला आदि-आदि सब सहेज कर रखा हुआ था। यह सब न वापिस ही किया गया था, न फेंका ही गया था। मैं समझ नहीं पा रहा दोष किस को दूँ, अपनी परवरिश को, नई पीढ़ी को, आज की हवा को या अपने भाग्य को?

मेरा यह कैसा नियर डैथ एक्सपीरियंस है? इतना दुःखद, इतना भयावह। पहले पता होता तो मैं कभी इसकी कामना ही न करता। काश मैं उस दिन चुपचाप काल के गाल में समा जाता और जब पुनः मेरी आँख खुलती, तो मैं अपनी औलाद के पास नहीं बल्कि नए चोले में अपने नए माँ-बाप की गोद में होता; जो मुझे पाकर फूले न समाते। मेरे शगुन मनाते, मेरे सदके जाते, हर दिन मेरी नज़र उतारते, मेरी बलाएँ लेते और मुझे दुआएँ देते नहीं थकते।

लेकिन अब क्या, अब तो छत पर पड़ा अर्थी का समान और हर अपने की नज़र एक सवाल पूछती लगती है, तुम कब मरोगे ?



UNITED OPTICAL

WE SPECIALIZE IN CONTACT LENS

- Eye Exams
- Designer 's Frames
- Contact Lenses
- Sunglasses
- Most Insurance Plan Accepted

Call : Raj
416-222-6002

Hours of Operation

Monday - Friday - 10.00 a.m. to 7.00 p.m.

Saturday - 10.00 a.m. to 5.00 p.m.

6351 Young Street, Toronto, M2M 3x7 (2 Blocks South of Steeles)



Beacon Signs

1985 Inc.

7040 Torbram Rd. Unit # 4, Mississauga, ONT.L4T3Z4

Specializing In :

ILLUMINATED SIGNS AWNINGS & PYLONS
CHANNEL & NEON LETTERS

Banners
Silk Screen

Architectural Signs
Vehicle Graphics
Engraving

Design Services

Precision CNC Cutout Letters
(Plastic, Wood, Metal & Logos)
Large Format Full Colour Imaging System
Sales - Service - Rentals

Manjit Dubey

दुबे परिवार की ओर से हिन्दी चेतना को बहुत बहुत शुभकामनायें

Tel: (905) 678-2859

Fax : (905) 678-1271

Email: beaconsigns@bellnet.ca



‘कहीं कुछ और’, ‘किशोरी का आसमाँ’, ‘एक न एक दिन’, ‘कुल जमा बीस’, ‘ये आम रास्ता नहीं’, उपन्यासकार, कथाकार रजनी गुप्त के उपन्यास हैं और ‘एक नई सुबह’, ‘हाट बाज़ार’ कहानी संग्रह हैं। ‘आज़ाद औरत कितनी आज़ाद’, ‘मुस्कुराती औरतें’, ‘आखिर क्यों लिखती हैं स्त्रियाँ’, ‘चिरगाँव’, ‘झाँसी’, रजनी गुप्त की सम्पादित पुस्तकें हैं। युवा लेखन सर्जना पुरस्कार, आर्यस्मृति साहित्य सम्मान, किशोरी का आसमाँ पर अमृत लाल नागर पुरस्कार प्राप्त रजनी गुप्त UCO BANK में मैनेजर हैं।

सम्पर्क- ५/ २५९, विपुलखंड गोमतीनगर, लखनऊ। दूरभाष-०९४५२२९५९४३

रात भर अपने अंदरूनी शोरगुल से जूझती, थरथराती, काँपती लौ की तरह चंचल चित्त से अचानक आए धूप, धूल और धुँ से भरे तेज अंधड़ का मुकाबला करती खुली आँखों से रात काटती रही नेहा। यूँ तो उसे कई अनाम किस्मत की छोटी मोटी नौकरियाँ करने का खूब तजुर्बा है तभी तो वह बखूबी ताड़ जाती, इन लार टपकाते पुरुषों की चालें, कुचालें या नेक इरादों के पीछे चलने वाले धिनौने खेल से, जो दरअसल शुरू होता है समुंदर की तरह उछाल मारती लहरों की तरह तारीफ़ करके पहले लड़की को बहला फुसलाकर येन केन प्रकारेण अपने पास खींचने की साजिशों से। पीछे मुड़कर देखने पर वह मन ही मन इस तरह के मनचले लड़कों की फेहरिस्त तैयार करती फिर अगले ही पल डिलीट मार देती। काश कि जेहन से भी वह उन्हें स्थायी रूप से डिलीट कर पाती; बल्कि ठीक इसके उल्टा होता, यानी जैसे ही वह एक सिर काटती, फिर से महिषासुर की तरह एक नया सिर उगने लगता।

उम्र तो ठीक-ठीक याद नहीं मगर वो वाकया वह कभी नहीं भूल पाती, जब पड़ोस का मुन्ना चाचा उसे अपनी गोदी में उठाकर अपने घर की तरफ तेज-तेज कदमों से बड़ी लाड़-दुलार-भरी मीठी-मीठी बातों की चाशनी में लपेटे लिये जा रहा था और वहाँ पहुँचकर धम्म से तख्ती पर बिठाते हुए अचानक से उसकी फ्रॉक ऊपर उठाने लगा, तो वह ज़ोर से चिल्ला पड़ी- मुन्ना भैया, ये क्या कर रहे हो ? कहते हुए उसने ज़ोर से उनकी कलाई पर अपने दाँत गड़ा दिए थे, सो उसका मुँह बंद करने की खातिर वह किचन में रखे फ्रिज से टॉफी चाकलेट निकालने जैसे ही भीतर गया और वह फटाफट चुपके से बिल्ली की तरह पंजे दबा बड़े-बड़े उग भरती उसके चंगुल से बाहर दो कदम की दूरी पर

बने अपने घर की तरफ बेतहाशा भाग पड़ी। ये बात वह कैसे बताए या न बताए, अभी वह इसी दुविधा में ही थी, तभी बड़ी बहन अपनी नई खरीदी साइकिल दिखाने उसे खींच बाहर ले गई। कुछ अनजाना-सा डर, तो कुछ संकोच तो कुछ घबड़ाहट कि ये थी तो गंदी बात, सो किसी को बताने पर उसे डाँट न खानी पड़ जाए फिर कितनी मार पड़ेगी . . . सोचकर दम साधे चुप बनी रही और साल दर साल निकलते गए। नेहा, नेहा, तू हर बार क्या इसी तरह चुप्पी साधे रहेगी ? माटी की मूरत में तब्दील क्यों कर होती जाती तू . . . कुछ तो बककर, बोल न ? ऐन मौके पर कहाँ खो जाती तेरी चेतना ? खुद से सवाल जवाब करती वह बगल में सोए अपने पति विभोर से कैसे बताए आज घटे वाकये को ? इतनी नामी कम्पनी के विज्ञापन ग्रुप का एडीटर विभोर क्या यह सब बर्दाश्त कर पाएगा ? सुनकर कहीं वह उल्टे उसी पर तोहमत नहीं लगाने लगेगा ? अक्सर वह टीवी या अखबारों में ऐसी घटनाओं को सुनकर कितना तेज रिएक्ट करने लगता। ये सब सुनकर पता नहीं उस पर क्या बीते ? कहीं वह भी . . . मुझे गलत न समझ ले, आँखें मूँदते ही नेहा के सामने डर, खौफ, थरथराहट और घबड़ाहट का बगूला उठा, फिर उसकी हरकतें याद कर एक अजीब किस्म का कसैला ज़हरीला-सा स्वाद देह में रेंगने लगा। जैसे ही वह आँखें मूँदती, उस छहफुटिया साँवले, क्लीनशेव्ड, शालीनता का मुखौटा ओढ़े, कायदे से नीति-मर्यादा व सकारात्मक सोच की घुट्टी पिलाने वाले शातिर किस्मी की चालें चलने वाले नरोत्तमदास के चेहरे पर चढ़ी बदरूप परतें याद आने लगीं। इस आदमी के कितने चेहरे हैं, ओफ़फ़ ! उसके मुँह से निकली वे ध्वनियाँ प्रतिध्वनियाँ रह रहकर अंतस् में गूँजने लगीं।

मँझोले कद काठी की, दिखने में सामान्य और

अपने प्रति खासी लापरवाह खादी की कुर्ती व जैकेट पहने नेहा अपने काम के प्रति खूब जुनूनी थी। बेशक उसका काम बोलता था, सो दफ्तर में चाहे डाटा फीड कराना हो या प्रशासनिक महकमे से जुड़े काम हों, बॉस से आते-जाते नमस्कार के सिवाय ज्यादा बात करने की ज़रूरत कभी नहीं पड़ी, न ऐसा करने की दिलचस्पी? ही थी उसके अंदर। एकाध दो मौकों पर ज़रूरत भर की कामकाजी बातों के अलावा कोई ज़्यादा सरोकार उसका रहा नहीं कभी। चूँकि उसकी पी.ए. मेहा मैटरनिटी लीव के लम्बे अवकाश पर थी, इस नाते पिछले दो सप्ताह से उसे वहाँ देर तक बैठने को कहा गया। उससे कहा गया-बस, ईमेल चेक करना और कॉल अटेंड करना है-इसके अलावा कुछ नहीं। इतना भर मेहा ने उसे समझाया था और वह चुपचाप मान गई थी।

‘हाय नेहा, हाउ आर यू?’

‘फाइन, थैंक्स’

‘लुकिंग स्मार्ट . . .’ जैसे अल्फाज का जवाब न पाकर वह गर्दन नवाए काम में डूबा रहता। वैसे वो कितना रसिक मिजाज है, या कितनी औरतों से उसके क्या सम्बन्ध हैं, इन बातों की जानने की न उसे दिलचस्पी थी, न किसी पचड़े में पड़ना उसे पसंद था। मगर फिर भी आज जिस तरह उसने उसे अपने केबिन में बुलाया और जिस तरीके से वो अतिरिक्त रस घोलते हुए आत्मीय निजी बातें पूछ रहा था-नेहा, प्लीज, कम इन, एक कॉफी पिलाओगी? घर में और कौन-कौन है, पति की तनख्वाह कैसी क्या है? बेटा किस क्लास में है? जैसे ही उसने कॉफी पकड़ाई, वह जानबूझकर उसकी हथेली को छूने लगा; जिसे नजरअंदाज न करते हुए वह बोल पड़ी-‘सर, लीजिए पर फिर कभी कॉफी नहीं बना पाऊँगी मैं . . . दिस इज नॉट द पार्ट ऑफ माई ड्यूटी...’

‘अरे, तुम भी कॉफी पिओ न, साथ नहीं दोगी क्या....?’

दो टूक लहजे में-‘नो, थैंक्स....’-कहकर बिना उसकी बात कायदे से सुने वह फुर्र से बाहर निकल पाई।

मटमैली शाम घिर आई पर उसकी सुप्त म्लान चेतना अभी भी जाग रही थी। अगर कल भी इसने यही सब किया तो कुछ न कुछ युक्ति सोचनी पड़ेगी कुछ सोचकर मन ही मन प्लान बनाती वह

घर आकर अपने काम में जुट गई।

अगले दिन यथावत् वह अपने रूटीन काम निबटाती रही। ऐन ५ बजते ही उसने फिर उसे अपने केबिन में बुलाया-‘नेहा, कम हियर....कम ऑन प्लीज..’

‘जस्ट ए मिनट...’ कहते हुए वह कुछ सोचते पूरी एहतियात बरतते हुए कुछ इस भाव से अंदर आई जैसे कि शेर की माँद में घुसने से ठीक पहले नन्हे जानवर को कोई युक्ति सूझ आई हो, सो वह अपने बुद्धि-कौशल के भरोसे खरामा-खरामा पूरे भरोसे से कदम बढ़ाने लगी। नेहा को देखते ही उसके मन में फिर वही भावना जग जाती और फिर बिना किसी भूमिका के उसने बोलना शुरू कर दिया-‘मुझसे हाथ तो मिला लिया करो, मेरी जान....’

‘क्या सर, ये सब क्या बकवासबाजी कर रहे हैं आप?’ कहने के साथ जैसे ही वह पलटने को हुई कि उसने किसी चतुर शिकारी की तरह उसे जद में लेने के लिए अपनी दायीं हथेली से पहले तो उसका मुँह बंद किया, फिर बायीं हथेली से उसका हाथ पकड़ अपने.... मिमियाने-घिघियाने का राग अलापना शुरू कर दिया-‘नेहा प्लीज, प्लीज, नेहा, प्लीज, तुम मुझे इस हालत में छोड़कर कैसे जा सकती हो माई स्वीटहर्ट? प्लीज होल्ड मी, प्लीज, प्लीज होल्ड मी..’ दर्जनों बार उच्चरित उसके मरियल से शब्द, कामुक हाव-भाव व लिजलिजी हरकतों के बीच फँसे बोल ऐसे लग रहे थे जैसे गर्म कड़ाही में अचानक पड़ी पानी की बूँदों की तरह छल-छल करता तेल सीधे उसके चेहरे को झुलसाने लगा हो।

‘नो, आई कांट....’ अचानक चीते-सी फुर्ती से नेहा ने पैंतरा बदला और चंद मिनट बेवजह केटली में खौलते पानी से कॉफी बनाने का नाटक करने लगी। जैसे ही उसने उसे कॉफी पकड़ाई कि उसने झटपट फिर से उसकी कलाई पकड़ ली। जिसे पूरी ताकत से छुड़ाते हुए उसने सामने रखी केटली को ही पूरी ताकत से उसके सिर पर दे फेंका और जब तक कि वह सँभल पाता, वह तेज कदमों से बड़े-बड़े डग भरती बाहर निकल खुले आसमान में लंबी-लंबी साँस भरने लगी।

अब उसे क्या करना होगा, विभोर से कहूँ तो वह कहाँ तक क्या-क्या सोच सकता है। अचानक उसके दिमाग में दर्जनों अखबारों और टीवी चैनलों की हैडलाइनें और अंधाधुंध होती बेसिर-पैर की

बहसों की सीरीज़ याद आने लगी, एक एक करके सारे सीन तेजी से रिवाइंड होने लगे-इतने नामी समूह के ६० साल का मालिक अपनी सहकर्मी संग यौन दुराचार में लिप्त.....

उसे लगा जैसे उसके पति के पास सुबह से दर्जनों फ़ोन आ चुके हैं कि पुलिसवालों के तीखे सवालों की कटार पर चलता उसका वजूद लहूलुहान हो चुका है कि ऐसे बेसिर-पैर के तीक्ष्ण सवालों से घबराकर बेहोश हो चुकी है कि अभी तो उसका बलात्कार नहीं हुआ; मगर ऐसे माहौल में उसे विश्वास दिलाया जा रहा कि उसका सरेआम बलात्कार हो गया और इस भीड़-भरी सड़क पर चलते हुए हज़ारों लोगों की बंधती आँखों के कँटीले-नुकीले सवालों की धार पर अब और नहीं चल पाएगी वह। आखिर किस-किस के कँटीले सवालों के क्या-क्या जवाब कब तक देती रहेगी वह? उसे याद आया, पिछले साल उस लड़की के साथ भी तो ऐसा हादसा घटा था और इन्हीं झमेलों से परेशान होकर वह रिजाइन करके शहर छोड़कर कहीं दूर चली गई थी। तो क्या उसे भी भागना पड़ेगा मगर क्यों? उसका गुनाह क्या है? अनायास फिर वही आवाज़ें-प्लीज होल्ड मी, प्लीज होल्ड मी... प्लीज.... प्लीज होल्ड मी..... शब्दों की प्रतिध्वनियाँ अभी भी उसका पीछा नहीं छोड़ पा रहे थे। मन बदलाव के लिए थोड़ी देर उसने कम्प्यूटर खोला, कुछ ज़रूरी काम निबटाए और फिर से सोने की कोशिश करने लगी। अधसोयी हालत में विभोर के पूछने पर-‘जाना नहीं क्या?’ उसने लेटे-लेटे अनमने भाव से विभोर से कहा, ‘तबियत ठीक नहीं, देर से सोई। आज कहीं नहीं जा रही, तुम प्लीज ब्रेड खाकर चले जाना।’ ‘ठीक है, रिलैक्स’ शब्द उसके कानों में पड़े मगर वह वैसी ही गुड़ी-मुड़ी गठरी बनी लेटी-लेटी सोचती रही। कोई दिन ऐसा नहीं जाता, जिस दिन अखबार में ऐसे हादसों की खबर न हो तो क्या अचानक ऐसी घटनाओं की बाढ़-सी क्यों कर आ गई? लड़की के प्रति समाज का रवैया आखिर कब बदलेगा? कब तक उन्हें गुनहगार मानना बंद करेगा ये आधुनिक सभ्य समाज? आज भी अमूमन लोग लड़की को ही तरस खाई नज़रों से देखते हैं जैसे कि सारा दोष उसी का हो जबकि असली गुनहगारों को जेल में टूँसने के बजाय वे बड़े मज़े से ऐश करते ऐसे ही कारनामे की पुनरावृत्ति करने की फिराक में नए शिकार की खोज में निकल

पड़ते।

पता नहीं विभोर कब उठकर ऑफिस चला गया और वह कब तक ऐसे ही सोती रहती अगर सालों बाद अचानक मीता दी का फ़ोन न आया होता। वैसे तो कॉलेज में वह उससे ४ साल सीनियर रही हैं; मगर जहाँ भी होती, अपनी फुलऑन मस्तीभरी उल्लासपूर्ण बातों से ऐसा समाँ बाँध देतीं कि सभी मिलकर बात-बात पर हा....हा...हू....; हू करने लगते। सचमुच, हमारे बीच कभी भी उम्र का फासला पता ही नहीं चल पाया मगर आज उनकी गमगीन आवाज़ में जिस तरह की पस्ती, बेचैनी या हताशा के भाव सुनाई पड़े- 'नेहा, तुमसे एक ज़रूरी बात करनी है, बस घंटे भर में पहुँच रही हूँ, प्लीज़, आज के सारे एपाइंटमेंट कैंसिल कर दे, कैसे भी, महानगरीय जीवन शैली की तर्ज़ पर-समय नहीं है...जैसे टैग मत टैग लेना, लिंसन, तू सिक लीव ले ले, बस घंटे भर में पहुँचने वाली हूँ। रास्ते में हूँ...' और हमेशा की तरह बिना उसकी पूरी बात सुने उसने फ़ोन रख दिया।

यूँ तो मीता दी ख़ूब मस्तमौला और दिलफेंक किस्म की थीं; किंतु अपनी पढ़ाई के प्रति खासी गम्भीर, सो करियर की सीढ़ियों पर सर-सर आगे बढ़ती गई। नेहा को याद आया, बचपन से ही वे उसके प्रति किस कदर आधिपत्य भरा स्नेह भाव दर्शाती-माई लिटिल बेबी, तू न, ये सारी किताबें पढ़ जा, एक तरफ़ से पढ़ना शुरू कर और खत्म किए बिना सोना नहीं। मार्क्स, लेनिन, रूसो, गोर्की, चेखव, डॉलस्टायस और तमाम अंग्रेज़ी, हिन्दी व उर्दू साहित्यकारों की विश्वप्रसिद्ध रचनाओं से पहला पहला परिचय मीता दी ने ही कराया। वे खुद भी पढ़तीं, हमें पढ़ने देती और शाम होते ही बैडमिंटन खेलने मैदान में उसे लेकर जा पहुँचतीं। फिर तो उनके साथ वह क्रिकेट खेलना भी सीख गई। खुद नेहा के मन में मीता के प्रति लगाव था। शायद ये उनके करिश्माई व्यक्तित्व का ही जादू ही था; जो नेहा के सिर पर सवार था। मीता सालों पहले के उस सँकरे कस्बाई मानसिकता वाले परिवार में अपनी तूफ़ानी बातों से क्रान्ति का नगाड़ा बजा चुकी थी-पहले करियर, नौकरी फिर देखा जाएगा बाकी बातें। आप लोगों की पसंद के किसी फालतू आदमी संग शादी के लफड़े में कतई नहीं पड़ना मुझे। हाँ.... और देखते-देखते उन्हीं ने बी-एच-यू जाकर खुद अपने दम खम पर एडमिशन ले लिया;



जो सालों पहले सचमुच बड़ी बात लगती थी। तब उनके कारनामे हीरोइज़्म से कमतर नहीं लगते। एक आइडिया से सौ तरह की धाँसू बातें करतीं मीता दी को पूरे १० साल बाद देखने का मौका मिलेगा... सोचते हुए नेहा फुर्ती से उठी और जल्दी-जल्दी रूटीन काम निबटाने लगी। दरवाज़े की घंटी सुनते ही वह तेज़ी से दौड़ते हुए गेट तक पहुँची-ये क्या, भारी भरकम सूटकेस से लदी-फदी, मोटी देहयष्टि वाली ये, अधपके बालों वाली अधेड़-सी हमारी वही मीता दी कैसे हो सकती हैं भला ? वक्त हर चेहरे पर कितनी बेरहमी से अपने निशान लगाना कतई नहीं भूलता।

'ओ माई लिटिल बेबी, नेहा डियर..' उनकी वही प्यारे सम्बोधनों वाली आवाज़ सुनकर विश्वास हुआ-है, वही मीता दी, और वह उनके सामान समेटने में मदद करने आगे बढ़ी। तेज़ी से उसे गले लगाते हुए वे बोली-'डियर नेहा, तू तो ज़रा भी नहीं बदली, वैसी ही दुबली-पतली, छरहरी, गोरी, अय.....' उनकी आँखों में वही पुराना नेहराग घुलने लगा फिर ध्यान से देखते हुए पूछने लगी-'क्या बात है, तू सुस्त लग रही है, दफ़्तर ठीक-ठाक चल रहा न ?'

'मीता दी, आइए न, सालों बाद देख रही आपको।' चंद मिनट बाद बिना औपचारिकता बरते शुरू हो गई बातें 'ये जॉब बदलने की सोच रही, बॉस दो टकिया, घटिया, टुच्चा आदमी है। उसके पान-मसाले तंबाकू भरे मुँह से गंधाते बोल याद कर उबकाई आने लगतीं। बोल रहा था, मेरे

करीब आकर बात करो, मेरी जान, पास आकर मुझसे हाथ मिलाओ मेरी स्वप्नपरी..... गंदे खूसट बुझे के दुर्गंध फैलाते चीप अलफाज़ मेरे भीतर अभी भी ज़हरीले कीड़े की तरह रेंग रहे हैं। ऐसे बेहया, बदतमीज़ बंदे से पिंड छुड़ाने का वक्त आ गया बस।'

'अरे, अरे, कहाँ तक भागोगी इन साले बुझे खूसटों से। सब जगह यही तो भरे पड़े हैं। अखबार पलटते ही जहाँ देखो वहाँ रेप केसेज़ की भरमार, पढ़ते हुए जी घबराने लगता गोया ज़मीन में गहरे धँसी बाँबी में से सर निकालते फुफकारते साँप बेरोकटोक निकलते ही चले आ रहे हों। क्या पहले इतने रेपकांड होते थे ? शायद होते हों, पर हमेशा की तरह बदनामी के डर से लड़कियाँ मुँह सिए सालों-साल घुटन में जिंदगी निकाल देती कि मुँह खोलने पर उनका भविष्य चौपट हो जाएगा, पर अब मेरी कहानी ध्यान से सुन। मेरा बेटा ५ का हो चुका था; जिसे माँ के पास छोड़ दिल्ली आकर एक एनजीओ में काम करने लगी। कभी-कभी काम के सिलसिले में देर तक रुकना पड़ता तो अक्सर मेरा डायरेक्टर खुद ही रोक लेता-अच्छा, ये रिपोर्ट पूरी करके जाना। मैं छोड़ दूँगा न। मैं ना-नुकूर करती मगर वो किसी न किसी बहाने रोक लेता-देख, बाकी महिलाओं के साथ पति बच्चों के लफड़े लगे रहते, सो वे देर तक नहीं रुक पाएँगी; पर तेरा पति तो सात समन्दर दूर और बेटा भी तेरी माँ के पास, सो तुझे क्या प्रॉब्लेम ? पता, तेरी इस मेहनत के चलते हमारी कंपनी को इस साल पूरे ५ लाख का नेट प्रॉफिट हुआ है; जिसमें से तेरा शेयर तुझे श्योर मिलेगा..... कहते हुए उसने मेरी खुली पीठ पर हाथ फेरना शुरू कर दिया। मैंने प्रतिरोध करते हुए ज़ोरदार आवाज़ में कहा.. 'सर, प्लीज़, ये सब मत कीजिए, आई डॉट लाइक दिस काइंड ऑफ बिहेवियर। मैं आपको पहले कई बार साफ़-साफ़ बता चुकी हूँ कि न तो मैं उस तरह की लड़की हूँ, न उस तरह का लाभांश चाहिए मुझे, ओके ? आई रिस्पेक्ट यू, दैट्स ऑल।' दो टूक लहजे में पूरी ताकत से अपनी बात कही पर मेरे शालीन बोलों या बरते गए शिष्टाचार का उस पर कोई असर नहीं। हमारी चुप्पी से शह मिलती गई उसे सो इसी चुप्पी यानी लिहाज़ का फायदा उठाने में माहिर खिलाड़ी की तरह उसकी हिम्मत बढ़ गयी थी। फिर क्या था, अगले दिन मेरे साथ फिर

वही सुलूक करने लगा। जैसे ही उसने मेरी पीठ पर हाथ धरा और उसकी हथेली तेजी से ब्रा के हुकों तक पहुँची फिर क्या था ? अचानक तैश में आ गई—‘सर, माइंड योअर विहेवियर, ये क्या बदतमीजी है ? आप कितने गिरे हुए घटिया इंसान है ? कई बार आपसे साफ़ शब्दों में मना भी कर चुकी पर आप इतनी मोटी खाल के गंडे हाथी है या बड़े मगरमच्छ कि आप पर मेरी बात का कोई असर ही नहीं। आपकी बेशर्मी का आज पता चला। हाँ, देख लूँगी आपको भी....’ गुस्से से बिफरते हुए मेज़ पर रखी फाइलें सीधे उसके मुँह पर दे मारी और सर्र से अगले ही पल बाहर, खुले आसमान के नीचे।

अगले दिन जब मैंने अपने कलीग्स को इस घटना की बावत बताना शुरू किया तो आधी महिलाओं ने तो मौन सहमति दी, तो आधी एकदम से पीछे हट गई—न, न, मैं कुछ नहीं कर सकती, कहकर वे चुपचाप अपने काम में डूबी रहीं। तो एकाध दो ने कहा—विरोध करना ज़रूरी है, पुलिस केस कर दो। अभी हमने मिलकर हॉल में शोर मचाना शुरू किया ही था कि वह ज़ोर-ज़ोर से चीखते चिल्लाते हुए पैंतरा बदल उल्टा हमों पर इल्जाम मढ़ने लगा—‘ये तो ऐसे चीख रही है, जैसे इसके साथ बलात्कार हो गया हो। इस दो टकिया औरत की औकात ही क्या है? शरीफ़ घरों की संस्कारी लड़कियाँ कभी ऐसी वैसी हरकतों पर अपना मुँह नहीं खोलती; मगर ये तो है ही ऐसी बेहया औरत तभी तो अपने मन से जान-बूझकर यहाँ देर तक रुका करती थी; जबकि तुम सब अपने अपने घर चली जाती थी। पर इसका घर है ही कहाँ ? घरफोडू औरत है ये। मैंने कई बार जाने को कहा, मगर अड़ी रहती—आपके साथ ही चलूँगी। क्या उल्टा ज़माना आ गया, ऐसी हरकतें करने का तो मैं कभी सपने में भी सोच ही नहीं सकता। ज़रा भी सैल्फ़ रिस्पेक्ट होती इसमें, तो रिज़ाइन करके बैठ जाती; मगर नहीं, इसका तो ब्लेकमेल करने का इरादा था। हाँ, हमसे पूरे दो लाख माँग रही थी। रिश्ते इनकैश कराने पर उतारू थी ये, पैसे न देने पर धमकी देकर चली गई थी—देख लेंगे, तो सुन लिया आप लोगों ने, ऐसी घटिया औरत को नहीं रखना हमें यहाँ। तभी तो इसकी अपने पति से नहीं बनती और फुल्ल फ्रीडम इन्जॉय करने के वास्ते अपने बेटे को अपने पास नहीं रखती। बेशर्मी की

सारी हदें पार कर चुकी ये तो.....’

‘कुछ तो शर्म कर, शर्म कर, झूठ के पैर नहीं होते। तेरी बेटी भी मुझसे बस ४ साल ही छोटी होगी...’ गुस्से में दाँत पीसते हुए अचानक उबल पड़ी वो। ‘खबरदार जो अपने गंदे मुँह से मेरी बेटी की तुलना अपने से की तो, हाँ, ये ठीक नहीं होगा। मेरी बेटी सुसंस्कारी, सभ्य, मर्यादित व चरित्रवान् लड़की है। तेरे जैसी पैसे पर बिकने वाली नहीं वो। पर कौन उकसा रहा है तुझे, ये सब करने के लिए, कोई तो ज़रूर है। आखिर हमें भी पता तो चले। हाँ सुन ले कान खोलकर, इस तरह शोर मचाने से कुछ नहीं बनने बिगड़ने वाला मेरा। साफ़-साफ़ बताती क्यों नहीं कि तुझे कितने पैसे चाहिए ? इतनी ड्रामेबाजी आखिर क्यों ? औरत होकर भी ऐसी नंगई करने का साहस कैसे आया तुझे ? बेशर्मी लादने की आदी होती जाती ऐसी नीच औरतें तो.....’

सुनते ही अचानक ताव आ गया मुझे और ऐन मौके पर ज़ोरदार घूँसा सीधे उसके जबड़े पर दे मारा और मुँह से बेरोक गालियों की बौछार—‘उल्टाचोर कोतवाल को डाँटे, बेहया, बदजात, कमीने, कुकर्मी, झूठा, मक्कार, नालायक.....’ अनाप-शनाप गालियाँ बकती मैं सर्र से बाहर निकल आई। नेहा, यहाँ इस स्टेज पर आकर कितनी अकेली, असहाय और अनसेफ़ महसूस कर रही, बता नहीं सकती। यस, मैं अब वो नहीं रही.....’ कहते हुए मीतादी के आँसू भल-भल बह निकले। इतनी बोलड, दबंग, मार्शल आर्ट एक्सपर्ट मीतादी का इतना दयनीय रूप देखकर नेहा का मन भर आया सो उनके घावों पर शब्दों का लेप लगाते हुए बोली—‘मीता दी, प्लीज़ डॉट लूज़ योअर सैल्फ़, आप अब अकेली कहाँ ? मैं हूँ न, हम फिर से खड़ी कर लेंगे अपनी टूटी इमारत। आप ही तो कहती थीं, एक से आदैं, दो से चार (एक आधे के बराबर और दो लोग चार के बराबर)

‘नेहा, जब मैंने ये सारा वाकया कोहिमा में तैनात अपने पति को सुनाया तो वे उल्टा मुझी पर बरसने लगे—तुमने ज़रूर उसे शह दी होगी। क्यों देर तक रुकती थी ? क्या ज़रूरत थी वहाँ अकेले रहकर नौकरी करने की ? मैं ठीक-ठाक कमा तो रहा हूँ न, फिर क्यों वहाँ खटती हो ? अब देखो, तुम्हारा नाम अखबार में उछल गया सो सुबह से ही दर्जनों फ़ोन आ चुके। चैन से जीना दूभर कर

दिया तुमने। नाक में दम कर रखा है। लिसन, अगर यही सब करना है, तो तलाक क्यों नहीं ले लेती फिर जो जी में आया सो करो, मरो।’ बोलते हुए उनके अंदर आरोप-प्रत्यारोप का पूरा दौर ज़िंदा हो उठा; जिसे याद करके उनका चेहरा निस्तेज हो उठा। निचुड़ी हुई क्रीम कलर की धोती की तरह अनगिनत सिकुड़नों से उनका चेहरा भर गया हो जैसे कोहरे भरे मौसम में आज सूर्य देवता भी काले बादलों के अंदर कहीं विलुप्त हो गए थे।

‘अब आगे क्यों सोचा ? किसी फैसले तक पहुँची?’ टूटे बिखरे शब्द जैसे बमुश्किल गले से निकल पाए। ‘करती क्या, और रास्ता ही क्या बचा था ? ऐसा पति किस काम का जो मेरी परेशानियों या मजबूरियों को समझना ही न चाहे। उसके साथ घुटन भरे पिंजड़े में कैद रहकर मैंने अपने शुरूआती जीवन के पूरे १५ सुनहरे साल गँवा दिए। आखिर क्या मिला मुझे ? जानती हूँ, उसके साथ चौबीसों घंटों के मायने, हर सप्ताह अपने अजीज दोस्तों संग चलने वाली दारू पार्टियाँ, दूसरों की बीवियों संग फूहड़ तरीके से नाच गाना और बात बेबात पर रोका टोकी के अनगिनत सीखचों में कैद रहने नहीं जाना वहाँ उसके पास वापस। उस घुटन भरे धुएँ से बाहर निकलकर ही तो चैन से जीना सीख पाई मैं। फिर से वहाँ जाकर माटी का लौंदा बनकर ज़िन्दगी नहीं काटना मुझे। नो वे, नो बैक टु पैवेलियन, नॉट एट ऑल....’ कहते हुए नम आँखों के तीखेपन से उनका चेहरा विकृत होने लगा।

‘फिलहाल तू अपनी सुना।’ बचे-खुचे शब्दों का सहारा लेकर अब वे सीधे उसी की तरफ़ मुखातिब थीं। इसके पहले कि मेरी तेरी उसकी बात का सिलसिला आगे बढ़ता, नेहा ने अपने साथ हाल में घटा छेड़खानी वाला किस्सा सुनाना शुरू किया कि वे पूरी बात सुने बग़ैर बीच में ही बिफर पड़ी—‘तूने उसके चेहरे पर थप्पड़ क्यों नहीं जड़ दिया ?’

‘मैं सचमुच डर गई थी। ऊपर से इतने बड़े ओहदे पर मेरे बाप की उम्र वाला शख्स सो हिम्मत नहीं पड़ी।’

‘यही, बिल्कुल यही वो नाज़ुक मोड़ होता है; जहाँ वे समझते हैं, लड़की है, इज़तदार घर की है सो लज्जावश मुँह नहीं खोलेगी। कमीने जानते हैं कि अगर ये मुँह खोलेगी तो पहले बदनामी तो इसी की होगी। इस नाते लड़की की चुप्पी का वे भरपूर

दोहन करते। निहत्थी, अकेली लड़की को आसान शिकार समझ जानवरों की तरह वहशियाना हरकतें करते वक्त वे भूल जाते कि उनकी भी उसी उम्र की लड़की है, बहन है या बीवी है। कितने बेबस है यहाँ हम। सच्ची में, ये सब के सब एक ही चेहरे पर कितनी कितनी परतें चढ़ाए रहते ? इन्हीं परतों की तह तक पहुँचना होगा हमें मगर इस बार इसे छोड़ेंगे नहीं। कोई बड़ा व कड़ा कदम तो उठाना ही पड़ेगा वरना ऐसे ही मनबढ़ होते जा रहे ये कमीने..... फिर वे थोड़ी देर सोचकर बोली—‘पहले ये तो बताओ, उसकी इस घिनौनी हरकत का कोई प्रूप है तुम्हारे पास ? जिसके जरिए हम एक्शन प्लान कर सकें.....’ सोचते-सोचते वे बोल पड़ीं।

‘अरे हाँ, मीतादी, अच्छा याद दिलाया। उस दौरान मैंने अपने दिमाग पर काबू रखा और ऐन मौके पर पॉकेट में रखे मोबाइल का स्विच ऑन कर दिया था; जिसमें उसकी हरकतें व अलफाज़ जस के तस रिकॉर्ड में दर्ज हैं और जिसे अब मैं दफ्तर के एक-एक बंदे को सुनाऊँगी। पुलिस केस, कोर्ट केस, सब कुछ करने का ठान लिया मैंने। न, अब उसे छोड़ने वाली कतई नहीं मैं। आखिर कब तक वो हम जैसी औरतों का यूँ ही शिकार करता रहेगा ? लड़कियों के प्रति पुरुषों की सोच में बदलाव आखिर कब आएगा ? हमारे चुप बैठ जाने से हासिल क्या होगा ? चुप्पी सहते-सहते अंदर ही अंदर घुटते रहने की आदी रही है औरतें, आखिर कब मुखर होंगी वे ? अन्याय सहते रहने से आत्मविश्वास और हिल जाता फिर धीरे-धीरे बचा खुचा आत्म सम्मान भी चुकने लगता। लम्बे समय से ऐसा करते-करते फिर एक दिन ऐसा भी आधमकेगा; जब हम अपनी ही नज़रों में गिर जाएँगे। तो, आखिर ये सिलसिला कब थमेगा ? जब भी किसी ने इनके खिलाफ़ आवाज़ उठाने की जुर्रत की तो उल्टा ये उसे ही गुनाहगार साबित करने में जुट जाएँगे।

‘तेरी इस मुहिम में मैं भी तेरे साथ हूँ नेहा, अब तुम अकेली कहाँ ? हम कोई ढेर जानवर नहीं कि वे हमें कहीं भी हाँक ले जाएँगे। समय आ गया है कि हम ऐसे बदतमीज़, बददिमाग, महिलाओं के खिलाफ़ कुदृष्टि रखने वाले इन असुरों के खिलाफ़ जंग छेड़ दें। हम मिलकर एक साज़ा मंच बनाएँगे, जहाँ ऐसे अनाचार की शिकार बेबस बेगुनाह औरतों की आवाज़ सुनी जाएँगी। लेट् मी कॉल माई

एडवोकेट एट फर्स्ट। इस बीच क्या विभोर से बात हुई, क्या रुख है जनाब का ?’

‘सुबह से दो बार मेल कर चुकी, मैसेज कर चुकी। सब के सब हिप्पोक्रेट, मर्दवाद का मुखौटा ओढ़े वही दोगला रवैया-शांत हो जाओ, चुप रहो, घर वाले सुनेंगे तो कितनी बदनामी होगी। किस-किस का मुँह बंद कर पाओगी तुम ? सब तुम्हारी तरफ़ तरस खाती नज़रों से देखेंगे। हमारी एक सामाजिक प्रतिष्ठा है, हमारी फैमिली का हाई स्टेट्स है, मेरा भी तो एक खास ओहदा है सो अभी भी सोच लो.. यानी वही सब घिसी-पिटी बातों से कन्विंस करने की कोशिश कर रहा था। बोलो, कब तक हाथ पर हाथ धरे बैठे रहूँगी मैं ? आखिर इसमें मेरा गुनाह क्या है ? जबकि असली गुनहगार छुट्टा साँड़ बना टहलता रहे और हम बेगुनाह मुँह छिपाती फिरें, आखिर क्यों। चुप रहूँ? फिर चुप बैठ जाने से हासिल क्या होगा ? कब तक अन्याय होने दूँ स्त्री जाति पर ? अब मैंने खूब सोच समझकर शांत चित्त से फैसला ले लिया, सो ले लिया। ऐसे तथाकथित सभ्य सुसंस्कृत बनने का ढोंग रचने वालों का असली चेहरा जब तक बेनकाब न कर दूँ, मैं चैन से नहीं बैठने वाली। सोचो ज़रा, आज हमारे साथ ये घटा, कल किसी और के साथ, परसों किसी और के साथ। बस, बहुत हो चुका। आइंदा से ये सब कतई नहीं होने दूँगी, हाँ, हमारी इस नईसोच का सूत्रपात हो चुका है, सो इस संघर्ष को धार देने के लिए हम संकल्पित हैं, कहीं से कैसे भी बदलाव की शुरुआत तो हो। ऐसे भेड़ियों के खिलाफ़ आवाज़ तो उठानी ही पड़ेगी चाहे इसके लिए कुछ भी सुनना पड़े, कुछ भी सहना पड़े, कुछ भी कुर्बान करना पड़े। मैंने आगा-पीछा सब सोच लिया है। सबका सामना करने कर लूँगी पर अब मैं चुप नहीं बैठूँगी। यकीनन, मैं पूरी तरह तैयार हूँ.... अंदर बाहर की जंग से जूझती नेहा को ऐसा लगा जैसे इस संग्राम के खिलाफ़ उसने पूरी ताकत से बिगुल बजा दिया हो। भीतर का समूचा ज़हर उड़ेलने के बाद अनायास उग आए आत्म विश्वास से नेहा का तनावमुक्त चेहरा बारिश से धुले मौसम के बाद खिली तेज़ धूप की तरह चमकने लगा।

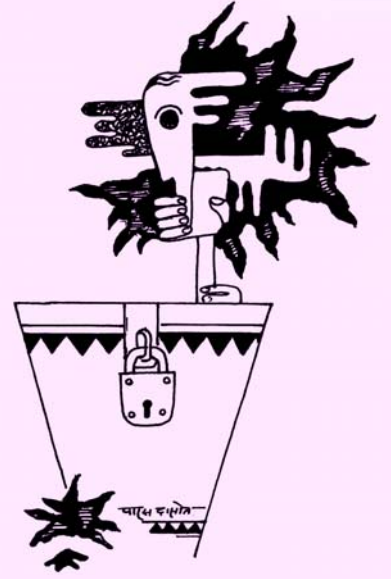
‘यस, प्लीज कॉल द एडवोकेट...’ अपने लिए फैसले पर अटल नेहा के चेहरे की कौंध आकाश में चमचमाते सूरज से होड़ लेने लगी।



लघुकथा

हकीकत

बालकृष्ण गुप्ता ‘गुरु’



उज्वला को विचारमग्न देख जगत ने पूछा, ‘क्या सोच रही हो?’

उज्वला ने मुस्कराते हुए कहा, ‘सोच रही हूँ कि भागकर शादी करें या शादी करके भाग जाएँ।’

जगत ने कुछ-कुछ समझते हुए कहा, ‘तुम क्या चाहती हो, ज़रा विस्तार से बताओ!’

उज्वला ने कहा, ‘भागकर शादी करेंगे, तो एटीएम कार्ड भी रख लेती हूँ। शादी करके भागेंगे तो गहने के साथ होंगे। पर इसके लिए कुछ दिन रुकना पड़ेगा। अभी तो घर में मेरी शादी के लिए गहने तैयार करवाने की बातें ही हो रही हैं।’

जगत ने मुस्कराते हुए कहा, ‘तुम कहती हो, तो गहने बनने तक रुक जाएँ।’

उज्वला ने पूछा, ‘वैसे तुम्हारे पास क्या-क्या है?’

‘मेरे पास तुम्हारा प्यार है, प्यार है, बस तुम्हारा प्यार ही सब कुछ है।’ जगत ने उज्वला को बाँहों में भरते हुए कहा।

उज्वला खुद को उसकी बाँहों से आजाद करते हुए बोली, ‘अच्छा ! अब चलती हूँ, घर पर सब इंतज़ार कर रहे होंगे।’





वाशिंगटन डीसी के एक लैंग्वेज सेंटर में हिन्दी अध्यापिका आस्था नवल दिल्ली से हैं। आस्था की डायरी, लड़की आज भी-काव्य संकलन हैं। साहित्य अमृत द्वारा आयोजित अखिल भारतीय कहानी प्रतियोगिता में द्वितीय पुरस्कार और हिन्दी अकादमी दिल्ली द्वारा आयोजित कविता और लेख प्रतियोगिता में पुरस्कृत। आस्था नवल की कहानियाँ और कविताएँ कई संग्रहों में सम्मिलित हैं।

asthanaval@gmail.com

हम अपने आस पास कितनी ही कहानियाँ बुन सकते हैं। पता नहीं कहानी बुनने की ज़रूरत होती है या कहानी पहचाननी होती हैं। हम थोड़ा-सा यदि महसूस करना सीख लें या थोड़ा सा अपने से बाहर निकल कर देखें तो पता चलता है कि एक हम ही नहीं हैं; जो किसी को याद करके रोते हैं या दोस्तों के साथ कभी-कभी बिन बात के ही खुशी मनाते हैं। आदमी हर जगह एक-सा होता है। आदमी से अर्थ पुरुष से नहीं मानव जाति से है। सम्बन्ध भी हर जगह एक-से ही होते हैं, उनमें टकराहट भी एक-सी होती है। हर ओर सुबह भी आती है और शाम भी आती है। हम चाहें तो भी रात को रोक नहीं सकते, न आने से, न जाने से।

फिर भी हम सब अपनी-अपनी कहानी में अटके हुए बस अपने-अपने ग़मों को रोते रहते हैं और अपनी ही खुशी में उलझे रहते हैं। ऐसे ही वह भी उलझी रहती थी अपने परिवार में, बच्चों में, रोज़मर्रा की भाग दौड़ में। उसने अपने परिवेश से बाहर कभी झाँकना नहीं चाहा था। पहले उसका परिवेश वही था; जो उसके माता पिता का था, फिर उसके पति ने एक परिवेश दिया और अब ज्यों-ज्यों बच्चे बड़े हो रहे हैं, वह उनकी नई दुनिया से सीख रही है। उसे लगता है कि जो उसकी दुनिया है, वह ही सबकी दुनिया है। जब-जब उसकी दुनिया बदलती है, तब-तब समाज भी बदलता है। संयोग से उसके पड़ोस में उसकी जैसी ही स्त्रियाँ हैं, जो केवल अपने बच्चों और पति को ही दुनिया समझती हैं। वह कभी-कभी नई फिल्मों देखती है, तो उन्हें देख कर यही सोचती है कि ऐसा सच में नहीं होता, फिल्मों तो केवल कल्पना होती हैं। उसे लगता है औरत को बस उसकी ही तरह होना चाहिए और उसे अपनी माँ की तरह। उसके अनुसार हर व्यवसायी उसके पति की तरह होता है और हर पति! कैसा होता है यह कभी सोचा ही नहीं। उसकी साधारण दुनिया में सब्जी-भाजी खरीदना और बनाना ही स्त्री का मुख्य काम है। वह इसे बखूबी निभाती

है ; इसलिए अपने आप को एक आदर्श नारी के रूप में देखती है।

उसकी दुनिया तभी तक आदर्श थी जब तक रूपा, उसके पति की चचेरी बहन उसके घर रहने नहीं आई थी। रूपा के माता-पिता का देहान्त उसके बहुत बचपन में ही हो गया था। रूपा को पढ़ने का शौक था, होस्टल में स्कॉलरशिप ले-ले कर बड़ी हुई और यूनिवर्सिटी ग्रांट लेकर बहुत सालों से विदेश में ही रह रही थी। परिवार के नाम पर रूपा के लिए बस इसी का परिवार था। इसका नाम कुछ भी हो सकता था। सीमा, सुषमा, आभा, रानी, रेखा, कुछ भी। इसने अपने नाम को कभी कोई महत्त्व नहीं दिया था और न ही कोई नाम बनाने की इच्छा की थी। पहले सब इसे ओम प्रकाश की बेटी की तरह जानते थे और अब सुधीर की बीवी की तरह और बच्चों के स्कूल में बच्चों की माँ के रूप में। उसे इससे अधिक कुछ होना भी कहाँ था।

यह अकसर सुधीर से रूपा के बारे में जानना चाहती थी; पर सुधीर स्वयं यही जानता था कि रूपा बहुत होशियार है और बचपन से आज तक कुछ न कुछ पढ़ ही रही है। कभी-कभी रूपा का पोस्टकार्ड आता था और संक्षिप्त-सा कुछ लिखा रहता था। सुधीर के माता-पिता जब तक थे, तब तक रूपा थोड़ी लम्बी चिट्ठी भेजती थी। कभी-कभी ताऊ ताई के लिए कोई उपहार भी भेज देती थी। सुधीर के माता-पिता अकसर उसकी चिट्ठी देख कर नाराज़ ही होते थे और रूपा की निंदा किया करते थे। बच्चों को जगह जगह से आए पोस्टकार्ड देखकर बहुत रोमांच होता था और वह किसी विदेशी औरत की अपनी बुआ के रूप में कल्पना किया करते थे। जब रूपा का पोस्टकार्ड आया, जिसमें लिखा था कि वह कुछ दिनों के लिए भारत आ रही है और उसके घर में रहेगी तो एक अजीब सी उथल-पुथल मच गई। सुधीर ने भी रूपा को बचपन में ही देखा था, कुछ बारह तेरह साल के ही रहे होंगे; जब रूपा होस्टल में

चली गई थी और तबसे कभी आई ही नहीं। बचपन में सुधीर की रूपा से तुलना होती और रूपा के अच्छे नंबरों का हवाला देकर डाँट भी पड़ती। बड़े होते-होते वह अच्छाई बुराई में बदल गई। सुधीर के माता-पिता दूसरों के सामने सुधीर को अच्छा बताते और रूपा को बुरा। पता नहीं क्यों हमें किसी एक को अच्छा बताने के लिए दूसरे को बुरा क्यों बनाना पड़ता है? ऐसी क्या बाध्यता होती है कि एक को दूसरे के साथ तौलना ही होता है। क्यों हम किसी एक की तारीफ़ किसी दूसरे की बुराई किए बिना नहीं रह पाते! हर कोई कहीं न कहीं अच्छा और कहीं न कहीं बुरा हो सकता है। हर एक व्यक्ति अपने में अलग होता है, उसकी अपनी खूबियाँ होती हैं और अपनी खामियाँ। आईसटार्डिन ने कहा था कि यदि मछली की योग्यता की पहचान उसे पेट पर चढ़ाकर करना चाहोगे तो वह सारी उम्र शर्मिंदगी में ही रहेगी। पर खैर! सुधीर को पढ़ने में कोई रुचि थी नहीं इसलिए रूपा के अच्छे नंबरों ने उसे कभी परेशान नहीं किया और अपनी तारीफ़ उसने कभी सुनी नहीं; क्योंकि सुधीर के माता-पिता मानते थे कि बच्चों की तारीफ़ पीठ पीछे ही करनी चाहिए नहीं तो वह सर चढ़ जाते हैं। सुधीर ने बी.ए. पत्रकारिता से किया था और बहुत जल्दी पिता का व्यवसाय सँभालने लगा था। रूपा के विषय में सोचने का अवसर उसे कभी मिला नहीं।

पर जिस दिन से सुधीर की पत्नी ने पोस्टकार्ड देखा था, तबसे वह विचलित थी। फिल्मों की कई खलनायिकाओं जैसे चेहरे में रूपा की कल्पना कर चुकी थी। अपने आस-पास की सहेलियों को रूपा की सच्ची झूठी कहानियाँ बता चुकी थी। घर को और अधिक सुव्यवस्थित करने में जुट गई थी। अपनी एक सखी से कुछ पश्चिमी व्यंजनों की रेसेपी भी ले आई थी। बच्चों को बुआ के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए, यह भी सिखाने लगी थी। घर में जब कोई भी आने वाला होता था तो ऐसा ही होता था। सुधीर और बच्चे इस ड़िल से परिचित थे। बस पश्चिमी पकवान की प्रेक्टिस थोड़ी नई थी। वह हर रोज़ अपने बाल भी अलग तरह से सँवारने की कोशिश कर रही थी, पर इस पर सुधीर और बच्चों का कभी ध्यान नहीं गया।

उसके लिए रूपा किसी दूसरे मेहमान की तरह नहीं थी। वह कहीं न कहीं रूपा से बिना मिले ही भयभीत थी। रूपा उसके परिवेश से बाहर थी और

ऐसी स्त्री थी; जैसी स्त्री की कल्पना भी वह नहीं कर पाती थी। कोई भारतीय स्त्री अकेले अपने बल बूते पर विदेश में जाकर रहे। यह बहुत भयावह-सी बात थी। पता नहीं क्यों वह रूपा से बिना मिले ही उससे बेहतर बनने की कोशिश करने लगी थी। जिस दिन रूपा ने आना था, उससे एक रात पहले, वह सो नहीं पाई, बार-बार सुधीर से उसके रंग रूप के बारे में पूछती। कभी पोस्टकार्ड में रूपा की लिखावट देखती। सुधीर एयरपोर्ट लेने गया तो उसने बहुत सुंदर अक्षरों में रूपा के नाम का बोर्ड बना कर दिया। रूपा जब घर पहुँची तो उसे रूपा को देखकर अचम्भा-सा हुआ। उसने मन में जिस खलनायिका की छवि बनाई थी, रूपा बिलकुल भी वैसी नहीं थी। उसने तो पड़ोस की स्त्रियों से सुना था कि विदेश में अकेली रहने वाली स्त्रियों के बाल और कपड़े दोनों ही बहुत छोटे होते हैं। ऐसी स्त्रियों को बच्चों से भी दूर रखना चाहिए, अनाप-शनाप पट्टी पढ़ा देती हैं। सिगरेट शराब के बिना रह भी नहीं पाती हैं।

पर यह क्या! रूपा तो एकदम साधारण भारतीय लड़कियों जैसी लग रही थी। छोटा-सा कद, साँवला रंग, बड़ी-बड़ी आँखें पर उन पर चश्मा, बिना किसी रुचि के सँवारे गए लम्बे बाल। रूपा को तो जैसे अपने रूप की कोई परवाह ही नहीं थी। एक लम्बा कुर्ता और जीन्स। कहीं से भी असभ्य नहीं थी। फिर गोरी भी नहीं थी। उसके हिसाब से विदेश में हर कोई गोरा होता है। जन्म से न हो तो विदेश जाकर हो जाता है। रूपा सफर के कारण थक गई थी। सुधीर को भी सोने की जल्दी थी। बच्चे सो ही चुके थे। रूपा ने औपचारिक हैलो बोला और उसने भी। तुरंत ही वह घर की मालकिन बन कर सुधीर को बताने लगी कि रूपा का सामान किस कमरे में जाएगा आदि। रूपा को उसने अपने दिवंगत सास-ससुर का कमरा दिखाया, बाथरूम में साबुन इत्यादि कहाँ हैं बताया और तुरंत रसोई में चल दी। सुधीर सोने चला गया और वह रूपा के फ्रेश होने का इंतज़ार करने लगी। रूपा नहा धोकर बाहर आई और दोनों की औपचारिकता को तोड़ने के लिए बोली, 'सो! आई थिंक हम एक ही उम्र के होंगे। मुझे तो कभी सुधीर ने अपने बीवी बच्चों का नाम भी नहीं बताया। कभी पोस्टकार्ड का कोई उत्तर ही नहीं दिया।'

उसने तुरंत इतराते हुए कहा, 'नाम जानकर

क्या करोगी। ये तुमसे दो साल बड़े हैं तो मैं रिश्ते में तुम्हारी भाभी लगती हूँ, भाभी ही कहो। बच्चों से सुबह मिलना हो ही जाएगा। अब बताओ सब्जी के साथ रोटी खाओगी या परांठी।'

रूपा ने बिना किसी औपचारिकता के कहा, 'नहीं नहीं मैं बस एक कप चाय पीना चाहूँगी। अगर कोई साथ में बिस्किट या रस्क मिल जाए तो नथिंग लाइक इट। ये सब्जी मैं कल खाऊँगी।'

रूपा की अनौपचारिकता उसे अच्छी लगी पर खाना न खाने की बात कुछ जमी नहीं। पर घड़ी देखकर कुछ ज़्यादा बोली नहीं और चाय का पानी चढ़ाने रसोई में घुस गई। पीछे-पीछे रूपा भी आई और उसने अपनी पहली बार मिली भाभी से बहुत आग्रह किया कि वह उसे चाय बनाने दे, पर सुधीर की पत्नी ने यह तो कभी सीखा ही नहीं था कि घर आए मेहमान से काम करवाए। मौका देखकर उसने बहुत धीरे से रूपा से कहा, 'सुनो रूपा, एक रिकवेस्ट है, प्लीज घर में सिगरेट शराब मत पीना। और बच्चों को कभी मत बताना कि तुम यह सब पीती हो। तुम्हारे भाई भी बच्चों को पता नहीं लगने देते।'

अचम्बित सी रूपा ने इस घरेलू स्त्री पर सर से पाँव तक नज़र डाली, सामान्य-सा कद, सुंदर गोल चेहरा, कुछ परेशान-सी काजल वाली आँखें, बहुत ही सुव्यवस्थित बाल जैसे अभी-अभी बुहारे हों। रूपा ने पूछा, 'आपने ये कैसे सोच लिया कि मैं सिगरेट और शराब पीती हूँ?'

'तुम विदेश से आई हो ना! और फिर अकेले रहती हो।'

उसके भोलेपन पर रूपा को बहुत हँसी आई और कुछ मुग्ध होती-सी बोली, 'तो आपको लगता है विदेश में जो लड़की अकेली रहती है, वह सिगरेट शराब पीती होगी और क्या-क्या लगता है?'

'नहीं! मैंने सुना है कि विदेश में बहुत सदी होती है तो शायद पीनी ही पड़ती है।'

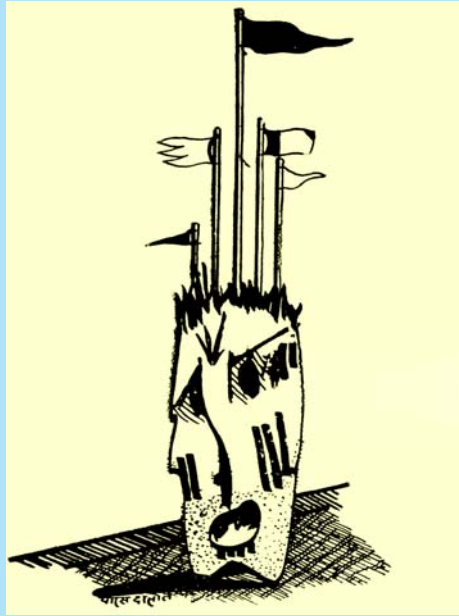
रूपा को समझ आ गया कि यदि वह और हँसेगी तो उसकी अभी मिली भाभी को अच्छा नहीं लगेगा। इतने सालों बाद किसी रिश्तेदार से मिलकर उसे नाराज़ कर देना ठीक नहीं होगा। सच में उसे रूपा का मुस्कुराना बहुत खल रहा था। उसे लग रहा था जैसे रूपा उसका उपहास उड़ा रही हो। वह फिर घर की मालकिन की तरह बिना किसी हाव-भाव के बोली, 'चीनी कितनी लोगी?'

रूपा ने कहा, 'नहीं मैं चीनी नहीं लेती। थैंक

यू।' फिर कुछ विराम के बाद बोली, 'भाभी! मैंने सिगरेट कभी नहीं पी। मैं हेल्थ डिपार्टमेंट में हूँ और साँस से जुड़े रोगों पर ही शोध कर रही हूँ। जानती हूँ कि सिगरेट के क्या-क्या नुकसान हो सकते हैं। शराब सुनकर बहुत अजीब लगता है, पर हाँ कभी-कभी दोस्तों के घर जाती हूँ तो वाईन ले लेती हूँ, आज तक कुछ खास टेस्ट डेवलप नहीं कर पाई इसलिए पीने का कोई शौक नहीं रखती हूँ। और मैं जहाँ रहती हूँ ना वहाँ ट्रॉपिकल वेदर है। लगभग बोम्बे की तरह। तो ऐसी सर्दी नहीं पड़ती।' चाय की चुस्की भरते हुए रूपा ने उससे पूछा, 'आप बताओ, आप क्या करती हो?'

'नहीं नहीं मैं तो सिगरेट और शराब के बारे में सोच भी नहीं सकती। हमारे यहाँ की औरतें.. 'वह बहुत देर तक रूपा को अपने परिवेश और समाज की औरतों के बारे में बताती गई, बिना यह समझे कि रूपा उससे क्या पूछना चाह रही थी। जब वह बोलना बंद हुई तो रूपा ने चाय खत्म करते हुए कहा, 'चाय बहुत अच्छी बनी थी। आपके समाज की औरतों के बारे में जानकर अच्छा लगा। कल फिर बात करेंगे। वैसे मेरा सवाल था कि आप काम क्या करती हो? चलो गुड नाइट।'

सुधीर की पत्नी को अपनी बात पर बहुत शर्म आई। यूँ ही वह सिगरेट शराब की बात लेकर बैठ गई। सारी रात वह सोचती रही कि उसने रूपा के सवाल को ठीक तरह से क्यों नहीं समझा। पता नहीं रूपा क्या सोच रही होगी उसके बारे में! असल में उससे कभी किसी ने यह सवाल किया ही नहीं था कि वह करती क्या है? इसका क्या जवाब हो सकता है उसे पता भी नहीं था। एक गृहिणी कितना कुछ करती है, रूपा को क्या पता? उसने रात भर में एक बहुत लम्बा चौड़ा-सा उत्तर बनाया कि वह दिन भर में क्या-क्या करती है। पर फिर उस उत्तर को बार-बार मस्तिष्क के पन्नों से मिटाया और एक नया उत्तर बनाया। असल में वह जानती थी कि रूपा के सवाल का जवाब है कि वह एक हाऊस वाइफ है, कोई नौकरी नहीं करती। आज से पहले खुद को हाऊस वाइफ कहने में उसे कभी शर्म नहीं आई थी। पर कुछ अनकहा-सा था; जो वह अपने आप को रूपा से बेहतर दिखाना चाहती थी। शायद उसने अकसर अपने बच्चों की आँखों में बुआ का नाम आते ही चमक को देखा था। या बहुत बार सुधीर से सुना था, 'रूपा तुम जैसी औरतों में नहीं



आती।' शायद सुधीर के शब्दों में हिकारत की महक आती थी। इसीलिए उसके पास बस यही कुछ दिन थे, अपनी दुनिया यानी परिवार को दिखाने के लिए कि वह रूपा से बेहतर है। पर पहली मुलाकात में ही उसे ऐसा लगा था कि रूपा उसका उपहास उड़ाकर, उसे निरुत्तर छोड़ गई।

आज भी वह ठीक तरह सो नहीं पाई। रूपा की काल्पनिक छवि टूट चुकी थी। रूपा को देखकर उसे निराशा भी हुई थी; क्योंकि पड़ोसी की देवरानी जब विदेश से आई थी, तो कितना बन ठनके निकलती थी और तड़क-भड़क के साथ आई थी। पड़ोसी भी कितने गर्व से उसके साथ बाहर निकलती थी। रूपा जैसी साधारण लड़कियाँ तो उसे रोज़ दिखती हैं। कहीं न कहीं वह अपने पड़ोसियों को दिखाना चाहती थी कि उसका सम्पर्क भी वैसी छवियों से है जैसी फिल्मों में दिखती हैं। पर रूपा तो हिन्दी भी बड़े सहज तरीके से बोल रही थी। थोड़े बहुत अंग्रेज़ी के शब्द तो आजकल सब ही प्रयोग करते हैं।

सुबह बच्चों को उठाते हुए उसने बताया कि बुआ वैसी नहीं हैं, जैसा वह सोच रहे थे। उसने बच्चों को बुआ से मिलने के लिए इतना निरुत्साहित किया कि बच्चे जल्दी-जल्दी तैयार होकर रूपा से बिना मिले ही स्कूल चले गए। रूपा का कमरा भी तब तक खुला नहीं था। जब खुला तो फिर एक छवि टूटी। रूपा ने तो नहा धोकर सलवार कमीज पहन लिया था, वो भी पुराने फैशन का। उसने तो सोचा था कि रूपा भारतीय कपड़े कभी नहीं पहनती

होगी। रूपा ने बताया कि किसी ज़रूरी काम से उसे बाहर जाना है। शाम को आकर बात करेगी। सुधीर ने रात को ही रूपा को छोड़ने और ले आने की बात पक्की कर दी थी। रूपा की भाभी को यह अच्छा नहीं लगा कि सुधीर ने इस बारे में उसे कुछ बताया क्यों नहीं। वह अपने इस भाव को छिपा नहीं पाई और कुछ बड़बड़ाती हुई बोली, 'तुम दोनों ने ही कल कुछ नहीं बताया। अगर पता होता तो मैं दिन के खाने की तैयारी न करती।'

सुधीर नहा धोकर नाश्ते की टेबल पर आ चुका था और अपनी पत्नी की खीज भरे प्रश्न का उत्तर देता हुआ बोला, 'बताता कब? तुम रात को कमरे में आई या नहीं मुझे तो पता भी न चला। पता है रूपा, ये इतना काम करती है कि मेरे साथ बैठने का समय ही नहीं है इसके पास। मेरे सोने के बाद कमरे में आती है और उठने से पहले ही खटर-पटर शुरू कर देती है। तुझे नींद ठीक आई?' सुधीर रूपा से बिना किसी औपचारिकता के व्यवहार कर रहा था। जहाँ पर उनका रिश्ता छूट था, वहीं से शुरू हो गया था। रूपा ने भी सुधीर को 'तू' से ही सम्बोधित कर बातें शुरू कर दीं। बात करते-करते जब रूपा ने 'उसका' (सुधीर की पत्नी का) सम्बोधन भाभी की तरह किया तो सुधीर को बहुत हँसी आई और हँसता हुआ बोला, 'तुझे क्या हो गया है, भाभी बोल रही है इसे। तुझसे दो-तीन साल छोटी है आराम से। याद है बचपन में अपनी हर अच्छी सहेली को मुझसे शादी करने की सलाह देती थी; जिससे तुम एक घर में रह सको।' यह बोलते ही सुधीर के सामने बचपन की सारी स्मृतियाँ सजग हो गईं और वह थोड़ा-सा भावुक हो गया। रूपा ने माहौल को हल्का करने के लिए कहा, 'मुझे तो अब यही भाभी पसंद हैं। मैं इनके साथ रहने के लिए तैयार हूँ।'

सुधीर ने हँसते-हँसते कहा, 'तू फिर भाभी बोल रही है?' रूपा ने बताया कि ऐसा ही आग्रह हुआ है उससे तो सुधीर को बहुत हैरानी हुई और उसने चलते-चलते अपनी बीबी को सम्बोधित करते हुए कहा, 'तुम्हें पता भी है; ये जहाँ से आई है वहाँ छोटा बड़ा, हर कोई एक दूसरे को नाम से बुलाता है' सुधीर को तुरंत जवाब मिला, 'मैं तो भारत में ही रहती हूँ। मुझे क्या पता वहाँ क्या होता है। आप लोगों को मैं गलत लगती हूँ, तो ठीक है बुला लो मुझे जैसे बुलाना है।' यह कहते ही उसका गला

रुंध गया और वह अपने काम में लग गई। सुधीर को इतनी सी बात पर भावुक होने का अर्थ समझ नहीं आया और उसने जान कर भी अनजान बनना ठीक समझा। सुधीर ने गाड़ी की चाबी उठाई और बाहर चलता बना।

पुरुष अक्सर कई चीजों को अनदेखा कर देना चाहते हैं। या तो उन्हें कुछ बातें नगण्य लगती हैं या फिर वह किसी भी भावुक स्थिति से दूर रहना चाहते हैं। सुधीर भी अक्सर ऐसी स्थितियों को अनदेखा ही करता है। जब तक उसकी माँ जीवित थीं, तब तक तो वह घर ही बहुत देर से आता था। उसे लगता था जितनी कम देर घर में रहेगा, उतनी कम सास-बहू की शिकायत सुनेगा। उसकी पत्नी को भी खुद को समझाने और सँभालने की आदत थी। उसने कभी सुधीर से ऐसी उम्मीद नहीं की थी। उसे याद था कि उसके पिता भी सुधीर जैसे ही थे। उसकी दादी ने भी बताया था कि आदमियों को हमारा रोना-धोना समझ नहीं आता, वे तभी खुश रहते हैं जब हम उनके सामने मुस्कराते रहें।

पर रूपा तो स्त्री थी, और इसे अनदेखा नहीं कर पाई। कई वर्ष उसने होस्टल में रहकर, एक्सचेंज प्रोग्राम में जा-जाकर, कई तरह के लोगों को देखा था। रिश्तों की बारीकियों और लोगों की भावुकता उसे खूब समझ में आती थी। शायद जब खुद पर कठिनाई आ चुकी हो तो हम दूसरों का दर्द अधिक समझ पाते हैं। कुछ लोग अपने में खो जाते हैं और कुछ लोग संवेदनशील हो जाते हैं। साथ ही जब माता-पिता के साए के बिना रहना हो; तब दूसरों के भावों इत्यादि का भी अधिक ध्यान रखना पड़ता है ना! रूपा ने अपना बड़ा-सा बैग और धूप का चश्मा उठाते हुए धीरे से अपनी भाभी के पास जाकर कहा, 'मैं तो तुम्हें भाभी ही बोलूँगी, रिश्तेदार के नाम पर एक तुम ही तो हो मेरी।' रूपा ने भाभी के कंधे पर हल्का सा हाथ रखा और बाय कहकर बाहर चल दी। 'उसने' सोचा नहीं था कि कभी किसी का ऐसा व्यवहार उसे इतना अच्छा लग सकता है। ऐसा क्या कह दिया था रूपा ने, जो दोनों के जाने के बाद वह खाली घर में बहुत देर तक रोती रही। न जाने कौन-सा गुबार था; जो रूपा के सौहार्द ने छेड़ दिया था। रोते-रोते कब सोई पता नहीं चला। बच्चों के आने पर उठी और फिर वही प्रतिदिन के गृहकार्यों में जुट गई। रोने के बाद थोड़ा हल्का महसूस कर रही थी। बच्चे बुआ के

घर आने का बेसब्री से इंतजार करने लगे। जब शाम को सुधीर और रूपा घर लौटे तो रूपा बहुत से फल, चॉकलेट, कोल्ड ड्रिंक्स इत्यादि लेकर आई।

बच्चों को देखकर रूपा ने तुरंत उन्हीं की तरह बात करनी शुरू कर दी। उन्हें चॉकलेट दी और बताया कि वह विदेश से उनके लिए सामान का वजन ज्यादा होने के कारण कुछ नहीं ला पाई। बच्चों के साथ वह ऐसी घुल मिल गई जैसे उन्हें हमेशा से जानती हो। बच्चे उससे विदेश की बातें पूछते रहे और ग्लोब पर उसने कौन-सी जगह देखी है इत्यादि पूछ-पूछ कर खुश होते रहे। रात को खाने की भव्य टेबल सजी। रूपा ने आग्रह किया कि सब एक साथ खाएँगे। भाभी रोटी पहले बना कर रख लें। 'उसने' बहुत मना किया पर सबने जिद की तो मान गई। उसे आज तक लगता था कि सुधीर कभी रखी हुई रोटी नहीं खाएगा। वह अक्सर रसोई से देखा करती थी कि जब सुधीर का आखिरी कौर हो तब ताजा फूली-फूली रोटी उसकी प्लेट में रखकर आए। 'उसकी' माँ भी ऐसे ही करती थी। पर रूपा ने तो आते ही यह बदल दिया। न बच्चों को कोई तकलीफ न सुधीर को। बल्कि सभी ने टेबल पर उसका स्वागत किया। जहाँ एक ओर उसे अच्छा लग रहा था, वहीं उसे ग्लानि हो रही थी जैसे पति और बच्चों को बीस मिनट पहले बनी रोटी खिलाकर वह कोई अपराध कर रही हो। पहले दिन तो वह खुद खाना खा ही नहीं पाई। बस दूसरा ठीक से खा रहा है या नहीं यही देखती रही। एक बार फिर उसके मन में घर की मालकिन वाला रूप उभर आया और बदलाव का कारण रूपा को देखकर अच्छा नहीं लगा।

टेबल पर सभी रूपा से बातचीत करते रहे और एकदम से दोनों बच्चों में से बड़ी बेटी ने कहा, 'बुआ! आप बिलकुल भी वैसे नहीं हो, जैसा हमने सोचा था। न ही वैसे हो जैसा मम्मी ने आपके बारे में बताया था। यू आर डिफरेंट।' इससे पहले कि कोई कुछ और बोले, बच्चों की माँ ने चौंककर बेटी की बात काटते हुए कहा, 'ये सोचते थे कि इनकी बुआ कोई गोरी स्त्री है। गोरी माने अंग्रेज।' रूपा मुस्कराई और बेटी ने फिर कहा, 'पर मम्मी आपने तो कहा था बुआ आपसे बड़ी हैं और हमें उनके साथ वैसे ही बरताव करना है, जैसा हम आपकी फ्रेंड के साथ करते हैं। वो सारी आण्टी तो कितनी बोरिंग हैं। बुआ आपसे छोटी हैं, बिलकुल सामने

वाली दीदी जैसी।' सामने वाले घर में एक नवविवाहिता थी; जो रोज सुबह बच्चों को बस स्टॉप पे जाते हुए बाय करती थी। बच्चे अभी सात-आठ साल के ही तो थे। उन्हें क्या पता कि ऐसा कहने से उनकी माँ को कितना कष्ट होगा। वो माँ जो पहले से ही रूपा से भयभीत थी। ऊपर से सुधीर का यह बात सुनकर जोर से हँसना उसे भीतर तक आहत कर गया। अब वह सुबह की तरह रूआँसी नहीं हुई, पर एक अजीब सी चुभन हुई अंदर। मन किया कि बोल दे सुधीर को और बच्चों को कि रूपा ने बच्चे पैदा नहीं किए, जो उसका शरीर बिगड़ा हो। या कह दे कि अगर वह भी बिंदी, सिंदूर इत्यादि न लगाए, बाल खोल दे तो रूपा जैसी ही लगेगी। या रूपा को कहे कि एक दिन पूरा घर सँभाल कर दिखाए तो सबको पता चलेगा।

पर उसने ऐसा कुछ नहीं कहा। वह ऐसी कभी नहीं थी। अपनी इस सोच पर उसे बहुत हैरानी हुई। उस रात ब्रश करते हुए बहुत देर तक अपने को बाथरूम में लगे शीशे में देखती रही। सोचती रही कि कैसे उसका चेहरा उसकी उम्र से बड़ा लगने लगा। उसे एहसास हुआ कि शायद उसने पहली बार अपना चेहरा इतने ध्यान से देखा है। ऐसा नहीं था कि वह सजती नहीं थी। बाकायदा परिवारों की शादी इत्यादि में ब्यूटी पार्लर से तैयार होती थी। हर महीने फेशियल भी कराती थी। पर आज कुछ और देख रही थी जो पहले कभी नहीं देखा था। रूपा के आने से पहले जो उथल-पुथल मची थी; वह उसके आने के बाद बढ़ती ही जा रही थी। उसे कभी रूपा बहुत अच्छी लगती, कभी उससे ईर्ष्या होती। कभी मन में आता कि रूपा के पैर पड़कर कहे, 'तुम क्यों आई मेरी दुनिया में, चली जाओ यहाँ से। नहीं जाओगी तो मुझे अपने मन की उथल-पुथल से उबारो।'।

रूपा ने बताया कि उसके यहाँ आने का मकसद है अपने भावी ससुराल वालों से मिलना। उसके साथ ही एक बंगाली लड़का काम करता है, जिसके साथ वह जीवन बिताना चाहती है। उसका नाम अरविंद है, वह भी थोड़े दिनों में आएगा और तब रूपा को माता-पिता से मिलवाएगा। यह सब सुन कर सुधीर की पत्नी ने रूपा से कहा था, 'शादी करने का फैसला तुमने अपने आप ले लिया! किसी से पूछा नहीं?'

रूपा ने कहा, 'किससे पूछती भाभी? तुम और सुधीर ही तो हो।'

उसने फिर कहा, 'पर रूपा बंगाली लड़का, क्या तुम्हें बंगाली आती है?'

रूपा ने फिर कहा, 'अरविंद तो हिन्दी और अंग्रेज़ी में ही बात करता है।'

'पर ससुराल में जब-जब सब बंगला में बात करेंगे, क्या तुम सबका मुँह ताकोगी?'

रूपा को ऐसे सवाल बहुत बचकाने लगते थे, पर अपनी भाभी का ख्याल करके बहुत प्यार से उनका जवाब देती थी। रूपा अकसर अपने परिवेश के बारे में उसे समझाने की कोशिश करती थी। हर बात को समझाने के लिए रूपा लम्बी-सी भूमिका बनाती थी। इस सवाल के जवाब में रूपा ने बताया कि वह बचपन से होस्टल में बहुभाषी लड़कियों के साथ रही है। वह कई ऐसे देशों में भी गई है; जहाँ की भाषा उसे बिलकुल नहीं आती थी। हर बार भाषा महत्वपूर्ण नहीं होती। इंसान हर जगह एक से होते हैं। भावनाएँ वैसी ही होती हैं। भाषा तो एक बहुत छोट-सा माध्यम है। रूपा ने यह भी बताया कि उसकी बेस्ट फ्रेंड जर्मन लड़की है। इस भूमिका के बाद भी रूपा की भाभी बार-बार वहीं आ जाती कि, 'पर ससुराल में तो सब बंगला बोलेंगे!'

तब रूपा ने उससे पूछा, 'अच्छ भाभी! तुम सुधीर से प्यार करती हो ना!'

ये सवाल भी कोई सवाल था? जब सुधीर उसका पति है तो प्यार करना ही था। उसने मन में इस सवाल की हँसी उड़ाई और रूपा की बात सुनती गई। रूपा ने कहा, 'अगर आज सुधीर ऐसे लोगों में बैठने लगे; जो कोई और भाषा बोलते हों तो क्या तुम उससे प्यार नहीं करोगी? भाभी! प्यार शर्तों पर नहीं होता। तुम सुधीर से जब पहली बार मिली थी तो क्या तुम्हें पता था कि वह तुम्हारा पति बन जाएगा?'

रूपा को नहीं पता था कि सुधीर की शुद्ध अरेंज मैरिज हुई थी। रूपा के परिवेश में यह अकल्पनीय था और उसकी भाभी के लिए रूपा का परिवेश असाधारण। दोनों एक दूसरे से बात करती थीं पर अकसर एक दूसरे के लिए जो अजीब बात होती थी, वह किसी एक के जीवन का अंग होती थी। रूपा के प्यार वाले प्रश्न के बाद, 'उसने' यानी रूपा की भाभी ने रात को फिर शीशे में खुद देखकर सवाल किया था, 'क्या मैं सुधीर से और



सुधीर मुझसे प्यार करते हैं?' रूपा के आने से पहले उसके जीवन में ऐसे सवालों का कहीं कोई सरोकार नहीं था। पर अब रूपा के कारण सब बदलता जा रहा था। उसे भी अब सबके साथ टेबल पर रोटी खाना अच्छा लगने लगा था। वह बिना किसी ग्लानि के अपने लिए समय निकालने लगी थी। एक दो बार रूपा के साथ घूमने भी गई तो साड़ी न पहन कर सलवार कमीज़ पहन कर गई। बिंदी और सिंदूर भी लगाना कम कर दिया था। 'उसके' लिए यह एक आंदोलन की तरह था; जिसमें वह धीरे धीरे रमने लगी थी। उसे हर रोज रूपा से कुछ सीखने को मिलता। रूपा ने जितनी उसके बनाए पकवानों की तारीफ़ की थी, उतनी आज तक किसी ने नहीं की थी। एक दो चीज़ों की रेसेपी भी ली थी।

रूपा ने रेसेपी लेते हुए बताया था कि वह और अरविंद मिलकर खाना बनाते हैं। यह भी बताया था कि शादी के बाद अरविंद नौकरी छोड़कर आगे पढ़ाई करेगा और बस रूपा ही घर का खर्चा चलाएगी। 'उसके' लिए यह बहुत अजीब दुनिया थी। आदमी औरत शादी से पहले साथ रहें, साथ में खाना पकाएँ, औरत कमाएँ और पति पढ़ाई करे। यह सब जितना आश्चर्यजनक था, उतना ही आकर्षक भी। अहिन्दी भाषी भी कभी दोस्त बन सकते हैं, उसकी कल्पना ही बहुत मज़ेदार थी 'उसके' लिए। रूपा के साथ वक्त बिताते हुए एक दिन उसने अपने कॉलेज के समय की पेंटिंग दिखाई। रूपा ने खुश होकर कहा था, 'भाभी इन्हें फ्रेम करवाओ।

अब नहीं बनाती?'

उसने हँसते हुए कहा था, 'अब तो शादी क्या, बच्चे भी हो गए।'

रूपा ने ज़ोर से और कुछ गुस्से में कहा था, 'तो....'

उस तो का कोई जवाब नहीं था। बस फिर देर रात तक शीशे में खुद को तलाशती रही थी। उस शीशे में जैसे वह अपना अतीत देखती थी। उस रात अपने आप को पेंटिंग बनाते देखा था। शीशे में आर्ट टीचर पीठ थपथपाती हुई और माँ डॉटती हुई नज़र आई थी। रूपा और अरविंद एक दूसरे की पसंद-नापसंद इत्यादि के बारे में सब जानते हैं। यह 'उसे' सोचने पर मज़बूर करता था कि वह सुधीर के बारे में और सुधीर उसके बारे में क्या जानता है। अभी वह ऐसी बातों को सोचना ही शुरू हुई थी कि रूपा के जाने के दिन आ गए। वह अरविंद के साथ भारत में ही एक दो जगह घूमने जाने वाली थी। शादी विदेश में ही करनी थी; क्योंकि दोनों के करीबी लोग वहाँ थे। अरविंद के माता-पिता शादी के समय विदेश चले ही जाएँगे। अरविंद, रूपा को ले जाने के लिए बाकायदा सुधीर और परिवार से मिलने आया। अरविंद पहले सुधीर और बच्चों से मिला और बाद में रूपा की भाभी से। ज़ोर से हाथ मिलाया था 'उससे' और कहा, 'अरे! बहुत सुना है आपके बारे में। दस पंद्रह दिन में ही अच्छी दोस्ती हो गई रूपा से। क्या मुझे भी आपको भाभी बोलना होगा?' यह सुनते ही सब बहुत ज़ोर से हँसे, और 'उसे' फिर भीतर तक कुछ चुभा था। क्यों चुभा था पता नहीं पर कहीं वह आहत हुई थी। जाते-जाते रूपा ने कहा था, 'अच्छा भाभी अगर शादी पर आ सको तो ज़रूर आना। बहुत अच्छा लगा आपके साथ रहकर। काश! मैं भी आपकी तरह लाइफ़ को सिम्पली जी पाती, बिना किसी नाम के।'

पता नहीं रूपा ने उसकी तारीफ़ की थी या मजाक उड़ाया था। वह बहुत देर तक इन्हीं लफ़्जों को शीशे के सामने खड़े हो कर दोहराती रही थी। 'काश! मैं भी आपकी तरह लाइफ़ को सिम्पली जी पाती, बिना किसी नाम के।'

क्या 'उसका' जीवन अब उतना सरल रह पाएगा जैसा रूपा समझती है? पता नहीं रूपा 'उसके' जीवन में क्यों आई थी?





दो दशकों से अधिक ब्रिटेन में निवास; ब्रिटेन के सरकारी प्रोजेक्ट्स में मैनेजर नीरा त्यागी की जन्म स्थली नई दिल्ली है। नीरा त्यागी के लिए लिखना स्वयं के करीब और स्वयं को खोजने का प्रयास है। भीतर की औरत का शब्दों के माध्यम से खुली हवा में जिंदा पल जीने की जिजीविषा ...लिखना सिर्फ आसमान और वजूद की तलाश नहीं, जमीन और जड़ों से जुड़ने का प्रयास भी...परिकथा, गर्भनाल, अरगला में कहानियाँ और कविताएँ प्रकाशित।
neerat@gmail.com

डायवोर्स को पाँच साल हो चले थे। शिखा महसूस कर रही थी कि वीरेन से अलग हो जाने के बाद लोग उससे बचने लगे हैं; जैसे कई सहेलियाँ अब उसे फंक्शन पर नहीं बुलातीं। तभी घर बुलातीं हैं; जब उनके पति शहर से बाहर होते हैं या फिर वह उससे कैफे, रेस्टोरेंट, सिनेमाघरों, शापिंग माल में ही मिलती हैं...जो सहेलियाँ और पड़ोसी उससे बचते नहीं हैं वे उसे खाली समझते हैं और अक्सर उसे किसी न किसी काम के लिए फोन करते रहते हैं। शिखा दफ्तर से लौटते हुए पासपोर्ट रिन्यूअल फार्म ला देना, समय हो तो भर भी देना, मैं पुराना पासपोर्ट लेटरबॉक्स से ड्राप कर दूँगी...हम लोग घर शिफ्ट कर रहे हैं, पैकिंग में मदद कर दोगी? वो हर चीज को तरीके से लपेटकर, गत्ते के डिब्बे में सहेजकर, हर डिब्बे पर अंदर के सामान की सूची, नए घर के किस कमरे में यह पहुँचना चाहिए, सारा विवरण सेलोटैप से चिपका कर, घर की दीवारों के साथ डिब्बों के ढेर लगा देती... शिखा तुम कितनी आर्गेनाइज़्ड हो, मैं तो सारा सामान ऐसे ही भर देती और फिर चीजों को ढूँढ-ढूँढकर पागल हो जाती...। मेहमान आने वाले हैं, शिखा तुम दही-भल्ले कितने अच्छे बनाती हो, मैंने दाल भिगो दी है। घर आकर बना दो, नहीं तो अमन के हाथ भिजवा दूँगी....। शिखा सुनो आज इनके ऑफिस की पार्टी है हिल्टन में, एप्पी और शशांक को सँभाल लोगी। बारह बजे से पहले ही लौट आएँगे। उसे एप्पी और शशांक को सँभालने में कोई आपत्ति नहीं है, पर उनके चले जाने के बाद उसे समझ नहीं आता कि वो घर को कहाँ से सँभालना शुरू करे.... सारी सी डी दराज से बाहर, कारपेट पर बिस्किट के टुकड़े, चाकलेट के रेपर, कॉफ़ी टेबल पर आधे पिये जूस के ग्लास, सोफ़े के कुशन जब दोनों एक दूसरे को उछाल-उछाल कर मारते तो लगता जैसे सिटिंग रूम में तूफ़ान आ गया हो।

वह अक्सर सोचती जब वीरेन उसके साथ रहता था, तब उसकी इतनी माँग नहीं थी। औरों की ज़रूरत बन गई है; लेकिन उस अकेले की कितनी सारी माँगें वो पूरी नहीं कर पाई, तभी तो दफ्तर में कुलीग के साथ उसका अफेयर होने के लिए वही

तो जिम्मेदार थी। उसकी अनुपस्थिति में वह उसे दो तीन बार घर ला चुका था। आस-पड़ोस में सभी को मालूम था, सिर्फ वही अनजान थी। जब उसे पता चला, उस समय तो लगा था-उसके पीठ पीछे उसे आग में झोंकने को एक हवन कुंड तैयार हो रहा था। आज उसे लगता है-उस आग में वो कहाँ जली। उस आग में जले उस पर लगे अंकुश, हर बात पर उसे नीचा दिखाने की वीरेन की साजिशें, एक दूसरे पर चीखने-चिल्लाने की ऊँची आवाज़ें, दूसरों के सामने बिना किसी बात पर तिरस्कृत कर देने वाले अपशब्द, उसे घर से बेघर करने की उसकी चाल, हमेशा कंगाली बघारने वाला बैंक बेलेंस, बेतरतीब समय-असमय बहते आँसू, यह सब जले हैं उस आग में। विश्वासघात और नफ़रत की आग में कुछ दिन तो वह भी जली थी, लेकिन जल्दी ही उसे अहसास हुआ ...डायवोर्स तो जिन्दगी में उसे वरदान की तरह मिला है। उसने खुद को पाया है और उसका आत्मविश्वास लौट आया है। अपनी आज़ादी पाई है। वह अपने सिवा किसी और के लिए जिम्मेदार नहीं है। अब उसे मीटिंग से देर में लौटने में धुकधुकी नहीं होती। वह दफ्तर का बैग रखते ही सीधे रसोई घर की ड्यूटी नहीं लगाती। ऊपर तक भरे डस्टबिन को खाली करने का काम वो अगले दिन पर टाल सकती है। फ्रिज खाली है, उसे परवाह नहीं होती। शाकाहारी होते हुए उसे कबाब और चिकन नहीं बनाना पड़ता। वीरेन की इधर-उधर पड़ी जुगबें नहीं उठानी पड़ती। टेलिविजन के रिमोट कंट्रोल की मालिक वो खुद है। अपनी पसंद का संगीत सुन सकती है। बेडरूम में जितनी देर चाहे लाइट जलाकर पढ़ सकती है। देर तक दोस्तों से फ़ोन पर बात कर सकती है। अपनी मित्रों को घर पर बुला सकती है। उनके साथ रात देर तक फिल्म और थियेटर देख सकती है। जब मन हो पापा-मम्मी के घर जा सकती है। अपनी छोटी-छोटी इच्छाओं को पूरा करने की कोशिशों को जायज़ साबित करने के लिए उसे कटघरे में नहीं खड़ा होना पड़ता। अपने छोटे से छोटे और बड़े से बड़े फ़ैसले खुद लेने के लिए वह स्वतंत्र है। यह आत्मनिर्भरता और आत्मविश्वास पत्नी बनते ही

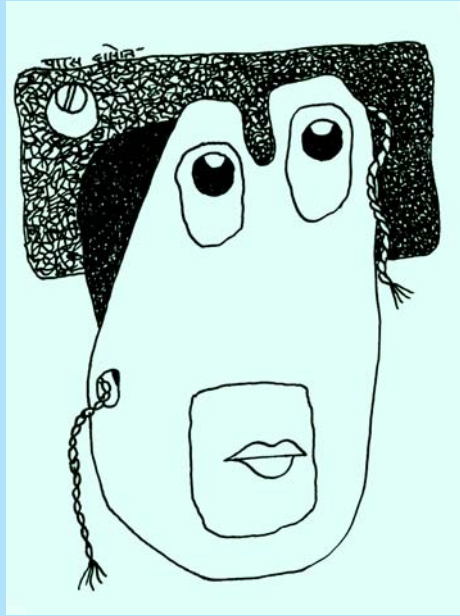
उससे कब छिन गए, उसे पता ही नहीं चला। अब अपने लिए और अपनी तरह जीना उसे एक अनंत सकून से भर देता है।

वीरेन के घर छोड़ने के बाद वो दो महीने की छुट्टी लेकर मम्मी-पापा के पास चली गई थी। माँ ने उसे नई साड़ियाँ खरीदकर दीं। पापा ने उसके लिए खूब सारी किताबें खरीदीं...पापा-ममी ने उसे बिना बताए उसके पीछे डेकोरेटर को बुलाकर उसके फ्लैट को डेकोरेट करवाया। कमरे की दीवारों पर उसकी पसंद का मेग्लोलिया रंग, पीले, खिड़की पर बैजनी फूल वाले परदे और उसी रंग की चादर और तकिये, बालकनी में नए गमले और उनमें खिलते पर्पल आर्किड के फूल उसके दुःख को समेटने में बहुत काम आए। दोनों ने हमेशा यही कहा-पत्नी से निकलकर औरत की ज़िन्दगी जीने का समय आ गया है और यह मौका हर स्त्री को नहीं मिलता। उनके दिए आत्मविश्वास ने उसके आँसुओं को भीतर ही सुखा दिया। शिखा को बेचारी बनाने और बनने पर उन दोनों ने प्रतिबन्ध लगा दिया था। किसी बुआ, चाची, मौसी, ताई की हिम्मत नहीं हुई कि उसके दुःख को बाँटने का कोई सुख ले सके।

वह किसी की सहानुभूति का पात्र नहीं बनेगी और उसे ज़िन्दगी से कोई शिकायत नहीं। इसी निश्चय के साथ वह लौटी और अगले दिन ही ऑफिस ज्वाइन किया। दफ्तर और पड़ोस में सभी की आँखों में फैलता हुआ अविश्वास उसे और मजबूत करता। कोई वीरेन के गुनाह का जिक्र भी करता तो उस पर वहीं ताला लगा देती, हर बार यही कहती जो कुछ होता है अच्छे के लिए होता है...।

यह सब दो वर्ष तो बहुत भाया। उसने दफ्तर में महसूस किया, कुछ पुरुष उसे ज़्यादा ही भाव देने लगे हैं। वे बहानों से उन्हें पीछे धकेलते-धकेलते थकने लगी है। वीरेन के साथ रहने का यह तो फायदा था, कोई उसे उपलब्ध नहीं समझता था। अब वो अपने अकेलेपन से उकताने लगी थी। उसे ज़रूरत महसूस होने लगी थी। दुःख-दर्द, खुशी, उपलब्धियाँ, रुकावटें और माथे पड़ी सिलवटों और होठों पर मुस्कराहट की वजह वह किसी से बाँट सके।

रात को बिस्तर का ठंडापन शरीर को अखरने लगा था। उकता गई थी पड़ोसियों से, दोस्तों से



और अपने आप से और पता नहीं क्या सोचकर उसने अपने डिटेल एक मेट्रोमोनियल वेब साइट पर डाल दिए थे। इस बात को भी अब तीन साल हो चुके हैं नेट पर मिली थी वह नलिन से, वो भी नॉटिंगम शहर में उसके घर से नौ किलोमीटर दूर अपनी माँ के साथ रहता है। वह भी तलाकशुदा है, उसका अपना होटल का फ्रेंचाइज़ है।

तीन महीने तक शहर के अलग-अलग रेस्टोरेंट में लगभग हर सप्ताहांत में साथ खाना-खाने के बाद नलिन उसे एक सप्ताह की छुट्टियों के लिए फ्रांस साथ ले जाना चाहता था। शिखा ने यह कहकर टल दिया, उसे दफ्तर से छुट्टियाँ नहीं मिल सकतीं।

धीरे-धीरे वो शनिवार रात डिनर के बजाय रविवार के दिन लंच पर किसी पब और कैफे में मिलने लगे। अब नलिन अपनी पहली पत्नी को दिए डायवोर्स सेटलमेंट के नुकसान को नहीं झिंकता था और न ही वह वीरेन से खाई चोट को लेकर दुखी होती, दोनों को एक दूसरे का साथ अच्छा लगता पर अधिकतर दोनों बहस करते हुए अपने-अपने घर लौटते; फिर भी दोनों को एक दूसरे के प्रति आकर्षण ने कैद कर रखा था। नलिन शिखा की सहजता, परिपक्वता और जीवन के प्रति उसके ऊँचे मापदंडों का कायल था। शिखा को नलिन अच्छा लगता था; क्योंकि वो उसे किसी हद तक बराबरी का दर्जा देने में सफल रहा। यह बात अलग है कि शिखा के ऊँचे मापदंड उसके पुरुषार्थ की ज़रूरतों के आड़े आते हैं। उन दोनों के रिश्तों को तो कोई अंजाम नहीं मिला है, क्योंकि नलिन उसका

सब कुछ चाहता है, बिना किसी बंधन के... और वो ठहराव चाहती है, नपी-तुली साधारण ज़िन्दगी चाहती है।

नलिन धीरे-धीरे ज़्यादा व्यस्त रहने लगा, वह अक्सर नॉटिंगम से बाहर कभी बिजनेस ट्रिप पर तो कभी यूरोप और अफ्रीका में होलीडे पर। अब वह दोनों बाहर रेस्टोरेंट में कम नलिन के घर अधिक मिलते हैं। इस तीन सालों में वह उसकी बहन मोना और उसकी माँ की अच्छी दोस्त बन गई है। उसके घर में अक्सर आती-जाती रहती, नलिन के बुलावे पर नहीं; बल्कि उसकी माँ और बहन के कहे पर, उनके साथ कभी फिल्म देखने, कभी खाना खाने या कभी उसकी माँ के साथ मंदिर जाना, उसके शनिवार या इतवार में शामिल होता है.. उसके दोस्तों और पड़ोसियों को शिकायत रहने लगी है- वह सप्ताहांत में घर पर नहीं मिलती।

कभी-कभी उसे लगता नलिन को उसके परिवार के साथ इस तरह घुलना-मिलना पसंद नहीं। कई बार चिढ़ जाता था; क्यों वह आलू-मेथी या पालक पनीर या भरवा करेले का डोंगा लिये उसके घर पहुँच जाती है। यह सिलसिला और बढ़ जाता जब वह छुट्टी पर बाहर गया होता। कभी जोहान्सबर्ग, कभी बार्सिलोना, कभी इस्तेम्बूल तो कभी पेरिस। मोना अक्सर शिखा के चेहरे को पढ़ने की कोशिश करती, क्या उसे मालूम है वह छुट्टी पर अकेला नहीं गया; पर उसे शिखा के चेहरे पर कही कोई विषाद नज़र नहीं आता...

एक दिन नलिन अपनी बहन से पूछ बैठा 'तुम्हारी यह दोस्त ठीक-ठाक तो है?' मोना ने हँसकर पूछा 'मेरी दोस्त?... क्यों वह तुम्हारी गर्म जेब और बिस्तर गर्म करने से दूर रहती है। इसलिए पूछ रहे हो, नो शी इज नोट लेस्बियन!'

नलिन की माँ; जिन्हें शिखा अब बीजी बुलाती है, हॉस्पिटल में है। उन्हें स्ट्रोक हुआ था। शिखा रोज ऑफिस के बाद उनसे मिलने जाती रही है। कभी उनके लिए मूँग की दाल और फुल्का लेकर तो कभी खिचड़ी। उस शाम उसके पहुँचते ही बीजी ने अपने बेटा और बेटी दोनों को बाहर जाने को कहा है। वह सिर्फ शिखा से बात करना चाहती है, दोनों को यह अच्छा नहीं लगा। उसकी और घूरते हुए नलिन और मोना वार्ड छोड़ कर बाहर लाबी में चले गए। बीजी ने उसे अपने पास बिस्तर पर बैठाया और बोली 'देख पुत्र मैं चौरास्सी साल की

हूँ, पता नहीं कितने दिन की मेहमान हूँ... तुझे तो मालूम है नलिन ने गोरी से शादी की थी और अठारह साल उसके साथ रहा है, मोना ने मुसलमान के साथ, अब वह बीस साल बाद भाई के पास आ गई है। इन दोनों को कुछ नहीं मालूम, मुझे कुछ हो जाए तो अपना पंडित बुलवाना, मेरे बक्से पर ॐ लिखवाना और मेरा सफ़ेद रंग का सूट जो मैंने तुझसे कपड़ा माँगाकर अभी बनवाया था मुझे वो पहनाना।' और पता नहीं क्या-क्या कहती रहीं। पता नहीं उसने कितनी बार कहा होगा 'बीजी आप कैसी बात कर रही हैं आप ठीक होकर यहाँ से निकलेंगी।' और आखिरी बार यह कह कर वह भाई-बहन को लॉबी से बुलाने चली गई... वार्ड में घुसने से पहले नलिन उसका रास्ता रोककर बोला 'तुम शनिवार को क्या कर रही हो?'

'क्यों?' शिखा ने बिना कुछ सोचे समझे पूछा।
'तुमने मेरी माँ के लिए इतना किया है आई वांट टू ट्रीट यू सम्बेयर वेरी नाइस फॉर द मील।'
'देखो हम अपना बिल हमेशा बाँटते रहे हैं और आई कांट अफोर्ड सम्बेयर नाइस... दूसरा मैं अपनी

दोस्त से मिलने आती हूँ, यह महज़ इतिफ़ाक है कि वो तुम्हारी माँ है।' उसने बड़े अपनेपन से मुस्कराकर जवाब दिया ...।

और हुआ भी ऐसा ही, बीजी दो सप्ताह बाद घर आ गई। एक दिन वह उनको मंदिर लेकर गई। जब वह बीजी को घर छोड़कर लौटने लगी, तो नलिन घर पर ही था और उसे बाहर ड्राइव वे तक छोड़ने आया। गाड़ी का दरवाज़ा बंद कर खिड़की से सर बाहर निकालकर वह बोली-'तुम चाहो तो हम उस घर के पास वाले पब में लंच ले सकते हैं। अगले सण्डे मैं ख़ाली हूँ। फोन करके बता देना मुझे।'

हाथ हिलाकर उसने एक्सीलेरेटर दबाया... वह बाहर खड़ा गाड़ी को आँखों से ओझल होते हुए देखता रहा...।

बीजी ने उसे फ़ोन करके बुलाया है। वह जब ऑफिस ख़त्म करके पहुँचती है, तो मेज़ पर चाय तैयार है। आज बीजी घर पर अकेली हैं... वह सुनती रही एक माँ की कोशिश, माँ की लाचारी और उसकी एक चाह, अंत में वह उसे समझाने

की कोशिश करती हैं-'देख पुत्र अब ज़माना बदल गया है, तू पता नहीं किस सदी में जीती है। आजकल ऐसे नहीं चलता, जब तक तुम दोनों एक दूसरे को ठीक से जान न लो, तब तक कैसे आगे बात बढ़ेगी..आजकल तो एक दूसरे को मन-तन सभी तरह से जाना जाता है।' यह एक माँ की आखिरी कोशिश है...।

वह बीजी का हाथ पकड़ लेती है। आँखों में आँखें डाल कर मुस्कराकर कहती है 'आप अपने बेटे को अच्छी तरह जानती हैं, यदि मैं भी वही करती जो और करती हूँ, तो क्या मैं आपके पास आज यहाँ बैठी होती? इसमें सदी और ज़माना बदलने की बात नहीं है, मुझे अपनी इज़्जत और आपकी इज़्जत करने का अधिकार तो है न बीजी?'

माँ ने आँखें नीची कर उसे गले से लगा लिया। अपना मुँह छुपाते हुए भरे गले से बोलीं-'देख पुत्र मैंने तेरे लिए ढोकला बनाया है, बता तो कैसा बना है?'



“ढींगरा फ़ाउण्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय सम्मान” सादर आमंत्रण



ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउण्डेशन
Dhingra Family Foundation

ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउण्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय सम्मान समारोह
Dhingra Family Foundation-Hindi Chetna International Literary Award Ceremony

प्रथम त्रिपाठी प्रमुख संपादक हिन्दी चेतना एवं सुधा ओम ढींगरा, ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउण्डेशन के सौजन्य से प्रथम अंतर्राष्ट्रीय ऐतिहासिक साहित्यिक सम्मान समारोह शुभारम्भ, के अवसर पर आप सादर आमंत्रित हैं।
Shiam Tripathi, Shief Editor, Hindi Chetna and Sudha Om Dhingra, Dhingra Family Foundation request the pleasure of your company at the inaugural Dhingra Family Foundation-Hindi Chetna International Literary Award Ceremony

इन तीन उत्कृष्ट लेखकों को हिन्दी साहित्य में उनके अप्रतिम समर्पण के लिए सम्मानित किया जाएगा।
to honour three distinguished writers for their outstanding contribution to Hindi Literature.



हिन्दी प्रचारिणी सभा
हिन्दी-चेतना

<p>प्रो. हरि शंकर आदेश (उत्तरी अमेरिका -ट्रिनिडाड) 'ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउण्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय साहित्य सम्मान' (समग्र साहित्यिक अवदान हेतु) Pro. Harishankar Adesh (North America-Trinidad) 'Dhingra Family Foundation-Hindi Chetna International Literary Award' for Life Time Achievement</p>	<p>महेश कटारे (भारत) 'ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउण्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय कथा सम्मान' (उपन्यास-कामिनी काय कांतारे हेतु) Mahesh Katare (India) 'Dhingra Family Foundation-Hindi Chetna International Literary Award' for Novel 'Kamini Kay Kaantare'</p>	<p>सुदर्शन प्रियदर्शिनी (अमेरिका) 'ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउण्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय कथा सम्मान' (कहानी संग्रह -उत्तरायण हेतु) Sudershan Priyadarshini (America) 'Dhingra Family Foundation-Hindi Chetna International Literary Award' for Story Book 'Uttaraayan'</p>
--	---	--

प्रथम सत्र: सम्मान समारोह

दिनांक: 26 जुलाई 2014, समय: 1:30 से 5:00

स्थान: स्कारबरो सिविक सेंटर, कार्सिल चैम्बर्स, 150 बरो ड्राइव, स्कारबरो, ओण्टारियो, M1P 4N7

प्रथम सत्र संचालन : पंकज सुबीर
First Session: Award Ceremony
Date: 26 July 2014, Time: From 1:30 to 5:00 p.m.
Venue: Scarborough Civic Center, 150 Borough Drive, Scarborough, Ontario, M1P 4N7
First Session Master Of Ceremony: Pankaj Subeer

द्वितीय सत्र: सुधा ओम ढींगरा के काव्य संग्रह 'सरकती परछाइयाँ' (शिवना प्रकाशन) का विमोचन एवं तत्पश्चात आयोजित कवि सम्मेलन में आमंत्रित कवियों का काव्य पाठ। अध्यक्षता : पंकज सुबीर
Second Session: Book Release Function of Sudha Om Dhingra Poetry Book 'Sarakti Parchhaiyan' (Shivna Prakashan), Followed by Poetry Recitation by Invited Poets. Chairmanship : Pankaj Subeer
जलपान की व्यवस्था

Refreshments will be served
RSVP: Regrets only by July 10, 2014
RSVP: केवल खेद प्रगट के लिए अंतिम तिथि जुलाई, 10, 2014
shiamtripathi@gmail.com/ 905-475-7165



बी.-२/८बी, केशवपुरम्,
लारेंस रोड,
नई दिल्ली-११००३५
मोबाइल: ०९८६८०७६१८२
sushilsiddharth@gmail.com

यह स्वीकार करने में मुझे संकोच नहीं कि अनेक प्रवासी रचनाकारों को सघनता और अपेक्षित समग्रता में पढ़ने का अवसर नहीं मिला। चाहें तो इसे अध्ययन की सीमा भी कह सकते हैं। यह तो सुयोग हुआ कि सुधा ओम ढींगरा ने मुझे 'हिन्दी चेतना' में स्तंभ लिखने का मौका दिया। अब जब मैं इन रचनाकारों को पढ़ रहा हूँ तो मेरे सामने पाठकीय अनुभव का अनुद्घाटित संसार आकार ले रहा है। एक व्यक्ति और रचनाकार के रूप में हम जिस गतिशील यथार्थ, निष्करण विकास, निष्कवच सभ्यता, सांस्कृतिक विभेद और वैश्विक मनुष्यता की बात करते रहते हैं, उसके अनेक संदर्भ इन रचनाओं में मौजूद हैं। अपनी बात करूँ तो मैं इन महत्वपूर्ण रचनाकारों को पढ़ते हुए निरंतर समृद्ध हो रहा हूँ।

इस बार सुदर्शन प्रियदर्शिनी की कहानी 'देशांतर' पर चर्चा। जब मैं स्तंभ में चर्चा के लिए कहानी तलाश रहा था, तब सुधा जी ने मुझे दो कहानियाँ बताईं- 'देशांतर' और 'सुबह'। सुदर्शन प्रियदर्शिनी की ये दोनो कहानियाँ निरीह होते जा रहे स्त्री-मन और क्रमशः उससे उबरने की उम्मीद को व्यक्त करती हैं।यानी तत्त्व के स्तर पर एक हैं। यही कारण है कि देशांतर का विश्लेषण/पाठ करते हुए कहीं-कहीं सुबह की अनुगूँज भी सुनी जा सकती है।

जिसे रचना कहते हैं; वह रचनाकार द्वारा यथाशक्ति व्यक्त कर दिए जाने के बाद भी किन्हीं अर्थों व संदर्भों में कुछ कुछ अव्यक्त रहती है। इस अव्यक्त को पाठक और आलोचक अपनी अपनी तरह से प्राप्त करते रहते हैं। पाठ और पुनः पाठ का तर्क यही है। यह अव्यक्त एक रहस्य की तरह होता है। रचना के अव्यक्त पर जब कभी सोचता हूँ तो मुझे बरसों पहले पढ़े गए देवकीनंदन खत्री के उपन्यास याद आने लगते हैं। उन उपन्यासों के सदाबहार तिलिस्म और उनके अद्भुत विवरण। इन तिलिस्मों में घूमते / भटकते हुए किसी चरित्र का हाथ किसी फूल, षट्कोण, शेर के मुख, शतरंज के चित्र आदि पर लग गया तो सहसा कोई दरवाजा खुल गया। पत्थर की पुतली के गले से हार उतारने की कोशिश की तो धुँएँ के बीच कोई पहरेदार प्रकट हो गया। पानी से भरी बावड़ी में कूदने पर किसी तहखाने का रास्ता दिखने लगा।रचना के साथ लगभग यही होता है वृत्तांत या विवरण से गुजर रहे हैं कि सहसा / अनायास मन ने कोई शब्द या वाक्यांश या संकेत छू लिया। और वहाँ से किसी अव्यक्त का रास्ता दिखने लगा। तुलसीदास, प्रेमचन्द, मुक्तिबोध, निर्मल वर्मा और श्रीलाल शुक्ल सरीखे अपने प्रिय रचनाकारों को पढ़ते हुए ऐसी 'तिलिस्मी घटनाएँ' प्रायः होती रहती हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने एक भिन्न शब्दावली में 'मार्मिक स्थल' की बात लगभग इसी अर्थ में कही है। 'देशांतर' कहानी पढ़ते हुए कुछ ऐसे ही रहस्य या मार्मिक स्थल हाथ लगे।

देशांतर का कथासार यह है कि एक भिन्न देश और संस्कृति में रहने आए और वहीं रच बस गए सरिता व नीरज का बेटा अपनी इच्छा से चुनी आइरिश लड़की से विवाह रचाने जा रहा है। शादी का निमंत्रण पत्र छपा है और आश्चर्य '.... बेटे की शादी के कार्ड पर माँ बाप का नाम तक न हो।' कार्ड के बहाने सरिता अपनी पारिवारिक स्थिति सामाजिक उपस्थिति और निजी मनः स्थिति के

अनेक साक्ष्यों का सामना करती है। कहानी समाप्त होते-होते सरिता प्रश्नों, दुश्चिन्ताओं, उलझनों से घिरी होने के बावजूद समझौते के एक भावात्मक तट पर आकर खड़ी हो जाती है। 'अपनी खुशी के साथ मेरा ग़म निबाह दो' जैसे तट पर। अब इस कहानी के साथ पहला संवाद तो यही होता है यह एक प्रवासी लेखक की कहानी है। प्रवासी लेखकों से जुड़े सारे अनुमान इससे विस्तार पाने लगते हैं। जैसे इसमें 'अपनी संस्कृति' और 'इनकी संस्कृति' के बीच लगातार बहस है। भिन्न समाज में आकर बहुत कुछ पाने कमाने के बावजूद '.....पाया तो क्या बस खोया ही खोया है' का भाव है। अतीत के किसी आत्मीय जीवन दर्शन की स्मृति है। आदि आदि। यह सब तो है ही लेकिन कहानी इन अनुमानों में सिमट कर रह जाती तो इसे यहाँ चुनने का कोई विशेष तात्पर्य नहीं था। दरअसल कई बार ये पूर्व प्राप्त धारणाएँ प्रवासी लेखकों की रचनाओं के व्यापक मूल्यांकन में बाधक सिद्ध होती है। तेजेन्द्र शर्मा ने अपने किसी साक्षात्कार में बड़ी पीड़ा के साथ कहा है कि मैं प्रवासी हुआ तो मेरी कहानी भी प्रवासी हो गई। इस पीड़ा को समझा जा सकता है।

पता नहीं सुदर्शन प्रियदर्शिनी ने क्या सोचकर यह कहानी लिखी होगी, मगर अनजाने ही वे कुछ ऐसे शब्द या वाक्यांश छोड़ गई हैं; जिनपर दबाव पड़ते ही व्यापक अर्थ के रहस्य खुलने लगते हैं। कहानी में संस्कृति शब्द कई बार आता है। कार्ड छपकर आया है। बाहर से 'बड़ा सुंदर और अपनी संस्कृति की सुगंध से ओत-प्रोत।' कार्ड देखने के साथ सरिता सोच रही है '.....हमारा अपना भाव ही दूसरी संस्कृतियों और सभ्यता के प्रति नकारात्मक है।' कहानी संस्कृतियों की तुलना करते हुए शुरू होती है और अंत तक आते, 'वह अपने आपसे ही रोज़ पूछती है, क्या दो संस्कृतियों के अंतराल में यह जरूरी है कि माँ-बाप को आँख की किरकिरी समझ कर मसकते रहो जब तक

वह आँख से निकल न जाए।' सरिता भारतीय है और अधिकतर प्रवासियों की तरह उसके मन में भारतीय संस्कृति की एक सुकोमल, भावमय व संवेदनशील छवि है। हर सभ्यता और संस्कृति की अपनी जीवन-शैली होती है। जीवन-मूल्य होते हैं। सोच के तरीके होते हैं। सरिता भारत और अमेरिका की संस्कृति की तुलना करते हुए इस टीस से भरी रहती है कि 'हमारी संस्कृति' कितनी उत्तम थी। हालाँकि वह समय के परिवर्तनों को जानती है और अनुभव करती है 'हम में इतनी शक्ति कहाँ कि घड़ी की सुइयों को पकड़ कर रोक लें या पीछे घुमा लें और सब कुछ अपनी संस्कृति में कील की तरह ठोक दें।' सरिता अपने ऊपर यह दबाव भी देखती है कि समाज क्या कहेगा, 'जब यह कार्ड इंडिया जाएगा वे लोग कैसी-कैसी बातें करेंगे। बड़ी बनती थी-अपनी संस्कृति अपनी थाती को सँभाल कर रखना चाहिए। अब पता चला।' ऐसी बहुत सारी बातों का स्मरण कर उसे यहाँ की संस्कृति 'बेलाग बेशर्म' लगती है जिसका लाभ लेते हुए एक लड़की ने उसके बेटे को जाल में फँसाया गया शिकार समझती रही।

यह कहानी बहुत सलीके से संस्कृतियों के विलगाव के साथ उनकी समझ पर बहस छेड़ती है। प्रायः भारतीय संस्कृति का प्रयोग इस देवत्व के साथ होता है जैसे वह एकवचन हो और उस पर देशकाल की गति मति का कोई प्रभाव ही न हो। जब हम अपने मूल देश से दूर होते हैं तो हमें लगता है कि जो पीछे छोड़ आए हैं वह उत्तम है। बहुत कुछ सच्चाई के बाद एक सच यह भी है कि भारतीय संस्कृति या किसी संस्कृति का अर्थ केवल चंद पद्धतियाँ नहीं है। संस्कृति सुभाषितों से व्याख्यायित नहीं होती, वह नित्यप्रति के छोटे-छोटे आचार व्यवहार से प्रकट होती है। तो क्या आज भारतीय संस्कृति सचमुच वही है जिसके मोह में हम सब जकड़े हुए हैं। यह सच है कि इसके बहुत सारे व्यक्तिगत, पारिवारिक और सामाजिक जीवन-मूल्य ऐसे हैं जिन पर गर्व होता है तो इसी के अंतर्गत दलितों, वनवासियों, स्त्रियों, वंचितों, किसानों आदि के भीषणतम यथार्थ भी है। स्त्री को पूजने का दावा करने वाला देश एक बार स्त्री स्वतंत्रता और समानता के सच का सामना तो करे। हाँ, जब हम तुलनात्मक अध्ययन करते हैं तो अपना 'मूल' मौलिक लगता है और दूसरों

का आड़ा तिरछा अनुवाद। बात केवल पारिवारिक रिश्तों की करें तो भारतीय संस्कृति के भीतर ही 'क्रफ़न' 'बेटों वाली विधवा' (प्रेमचंद), 'चीफ़ की दावत' (भीष्म साहनी), 'अपना रास्ता लो बाबा' (काशीनाथ सिंह), 'जलडमरूमध्य' (अखिलेश) और 'तिरिया चरितर' जैसी कहानियाँ लिखी गई हैं; जो 'प्रबुद्ध शुद्ध भारती' के विलाप को ध्वनित करती हैं। इसलिए अमरीकी संस्कृति के सकारात्मक पक्षों पर भी बात होनी चाहिए। भूमंडलीकरण के दौर में तो और भी ज़रूरी है। 'प्रवासी मन और निवासी मन' के द्वन्द्वात्मक यथार्थ पर यह कहानी संकेतों में बहुत कुछ कहती है। सुदर्शन प्रियदर्शिनी ने बिना किसी बेजा पक्षधरता के एक सामाजिक स्थिति बयान कर दी है। हाँ जॉन एलिया का एक शेर याद आता है-

हमने देखा तो हमने ये देखा

जो नहीं है, वो ख़ूबसूरत है।

सांस्कृतिक उधेड़बुन से कहीं ज़्यादा 'देशांतर' बेदखल होने की पीड़ा है। रिश्तों की आत्मीयता की दुनिया में शादी वगैरह के कार्ड भी एक दस्तावेज़ सरीखे होते हैं। बेटे की शादी के कार्ड से सरिता और नीरज बेदखल कर दिए गए हैं। मानो पैतृक संपत्ति से वंचित कर दिया गया हो, या बेघर कर दिया गया हो। यह बात चुभनी स्वाभाविक है क्योंकि इस बेदखली का किसी संस्कृति से भी कुछ खास लेना देना नहीं है; सरिता सोचती है, '...उसे बेटे और बहू को दाद देनी चाहिए कितनी संजीदगी से, करीने से और एक बड़े ही चातुर्य से मक्खी की तरह माँ बाप को बाहर निकाल दिया है।' इस बात पर जब सरिता की बेटे से बहस होती है, तब वह, 'आपने तो जी लिया अब हमें जीने दीजिए' पर बात खत्म कर देता है। इस अर्थ में यह एक बड़ी कहानी बन जाती है परिवार में माता-पिता और बच्चों के बीच रोज़-ब-रोज़ बढ़ता असंवाद और असंतोष आज किसी भी संस्कृति के बड़े कष्टों में से एक है। थोड़ा अभावुक और यथार्थवादी तरीके से सोचें तो ऐसे बच्चे दुनिया के बहुत बड़े शोषक, स्वार्थी और धोखेबाज़ होते हैं। नई पीढ़ी 'बी प्रेक्टिकल' और जाने कैसे कैसे जुमले उछालती रहती है। काश, कुछ उदाहरणों में पुरानी पीढ़ी भी वात्सल्य और ममता पर अंकुश लगाते हुए व्यावहारिकता का बोध इस 'फ़ास्ट फॉरवर्ड' पीढ़ी को कराए। शायद इसीलिए जब

'बाग़बान' फिल्म में अमिताभ बच्चन और हेमा मालिनी अपने बेटों बहुओं को माफ़ करने से इनकार करते हैं; तब समाज में बहुतेरों को सुकून-सा मिलता है। हिन्दी कहानी में एक समय पिता से असंतुष्ट नई पीढ़ी ने अनेक 'पितृसत्ता विरोधी' रचनाएँ लिखी थीं। यह परिवार और समाज में लगातार चलने वाला द्वन्द्व है। अब नई पीढ़ी की गैर ज़िम्मेदारी पर भी मार्मिक रचनाएँ सामने आ रही हैं। संतोष यह है कि नई पीढ़ी के कथाकार ही आलोचनात्मक दृष्टिकोण के साथ वह सामाजिक यथार्थ उजागर करते हैं, कर रहे हैं। सुदर्शन ने 'एक पीढ़ी का अंतर ऊपर से देशांतर' का मर्म कलात्मक उपलब्धि के साथ व्यक्त किया है। बेटे ने पहले नाम बदला और फिर दायित्व!

इस कहानी का एक दिलचस्प और विचारणीय पक्ष है-'परिवार में स्त्री की स्थिति।' सरिता नीरज की पत्नी है और जॉन की माँ। पत्नी और माँ के दो पाठों के बीच पिसती अंसख्य स्त्रियाँ हमारे अनुभवों में हैं। जाने कितनी कथा-रचनाओं और फिल्मों में इसके उदाहरण पढ़े देखे जा सकते हैं। ध्यान दें तो यह पुरुष सत्ता का ही एक बदला हुआ पैतरा है। जॉन और नीरज के बीच सरिता एक पुल है 'बाप से बात नहीं करेंगे; क्योंकि अभी भी कहीं उनकी ऊँची दहाड़ उन्हें डराती है। बाप का संदेश भी माँ की ही पीठ पर चढ़ कर पहुँचता है।' जब बेटे की शादी वगैरह की बात होती है तो थोड़ा सा आश्वासन देने के बाद नीरज बेटे के बिगड़ने की ज़िम्मेदारी सरिता पर डाल देता है, 'पर तुम माँ थीं, तुम रोक सकती थीं यह सब।' इस स्थिति के कारणों का विवेचन करते हुए दोनो प्रायः एक दूसरे पर दोषारोपण करते दिखते हैं। तर्क घुमा-फिरा कर वही जो 'बॉबी' जैसी फिल्मों में हम कई बार देख चुके हैं-'पर तुम्हें याद है नीरज जब हम पहले पहले आए तो यहाँ की ज़िन्दगी का हिस्सा बनने के चक्कर में हर वीकेंड में इन्हें घर अकेले छोड़कर चले जाते थे; क्योंकि पार्टियों में बच्चों को ले जाना मना होता था। हम उस भेड़ संस्कृति का हिस्सा बनना चाहते थे।' यानी जीवन पद्धति अपनाते के चक्कर में माँ-बाप के पास बच्चों के लिए समय नहीं। और अब यह केवल अमरीका की समस्या नहीं, भारत में स्थितियाँ लगातार भयावह हो रही हैं। केवल उच्च वर्ग नहीं, मध्य और निम्न वर्ग के पास भी समय नहीं, दिल्ली का 'आरुषि कांड' तो

एक उदाहरण है। इन सारे उदाहरणों में उस स्त्री की ज़िम्मेदारी सबसे ज़्यादा मानी जाती है, जो पत्नी और माँ है। कामकाजी स्त्री होने की दशा में ज़िम्मेदारी के तनाव का अनुमान लगाया जा सकता है। इस कहानी में पति कई बार पत्नी पर आरोप लगाता है, 'हम मूढ़मति ही उसकी चालाकियाँ समझ नहीं पाए। बस गाहे-ब-गाहे आने वाले उसके फ़ोनों पर ही तुम निहाल होती रहीं।' रिश्ते 'युद्ध' जैसी स्थिति के समीप खड़े हैं। अगर 'माँ की ममता' जैसा भाव बीच में न हो तो पिता लगभग तैयार है, 'यह तो नगाड़ा बजा है, युद्ध का बिगुल हमारी और से बज भी गया तो क्या?' और सरिता भी '...उठ कर गुसलखाने में मुँह धोने चली गई जैसे अभी किसी युद्ध के मोर्चे की तैयारी बाकी है।' पिता, माँ, बेटे में सिमटा यह परिवार जैसे घर नहीं बंकर में रह रहा है। कहानी में आत्मचिंतन और संवादों के जरिए यह जानने की कोशिश है कि उन्नति की अंधी दौड़ और सब कुछ पा लेने की उतावली से भरे परिवारों में परिवार कितना बचा है।

कहानी पढ़ते हुए तमाम अंतः क्रियाओं के बीच सरिता का निचाट अकेला पड़ जाना भी मन को कचोट जाता है। उसकी दशा ऐसी मानो '... किसी ने उसके पूजा के कलश को पैर से ठोकर मार दी हो।' पूजा का कलश यानी वह सहज विश्वास जो किसी को अपने जीवन और जीवन में शामिल व्यक्तियों से होता है। पति नीरज मस्त है, 'अरे छोड़ो नीरज की वह तो पहले से ही फक्कड़ है। उसे कोई फर्क नहीं पड़ता।' बेटा अपनी दुनिया बसाने में व्यस्त। बेटे की सलाह है, 'उन्हें क्यों महसूस करवाती हो; कि तुम्हें बुरा लगा है बल्कि यह महसूस करवाओ कि तुम्हें कोई परवाह नहीं।' मुसीबत है तो सरिता की जो अकेली पड़ती जा रही है। सुदर्शन प्रियदर्शनी की एक अन्य कहानी 'सुबह' में मालती की स्थिति इसी यथार्थ का विकास है। मालती अकेली है। बुढ़ापा है। अतीत की स्मृतियाँ हैं। वे आवाज़ें हैं जो कभी जीवन की चहल-पहल का हिस्सा थीं, '... आज ये आवाज़ें नेपथ्य में कैसे चली गईं... क्या मेरी आवाज़ भी किसी को आती होगी।' सुदर्शन ने बेहतरीन कथा कौशल के सहारे मालती की मनोदशा का वर्णन किया है। यहाँ भाषा और वाक्य-संरचना पर उनका रचनात्मक संतुलन देखने योग्य है। मालती

अकेलेपन में सोचती है, 'क्यों बिसूर रही हूँ... ये फैसले भी अपने थे .. उन फैसलों में कही ऐसा समय कल्पना में नहीं था ... कौन जानता था कि एक दिन ऐसी जगह होगी, ऐसी धरती होगी कि अपनी भाषा में आपकी बात कोई समझ न सकेगा।' 'सुबह' की मालती और 'देशांतर' की सरिता अपने ही फैसलों के भविष्य में अकेली है। वह भविष्य जो अब वर्तमान है। सुदर्शन इन कहानियों से संस्कृति समाजिकता और विकास पर पाठक का ध्यान केन्द्रित करती है। वे कई प्रश्न उठाती हैं, जैसे-

1. प्रवासी मन में अपनी मूल संस्कृति की स्मृतियाँ स्वाभाविक हैं लेकिन मूल निवास और प्रवास के बीच भावात्मक रूप से उलझे रहना कितना तर्कसंगत है।

2. जब हम व्यक्तिगत विकास की योजनाओं का खाका बनाते हैं तो क्या उसमें भविष्य के अनिवार्य अकेलेपन नहीं दिखते।

3. क्या परिवार समाज और संस्कृति को बचाने का पूरा दायित्व केवल स्त्री का हो होता है।

4. क्या बच्चे बड़े होकर माता पिता को अकेला छोड़ना 'अपने विकास' की सहज प्रक्रिया मान रहे हैं।

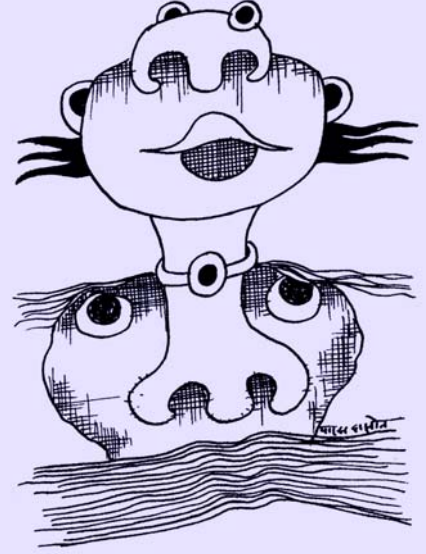
ऐसे कई प्रश्न हैं जिनसे मालती और सरिता जूझती हैं। कहानीकार ने अंत आशावाद के साथ किया है। फिर भी 'देशांतर' का अंत मजबूरी के गमले में खिला गुलाब है। 'देशांतर' रचना शास्त्र और समाज शास्त्र की दृष्टि से उल्लेखनीय कहानी है, सुदर्शन प्रियदर्शनी ने बहुत सलीके से इसे लिखा है। उनकी भाषा से ऐसे प्रयोग उपज सके हैं; जो एकदम नये हैं। 'वह रुकने वाली गाड़ी निकल चुकी थी। अब तो केवल हरी झंडी देने का अधिकार बचा था।' या 'ये ही बातें ज़िन्दगी की वे चौखटें हैं, जिन पर ज़िन्दगी टिकी रहती है आज कई घरों की छतें भुरभुराती हुई इन कमजोर चौखटों पर खड़ी लंगड़ी-लंगड़ी खेल रही हैं।' कहानी यह आग्रह भी करती है कि सुदर्शन को अधिक पढ़ा जाए। वे महत्वपूर्ण कहानीकार हैं। जैसे सरिता जीवन में जो संभव है उसे बचाना चाहती है वैसे ही सुदर्शन प्रियदर्शनी की रचना बहुत कुछ बचाना और बताना चाहती है। वह पाठक को एक पगडंडी दिखाती है।



लघुकथा

बचपन

मनोज सेवलकर



दादाजी अपने पोते के साथ बारिश में भीगते हुए, कागज़ की नावों को पानी में बहाकर आनंद ले रहे थे और उनकी पत्नी उन्हें बार-बार बारिश में भीगने से मना कर रही थी, परन्तु वे पत्नी की बातों को अनसुना कर पोते के साथ बारिश में भीगते हुए नाव बहाने का यह आनंद छोटे बच्चों की तरह ले रहे थे।

पोते ने दादाजी से प्रश्न किया- 'दादाजी, आपको दादी कब से घर के अंदर बुला रही है, आप अंदर क्यों नहीं जा रहे हो....?'

उन्होंने पोते को समझाते हुए कहा- 'बेटा ये बारिश के बहते पानी संग कागज़ की नाव का खेल मेरे बचपन का सबसे मजेदार खेल रहा है। जब तक साँस है, इस बचपन के मजे को जाने नहीं दूँगा। तुम्हारी दादी तो बूढ़ी हो गई है, उसे क्या मालूम बचपन का मजा....' उन्होंने जोर से घर की ओर आवाज़ लगाई 'नहीं आता जाओ, मेरी तुम से कुट्टी...।'

दादा-पोता हँसते-हँसते फिर से अपने खेल में मग्न हो गए।





er.kamlanath@gmail.com

पीड़ा बहुआयामी होती है। छोटी, बड़ी, गहरी, सतही, सामाजिक, प्रशासनिक, वैज्ञानिक, आर्थिक, मानसिक, धार्मिक, साहित्यिक, बौद्धिक, शारीरिक, व्यावसायिक, सैद्धांतिक.....वगैरह वगैरह। आप सोचते जाइए और आपको नई-नई पीड़ाओं के बारे में पता चलता जाएगा। पीड़ा अनेक रूपा भी है। यह सभी क्षेत्रों में और सभी वर्गों में समान रूप से विद्यमान है, इसलिए यह सर्वव्यापी है। आप जिन्हें सौभाग्यशाली समझते हैं और सोचते हैं कि शायद उन्हें कोई पीड़ा नहीं, उनको भी पीड़ा बनी रहती है कि ज़रूर वे किसी पीड़ा को भूल रहे हैं, जो उनको है पर अभी याद नहीं आ रही। जबसे जीव का उद्भव हुआ, पीड़ा तभी से उसके साथ है। शरीर नष्ट हो जाता है, पर उसके कार्यकलाप या याद से जुड़ी पीड़ा बाद तक दूसरों को पीड़ा पहुँचाती रहती है। इसलिए पीड़ा शाश्वत है। पीड़ा चूँकि मनुष्य से कभी अलग नहीं होती, इसलिए यह अद्वैत है।

मेरे पड़ोसी वी.एन. द्विवेदीजी, जिनका पूरा नाम वैशाखनंद(न) द्विवेदी है और कॉलोनी में दुबेजी के नाम से जाने जाते हैं, कुछ दिन पहले ही रिटायर हुए हैं। भारत सरकार में हिन्दी से जुड़े किसी महकमे में बड़े अफसर थे। अब जब भी मुझे कभी घर के बाहर बरामदे में या लॉन पर देख लेते हैं; तो तुरंत ही मुझे जबरन आतिथ्यपुण्य का लाभ पहुँचाने आ धमकते हैं। वे भी 'पदेन' साहित्यकार रह चुके हैं। पदेन यूँ कि जब कुर्सी पर विराजमान थे; तब साहित्यकारों की पुस्तकें देखते थे, उन पर अपनी

राय देते थे, अनुदान के लिए शोधार्थियों के प्रोजेक्ट का मूल्यांकन करते थे और इस लिहाज़ से वे स्वयं को और हर आगंतुक उनको साहित्यकार ही समझता था। एक बार अपने 'साहित्य सृजन' के दर्शन का सौभाग्य प्रदान करने मेरे घर आ थे, पर उस समय तक मैं उनके 'विशद ज्ञान' और 'अद्भुत रचना शक्ति' से अपरिचित था, इसलिए उनके सर्जन को समझ ही नहीं सका। बहरहाल, कॉलोनी में उनकी ख्याति अफसर और साहित्यकार दोनों तरह की है।

चाय की चुस्कियों के बीच वे बोले- 'क्या बताऊँ, अपने पद पर जब था; मैं संस्थाओं को और अकादमियों को अनुदान देता था और वहाँ के पदाधिकारी मेरे आगे बिछे रहते थे। जिन्हें लाखों का छपाई का ठेका मिलता था, वे अच्छे प्रकाशक मेरी व्यक्तिगत 'साहित्यिक' पुस्तकें छापने के लिए हमेशा तत्पर रहते थे और पूछा करते थे- कब तक मेरी पुस्तक तैयार हो जाएगी। साहित्य अकादमी ने तो बड़ा आग्रह किया था कि वे मेरे योगदान और मेरी इस पुस्तक के आधार पर मुझे हिन्दी भाषा के लिए इस वर्ष का अकादमी का सम्मान देना चाहते हैं और इसे मैं अपने बायोडेटा के साथ तुरंत भेज दूँ। अगर छपी नहीं भी है, तो इसकी पाण्डुलिपि ही भेज दूँ।'

मैंने कहा- 'लेखक का मुँह देखते ही साहित्य की उत्कृष्टता को अकादमियाँ, साहित्यिक संस्थाएँ और प्रकाशक तुरंत ही समझ लेते हैं। आप बड़े भाग्यशाली हैं दुबे जी, आपको कितना आदर देते हैं वे लोग।'

दुबे जी के मुख पर मुखलिफ़ भावों की विविधता लहराई- 'हाँ, यह तो सही कहा आपने।'

'आपको रिटायरमेंट के समय बड़ा संतोष रहा होगा कि न केवल आपके विभाग वाले, बल्कि अन्य सभी सम्मान के साथ आपको विदा कर रहे हैं।'

'आप बिलकुल ठीक कह रहे हैं। रिटायरमेंट के समय यही भाव थे मेरे मन में'-दुबेजी ने बुझे मन से कहा।

'अच्छे भावों का संयोजन और संरक्षण एक

साहित्यकार की प्रकृति का ही अंग होता है दुबेजी। इन्हीं भावों को बनाए रखिए और अब आप यह पुस्तक तुरंत छपवा लीजिए'-मैंने सलाह दी।

निराशा में दबे दुबेजी व्यथित स्वर में बोले- 'हाँ, उसी के लिए गया था आज। कुछ प्रकाशकों ने तो वहाँ मौजूद ही नहीं होने का बहाना बना दिया, जबकि एक को मैं देख भी चुका था। कुछ ने व्यस्तता का बहाना बना करके अगले सप्ताह आने के लिए कह दिया और कुछ ने पुस्तक की पाण्डुलिपि को देख कर बेशर्मी से कहा कि यह कहीं नहीं छप सकती, जबकि इसी पुस्तक को उनसे फटाफट छपवा लेने के लिए वे पहले मेरी मनुहार करते थे।'

मैंने उन्हें धीरज बँधाते हुए कहा- 'चलिए, कोई बात नहीं। बाद में छप जाएगी। आपको पता है कि नहीं, अमरीकी लेखिका मागरेट मिचैल के प्रसिद्ध उपन्यास 'गॉन विद द विंड' की पाण्डुलिपि को तो छापने से पहले अड़तीस बार अस्वीकार कर दिया गया था। और फिर देखिए, छपने के बाद उसने क्या धूम मचाई थी। चिन्ता और पीड़ा के भाव क्यों लाते हैं? वैसे, अकादमी वाले तो पाण्डुलिपि पर ही आपको पुरस्कार देने के लिए बेचैन थे, आप पाण्डुलिपि ही भिजवा दीजिए अकादमी में।'

अब उनके चेहरे पर पीड़ा के भाव और गहराने लगे, बोले- 'लेकर गया था साहित्य अकादमी। दो चार पन्ने पलटते ही वे बोले- 'क्या उठा लाए?' फिर मेरी हिम्मत की दाद देने लगे कि मैं इसे पुरस्कार के लिए भी सबमिट करना चाहता हूँ!'

दुबेजी की पीड़ा वास्तविक थी। वे इस बात से दुखी थे कि वे मौक़ा चूक गए और इससे भी कि उन्होंने पद पर रहते हुए ही अपनी पाण्डुलिपि तुरंत छपवा क्यों नहीं ली और उसे भेज कर साहित्य अकादमी का पुरस्कार प्राप्त क्यों नहीं कर लिया। कर ले सो काम, भज ले सो राम!

उनको फिर सांत्वना देते हुए मैंने कहा- 'चलिए, कोई बात नहीं। साहित्य और साहित्यकार कभी किसी का मुहताज नहीं होता, दुबेजी। साहित्य तो अच्छा ही होता है। केवल समय, व्यक्ति और

परिस्थिति के अनुसार उसके मूल्यांकन का मापदण्ड थोड़ा बदलता रहता है। आपने सुना होगा, शुरू में प्रसिद्ध अंग्रेज़ लेखक रुडयार्ड किपलिंग की पुस्तक भी किसी ने नहीं छपी थी। बल्कि एक प्रकाशक ने तो उनको यहाँ तक कह दिया था कि माफ़ करना, आपको अंग्रेज़ी लिखना ही नहीं आता। और देखिए, बाद में तो उन्हें साहित्य के लिए नोबल पुरस्कार भी मिला। आपको पुरस्कार आज नहीं तो कल मिल जायगा। साहित्य अकादमी नहीं देगी तो आपकी पुस्तक पर कोई और दे देगा। ऐसा होता रहता है। आप तो साहित्यिक संस्थाओं से मेलजोल बनाए रखिए, अन्त में वही काम आता है।'

दुबेजी उस समय कुछ आश्चस्त होकर चले तो गए, पर उनकी यह पीड़ा एक तरह की साहित्यिक पीड़ा थी, बल्कि साहित्यिक पीड़ा की प्रशासनिक उप-पीड़ा थी।

जब भी निश्चिन्त होकर सुबह मैं पार्क में घूमने जाता हूँ, मुझे लोगों की पीड़ा से साक्षात्कार होता है। उन सभी लोगों की पीड़ा से जो विभिन्न रूपों में दर्शन देती है। बड़े अधिकारी जो अभी हैं और वे भी जो अब नहीं रहे; बड़े व्यवसायी-जिनको मैं समझता हूँ वे हैं, पर वे खुद कहते हैं वे नहीं हैं; और वयोवृद्ध साहित्यकार, जिनकी आँखों से नए साहित्य को पढ़कर अश्रुपात होता है, सभी को पीड़ा है। एक वैज्ञानिक हैं, जिन्हें खेद है कि उनके पुत्र को विज्ञान से ज़्यादा पॉप म्यूज़िक का शौक है, जिसमें वह अपना करियर बनाना चाहता है। भारत सरकार के एक वरिष्ठ सचिव हैं; जिनकी खूबसूरत पुत्री जिद करके भी फ़िल्मों में नायिका बनना चाहती थी और मुंबई जाकर अंत में किसी प्रोड्यूसर की रखैल बन गई। एक उद्यमी, जो क्षुब्ध हैं कि चीन ने तो अपने यहाँ बनी सारी उपभोक्ता वस्तुओं को अमरीका के चप्पे-चप्पे पर फैला दिया, लेकिन भारत ग़लत नीतियों के चलते खुद अपने लोगों के लिए भी अच्छी और सस्ती चीज़ें नहीं बना पाता; भारत सरकार की नौकरी छोड़कर आए प्राइवेट सैक्टर के एक अधिकारी हैं; जिन्हें तनखा तो अच्छी मिलती है; पर वे इस डर से कभी छुट्टी नहीं ले पाते कि उन्हें नौकरी से ही छुट्टी न मिल जाए। एक जलविज्ञानी हैं, जो इस बात से चिंतित हैं कि चीन अपने क्षेत्र में ऊपर ब्रह्मपुत्र नदी पर नए-नए बाँध बना रहा है; जिससे आने वाले समय में नीचे भारत

में पानी आना ही बंद हो जाएगा और इस नदी और देश में जलसमस्या विकट रूप ले लेगी। एक सेवानिवृत्त सैन्य अधिकारी हैं; जो अपनी सीमा में चीन की ही हर रोज़ की घुसपैठ और कब्ज़ा करने की धमकियों के बावजूद सरकार की लापरवाही से बेज़ार हैं। एक विचारक हैं, जो कहते हैं विश्व में अमीर और ज़्यादा अमीर, और ग़रीब और ज़्यादा ग़रीब क्यों होता जा रहा है, ग़रीब अमीर और अमीर ग़रीब क्यों नहीं होता? दर्शनशास्त्र और धर्मशास्त्र के दो प्रोफ़ेसर और एक संत हैं जो हिंस बोसोन की खोज के बाद इसलिए परेशान हैं कि सैद्धांतिक भौतिकविज्ञानी यह सिद्ध करने पर तुले हुए हैं कि सृष्टि की रचना स्वयं ही हो गई, इसमें किसी ब्रह्मतत्त्व का कोई हस्तक्षेप नहीं; लेकिन ठीक इसके विपरीत दूसरे चिन्तक हैं। जिन्हें भारत में डाँवाडोल अर्थव्यवस्था, बढ़ती आबादी, धर्मों और मतों की भिन्नता, फैलते भ्रष्टाचार, राजनैतिक अस्थिरता, टू-जी और कोयला आवंटन घोटाला, रेतमाफ़िया तंत्र, प्रशासनिक गतिरोध वगैरह के होते हुए भी भारत के लगातार स्थिरता से अपने आप चलते जाने के कारण शक है कि कोई ईश्वर नाम का तत्त्व ज़रूर होता होगा। एक आई.टी. कंपनी के प्रशासक को आशंकाजन्य पीड़ा है कि दूसरी बार राष्ट्रपति बनने के बाद ओबामा कहीं भारतीय कंपनियों को आउटसोर्सिंग ही बंद न कर दें। एक संगीतज्ञ हैं, जिन्हें इस बात पर सख्त ऐतराज और पीड़ा है कि शास्त्रीय संगीत की शुद्धता अच्छे अच्छे कलाकारों द्वारा लोकप्रियता के चक्कर में विदेशियों के साथ फ्यूजन करने में लुप्त होती जा रही है.....और भी बहुत से लोग हैं।

उन सभी की पीड़ा धीरे धीरे मुझमें भी समाने लगती है। घूमने के बाद जब घर लौटता हूँ तो मैं भी शरीर से पीड़ित लगता हूँ और मन से व्यथित। इस स्थिति में उपनिषदों की शिक्षा याद आने लगती है- 'मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः।' सोचने लगता हूँ मुझे किसी की कोई बात मन से नहीं लगानी चाहिए, वर्ना उसी से मैं भी पीड़ाग्रस्त हो जाता हूँ। बात तो सही है, पर मन को तो बड़े बड़े ऋषि-मुनि ही बस में कर सकते हैं, हालाँकि वे लोग भी स्थान और समय के अनुसार कभी-कभी मन को वश में रखने के नियमों में ढील दे देते थे। एकान्त में घनघोर तपस्या के वक्रत अचानक जिस तरह की आनंददायक परिस्थिति ऋषि विश्वामित्र

के सामने आई, उसमें तपस्या-भंग के कारण मेनका पर क्रोध की बजाय उन्होंने वही किया जो एक सच्चे महापुरुष को करना चाहिए। मैं तो इतना भाग्यशाली भी नहीं हूँ कि इस तरह की परिस्थितियाँ मेरे सामने आएँ। और फिर मैं उस तरह की तपस्या भी तो नहीं करता। इसीलिए अब मन को चिकने घड़े की श्रेणी में लाने के लिए प्रयासरत हूँ। डाक्टरों के भी सम्पर्क में हूँ यह जानने के लिए कि क्या दोनों कानों के बीच शब्दों के आवागमन के लिए, यानी दूसरे कान से गमन के लिए, कोई सुरंग बन सकती है। इससे पार्क में जाना कम कष्टप्रद हो जाएगा। हो सकता है इसमें कुछ वक्रत लग जाय।

लेकिन इस समय मुझे पीड़ा है कि कल सुबह फिर पार्क में घूमने के लिए जाना है।



लघुकथा

महानगर का प्रेम-संवाद

मधुदीप

“हेलो अर्ची...!”

‘हाय विभु ! कैसे हो...!’

‘ठीक हूँ, कल तुम आई नहीं...आई वेट यू लॉट...’

‘हाँ यार ! मैं विक्की के साथ मूवी देखने चली गई थी...’

‘हूँ...’

‘क्या सोच रहे हो, बोर हुए तुम...?’

‘ऑफ़ कोर्स नो ! सिम्मी मिल गई थी, मैं उसके साथ आउटिंग पर निकल गया...’

‘व्हाट...तुम ऐसा कैसे कर सकते हो...!’

‘क्यों...’

‘कुछ नहीं...चलो छोड़ो...’

‘चलो छोड़ दिया...’

‘कभी तो सीरियस हुआ करो...!’

‘हो गया, अब बोलो...’

‘मुझसे शादी करोगे...?’

‘शिट ! क्या हम बूढ़े हो रहे हैं...?’





बी-१९ एफ, दिल्ली पुलिस अपार्टमेंट्स,

मयूर विहार फेज-१, दिल्ली-११००९१

मो०-९८९१३४९०५८

agrawalsadhna2000@gmail.com

कहानी क्या, कहना चाहिए कि साहित्य की असली ज़मीन हमारा जीवन होता है। यही साहित्य अनेक अनुभवों से निःसृत होकर हमारे जीवन को भी गहराई से प्रभावित करता है। बल्कि यह कहना ज्यादा सही होगा कि धीरे-धीरे हमारी मरती हुई संवेदना को पुनर्जीवित करते हुए हमें मनुष्य बनाता है। कभी आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कथा साहित्य में यथार्थ के आतंक की चर्चा की थी। हिन्दी साहित्य में यथार्थवाद को लेकर अनेक भ्रम और भ्रांतियाँ फैली हुई हैं; लेकिन अच्छी बात यह है कि अब धुंध छट गई है और कथा साहित्य से यथार्थ का मुलम्मा उतर गया है। वर्षों पूर्व रवीन्द्र कालिया द्वारा संपादित 'वागर्थ' का दिसम्बर, २००५ अंक युवा पीढ़ी विशेषांक था, जिसमें पत्रिका में प्रकाशित कहानियों पर काशीनाथ सिंह का लेख 'यथार्थ का मुक्ति संघर्ष: नई सदी की कहानी' में उन्होंने लिखा था, 'कहानी को यदि जीवित और आकर्षक बनाए रखना है, तो यथार्थ से मुक्ति हमारी रचनात्मक आवश्यकता है। हम यह मानकर चलें कि यथार्थ कहानी नहीं होता, कहानी में यथार्थ होता है। यथार्थ से छेड़छाड़ के बिना गद्य तो संभव है, गल्प नहीं।'

प्रवासी लेखिकाओं में सबसे महत्वपूर्ण उपा प्रियंवदा हैं; लेकिन उस अर्थ में उन्हें प्रवासी नहीं कहा जा सकता; क्योंकि साहित्य में उनकी पहचान 'पचपन खंभे और लाल दीवारें', 'शेष यात्रा', 'रुकोगी नहीं राधिका' जैसे उपन्यास तथा 'वापसी' जैसी कालजयी कहानी से अमेरिका में बसने से पूर्व बन चुकी थी; लेकिन अन्य प्रवासी लेखिकाओं

की पहचान उस तरह नहीं बनी। अधिकतर प्रवासी लेखिकाओं की रचनाओं के केन्द्र में एक ओर पीछे छोटे हुए अतीत की स्मृतियाँ हैं, तो दूसरी ओर बिल्कुल अलग तरह का समाज, उसकी संस्कृति और व्यावहारिक दिक्कतें हैं, छोटी-बड़ी समस्याएँ तो हैं ही। फिर प्रवासी देश के लोगों की मानसिकता है; जिसमें रचने-बसने में समय लगता है। चूँकि हम अपने को मूलतः बदल नहीं सकते; इसलिए भी नए यथार्थ से हमारी टकराहट होती रहती है। दूसरी बात यह भी है कि यह टकराहट दो स्तरों पर होती है—एक मानसिक स्तर पर और दूसरे पारिवारिक स्तर पर। दिव्या माथुर का लेखन काल बहुत अधिक नहीं है। कविता से अपना लेखन आरंभ कर वे कहानी की ओर मुड़ी। अब तक उनके दो-तीन कहानी संग्रह प्रकाशित हुए हैं; जिनमें 'नीली डायरी' कहानी बेहद चर्चित रही है। उस पर गार्बियल गार्सिया मार्खेज के प्रसिद्ध उपन्यास 'द मेलन कली ह्वेस' का अप्रत्यक्ष प्रभाव का आरोप है; क्योंकि इस उपन्यास में औरतों से उनके शारीरिक संबंध की तिथियाँ दर्ज हैं। 'वर्तमान साहित्य' के 'प्रवासी साहित्य महाविशेषांक-१' में दिव्या माथुर ने अपनी रचना प्रक्रिया के बारे में लिखा है, '७० के दशक में 'नवभारत टाइम्स' ने एक के बाद एक मेरी दो कहानियाँ छपाँ। बहुत से लोगों को लगा कि मैं उनकी पोल खोल रही थी; जबकि मैंने किसी को अपनी कहानी का आधार कभी नहीं बनाया। खैर तभी मुझे एक फिल्म के सिलसिले में भारत छोड़ कर डेनमार्क जाना पड़ा। फिल्म तो नहीं बनी; पर वहाँ से मैं लंदन आ गई और यहीं बस गई। पश्चिम में कमाना और दो बच्चों की अकेले परवरिश करना एक ऐसा संघर्ष था; जिससे जूझते दस वर्ष तो यूँ गुजर गए जैसे कैलेंडर पर तारीखें भाग रही हों। १९८९ में मैंने फिर से कविताएँ लिखना शुरू किया; क्योंकि कहानी लिखने के लिए समय तब भी नहीं मिल रहा था।' इस तरह दिव्या माथुर लेखन की ओर प्रवृत्त हुई प्रवासी साहित्य पर केन्द्रित पत्रिकाओं के अनेक विशेषांकों में उनकी अनेक कहानियाँ प्रकाशित हुई हैं; जिनकी छिटपुट चर्चा भी हुई है। 'नया ज्ञानोदय' में पूर्व प्रकाशित दिव्या माथुर की

कहानी 'पंगा' को 'बेस्ट ऑफ़ नया ज्ञानोदय' के उपहार अंक जनवरी २०१२ में पुनर्प्रकाशित किया गया है। एक बहुत छोटे से कथ्य पर टिकी यह कहानी लंदन के ट्रैफिक जाम में फँसी रहती है, सरकती बहुत कम है। लंदन में बसा भारतीय मूल का एक छोटा परिवार है; जिसमें एक औरत पन्ना है तथा उसका बेटा आदित्य एवं बहू आशिमा है। इस कहानी के केन्द्र में पतझर, ट्रैफिक जाम और अस्पताल है। यद्यपि कहानी में कारों की नंबर प्लेट खूब चमकती हैं; लेकिन बुरी तरह से ट्रैफिक जाम में फँसी कारें धीरे-धीरे सरकती हैं। कहानी के बीच में प्रलेश बैंक की तरह घर-परिवार की स्मृतियाँ जब-तब उभरती हैं। इस कहानी में जो नयापन है, वह है कहानी का शिल्प और कथ्य। कार के नम्बर प्लेट से शब्द की रचना और उस शब्द से उसके ड्राइवर या मालिक के रूप-रंग, चरित्र और उसकी मानसिकता का वर्णन करना।

कहानी का आरंभ भी कार से होता है—'एक नई नवेली दुल्हन—सी एक बी एम डब्ल्यू पन्ना के पीछे लहराती हुई—सी चली आ रही थी, जैसे दुनिया से बेखबर एक शराबी अपनी ही धुन में चला जा रहा हो या कि जीवन से ऊबकर किसी चालक ने स्टीरिंग व्हील को उसकी मर्जी पर छोड़ दिया हो। उसकी कार का नंबर था 'आर ४ जी एच यू', जो पढ़ने में 'रघु' जैसा दिखता था। 'स्टुपिड इंडियट' कहते हुए पन्ना चौकन्नी हो गई। 'रघु' साहब कहीं उसका राम नाम ही न सत्य कर दें। दुर्घटना की संभावना को कम करने के लिए पन्ना ने अपनी कार की गति धीमी कर ली और अपने बीच के फासले को बढ़ा लिया। 'आपने देखा कि 'आर ४ जी एच यू' से 'रघु' कैसे बना। अस्पताल जाती हुई ट्रैफिकजाम में फँसी पन्ना का ध्यान अगली कार की नम्बर प्लेट पर जाता है और खिलदंडे अंदाज में पन्ना उस नम्बर प्लेट से छेड़छाड़ करती हुई पहली नजर में अक्षरों और अंकों की परछाई से शब्द बनने का जो आभास होता है, से शब्द बनाती है। पन्ना चली तो है अस्पताल जाने के लिए मगर ट्रैफिक जाम में बुरी तरह फँसी हुई है। उसे डर है कि ठीक समय पर वह अस्पताल नहीं पहुँच सकेगी।

किन्तु अस्पताल समय पर नहीं पहुँची तो पन्ना को दूसरा एपाइंटमेंट न जाने कब मिले। उसके माथे के बीचों-बीच एक गिल्टी निकल आई है, जिसे लोगों से छिपाना नामुमकिन है। जो भी देखता है, अपनी राय देने से नहीं चूकता, 'पन्ना, सब काम छोड़कर इसकी जाँच करवा लो। हो सकता है कुछ भी न हो, बट....' इस 'बट' से वह स्वयं भी परेशान रहती है। डॉक्टर बड़ी मुश्किल से उसे विशेषज्ञ के पास भेजने को राजी हुआ था।

लंदन की सड़कों पर ट्रैफिक जाम का आलम यह है कि रोडवेज की घटनाएँ प्रायः घटती रहती हैं। एक्सीडेंट भी होता है और ट्रैफिक नियम का उल्लंघन करने पर काफ़ी भारी जुर्माना भरना पड़ता है पाउंड में, यह अलग मुसीबत है। लेकिन काम की हड़बड़ी में कारों के ड्राइवर एक-दूसरे को गालियाँ देते आगे बढ़ते रहते हैं। भारत से लंदन की ट्रैफिक स्थिति थोड़ी भिन्न है। एक ही सड़क पर ऑटोमैटिक और मैनुअल दोनों कारें चलती हैं। पन्ना कार चला रही है। बहू आशिमा का मानना है कि पन्ना के 'मूड' खराब रहने का कारण उसका लंदन में ड्राइविंग करना है। पन्ना को डबलरोटी भी खरीदनी हो तो वह कार में ही जाती है और क्यों न जाए, इंग्लैंड में ड्राइविंग टेस्ट पास करना कोई मजाक नहीं है, वो भी पहली बार में। आदित्य और आशिमा दोनों ही तीन बार में जाकर पास हुए थे।

कहानी में एक प्रसंग है कि बेटा आदित्य पन्ना के साथ कार में दफ़्तर जाता है और आदित्य ने एक खेल ईजाद किया था, जिसमें अपने आसपास की कारों की नेमप्लेटों के शब्दों और अंकों को जोड़कर शब्द बनाने होते थे। कई अंकों का स्वरूप अक्षरों जैसा होता है; इसलिए उनका उपयोग अक्षरों की तरह किया जा सकता है। जैसे कि चार का अंक 'ए' जैसा लगता है, पाँच 'एस' जैसा और छः 'ई' जैसा दिखता है। वैसे भी तो मनुष्य का दिमाग भी क्या-क्या गुल खिलाता है। इस तरह पन्ना 'एल ६ जे आई ८' से (लिजिट), 'पी ४ जीएलए' से (पगला), 'बी १४ आर एल ए' से (बिरला), 'पी ६ एन ई एस' से (पीनस), 'सी ११ एम ए एन' से (चमन), 'पी ८ डब्ल्यू ई आर' से (पाँवर), '५ वन आर' से (सर), 'डी ४ एन टी ई' से (डॉटे), 'के ए ३० एफ आ आर' से (काफिर) आदि मजेदार शब्द बनाती है।

इस कहानी को पढ़कर लगता है कि लंदन की

सड़कों की हालत भारत की सड़कों जैसी ही है। सड़कें संकीर्ण तथा गलियाँ तंग हैं। यही नहीं, सड़कों पर जहाँ-तहाँ गड्डे भी हैं। स्पष्टतः यह भ्रष्टाचार का नमूना है; क्योंकि लोग इन्हीं गड्डों के बहाने काउंसिल से काफ़ी पैसा ऐंठते हैं। गड्डे के कारण हुए अपने पहिए के नुकसान को पूरा करने के लिए वह भी काउंसिल को लिखेगी। पहिया तो किसी तरह निकल गया किन्तु पन्ना की बड़बड़ जारी थी, 'जो सरकार लंदन का परिवहन नहीं सँभाल पा रही वो ओलम्पिक्स का ट्रैफिक कैसे सँभाल पाएगी। जिधर जाओ सड़कें खुदी पड़ी हैं और कारीगर नदारद।'

इंग्लैंड जैसे देश को बहुत सभ्य और शिक्षित समझा जाता है; लेकिन उसकी मानसिकता एक बहुत पिछड़े देश जैसी है और भ्रष्टाचार भारत से कम नहीं है। भारत पर जब ईस्ट इंडिया कंपनी का राज था तो भ्रष्टाचार को लेकर वारेन हेस्टिंग्स पर लंदन में महाभियोग चलाया गया था; क्योंकि अवध को लूटकर उसने काफ़ी पैसा कमाया था। ऐसा लगता है कि वहाँ अब भी भ्रष्टाचार कम नहीं है।

ट्रैफिकजाम में फँसी हुई पन्ना अपनी कार से आगे जाने वाली हर कार की नंबर प्लेट पर तो ध्यान रखती ही है; बल्कि अपनी सैंकेड क्लास फिएट से तेज रफ़्तार से गुजरती दूसरी कार का मुकाबला करने की कोशिश भी करती है। 'हाउ डेयर ! सरकारी स्कूल से पढ़ी एक मिडिल क्लास की मिडिल एजेड अवकाश प्राप्त अध्यापिका, जिसने एक मिडिल क्लास सरकारी नौकर से विवाह किया, दो बच्चे पैदा किए; जो उसे जब-तब सुनाने में संकोच तक नहीं करते कि वे पैदा हुए कि उन्हें अपनी सेक्स की भूख बुझानी थी, जिसका पति अब एक जवान पड़ोसन के साथ खुल्लम-खुल्ला रहने लगा था, जिस औरत ने बच्चों को वे सब सुविधाएँ दीं, जो वह स्वयं कभी भोग नहीं पाई, जो तीन कमरों के मकान में अकेली रह रही है, रिटायर होने के बाद जिसे पेंशन के अतिरिक्त यातायात पास, स्वास्थ्य सम्बन्धी सुविधाएँ मुफ्त में मिलने लगी हैं, बच्चों को अब जिसकी आवश्यकता नहीं रही; जो समय बिताने के लिए एक चैरिटी के लिए काम करती है और सोचती है कि इस जीवन का औचित्य आखिर है क्या !' पन्ना की दो सहेलियाँ भी हैं-पुष्पा और चाँदनी, जिनसे वह अपने सुख-दुख बाँट लिया करती है।

ट्रैफिक जाम में फँसी पन्ना के 'के ए ३० एफ

आ आर' (काफिर)मानो हाथ धोकर उसके पीछे ही पड़ गए थे, जिसमें तीन अफ्रीकन युवक और एक युवती बैठे थे, जो बेकार में मुस्कराए जा रहे थे। शायद सभी पिए हुए थे। गोरों से अधिक पन्ना को सदा अफ्रीकंस से अधिक भय लगता है। ऊपर से गाड़ी का पेट्रोल खत्म होने जा रहा था। उसे डर लग रहा था कि यदि वह काफिर की पकड़ में आ गई तो उसका भगवान ही मालिक था। उसने सुना था कि अफ्रीकन और गोरें गुंडे एशियन, विशेषतः भारतीय महिलाओं को लूटना आसान समझते हैं। तभी एक रोल्लज रॉयस ने ओवरटेक किया, जिसका नंबर था वी १ पी वी टी (वेरी प्राइवेट)। पन्ना ने सोचा कि यह कार अवश्य किसी बड़े आदमी की होगी। यदि इसका ध्यान आकर्षित किया जाए तो अवश्य बचा जा सकता है; किन्तु इस कार के मालिक से पंगा लेना महँगा भी पड़ सकता था। लेकिन यहाँ भी मनुष्यता बची हुई है और वेरी प्राइवेट पन्ना की मदद करता है और सांत्वना देता पन्ना से पूछता है, 'हे लेडी, आर यू आल राइट?' इस तरह इस कहानी का अंत होता है।

दरअसल यह कहानी लंदन के ट्रैफिक जाम में फँसी कार की तरह ठहरी हुई है। कहानी इतना धीरे-धीरे आगे बढ़ती है कि पाठक में ऊब पैदा होने लगती है। आखिर पाठक को कोई कब तक नंबर प्लेट से बनाए गए शब्दों से खिलवाड़ करता बहलाता रहेगा। ऐसा लगता है कि पन्ना महीनों क्या वर्षों से ट्रैफिकजाम में फँसी हुई है। निकली तो थी वह अस्पताल जाने के लिए लेकिन न अस्पताल पहुँचती है और न घर। लौटती है, बस ट्रैफिक जाम में अटकी रहती है। लेकिन एक बात पर गौर करने की ज़रूरत है कि इस कहानी में कोई ऐसा बिंदु है, जिस पर ध्यान देने की ज़रूरत है। कहानी का कथ्य छोट है; लेकिन उसमें एक नयापन अवश्य है। दूसरी बात जो पाठकों को चौंकाती है, वह यह है कि लंदन के प्रति हमारे मन में जो एक सम्मोहन है, उसको एक झटके के साथ यह कहानी चकनाचूर कर देती है। वस्तुतः इस कहानी का यथार्थ लंदन की सड़कों पर ट्रैफिक जाम में फँसे लोगों की भयानक यंत्रणा नहीं है; बल्कि असली यथार्थ लंदन जैसे शहर की सड़कें हैं; जो भ्रष्टाचार के दलदल में फँसी हुई हैं। कहना चाहिए कि लंदन जो हमारे लिए एक मिथक है, उसका यथार्थ है यह कहानी।





टोरंटो बोर्ड में एक शिक्षिका शैली गिल की कलम ने कई वर्षों के पश्चात् आवाज़ उठाने का प्रयास किया है। कहीं न कहीं, कभी न कभी, कोई न कोई कहानी हर व्यक्ति को अपने जीवन के आस-पास के वातावरण से जोड़ती है। पहलौठी किरण में शैली गिल का प्रयास 'फॉर्दर्स डे' एकाकी जीवन में जूझ रही, अपने से जोड़ती कहानी है। संगीत में मास्टर्स डिग्री लेने के साथ-साथ शैली गिल ने आल इंडिया रेडियो पर संगीत और नाटकों में भी भाग लिया।
ssrgill@yahoo.com

जॉन आज सुबह से ही उत्तेजित थे कि आज फॉर्दर्स डे है और उन की बेटियाँ उनसे मिलने सीनियर होम में आने वाली हैं। सुबह-सुबह ही नर्स से कहकर नहा-धो कर, नाश्ता लेकर अपने कमरे की बालकनी में बैठ गए। वह हर आने-जाने वाले को देख रहे थे। लोग फूल, चॉकलेट, खाना और तरह-तरह के तोहफे ले कर आ रहे थे। कुछ लोगों के बच्चों के हाथ में विडियो गेम था या फ़ोन पर ही गेम खेलते हुए चल रहे थे और उनके माता-पिता उन्हें कह रहे थे कि साल में एक या दो बार अवश्य अपने ग्रैंड पेरेंट्स से मिलने आया करें। सीनियर होम के बाहर फूलों की दुकान खूब चल निकली थी और मुँह माँगे दाम पर फूल बिक रहे थे।

जॉन को अपनी ज़िंदगी के बीते वर्ष एक फ़िल्म की तरह याद आने लगे। ३० वर्ष पूर्व जब मारिया उन्हें सदा के लिए अकेला छोड़ कर चली गई थी। दुनिया के लाख कहने पर भी उन्होंने जीवन में मरिया के अलावा किसी को भी जगह नहीं दी थी। छोटी-छोटी दो परियों के साथ पूरी ज़िन्दगी गुजारने का फैसला लिया था। दोनों को बहुत अच्छी शिक्षा दी और कियारा, उनकी बड़ी बेटी को शिकागो में नौकरी मिल गई और वह वादा करके वहाँ चली गई थी कि तीन-चार साल में वापिस आ जाएगी, परन्तु आज ग्यारह वर्ष होने पर भी वापिस नहीं आई। वहीं उसे अपना जीवन साथी मिल गया और अपने एक तीन साल के बच्चे की ज़िम्मेदारी भी सँभाल रही हैं।

उधर छोटी बेटी वनीसा कला में निपुण होने पर न्यूयॉर्क में कार्यभार सम्भाल रही थी। रह गए थे जॉन अकेले। वह रिटायर होने के बावजूद अपनी ज़िन्दगी में व्यस्त रहते। बाग़वानी, तैराकी और गोल्फ़ खेलना उनके मुख्य शौक थे। प्रतिदिन एक-

दो बार अपनी परियों से बात करते, और हर दो तीन महीने बाद उनकी प्रतीक्षा करते। कुछ समय तक सब कुछ ठीक-ठाक चलता रहा। एक दिन अचानक रक्त चाप के अधिक हो जाने से जॉन को दिल का दौरा पड़ा। वह उसी समय ९११ बुला कर हॉस्पिटल गए। दोनों बेटियाँ दौड़ी चली आईं कुछ दिनों बाद ही उन्हें हॉस्पिटल से छुट्टी मिल गई। दो दिन बाद ही सूप पिलाते हुए कियारा ने उन्हें कहा कि उसे आज वापिस जाना होगा। जॉन ने सोचा, चलो एक बेटी तो उनके पास थी ही। फिर जब जॉन थोड़ा-थोड़ा चलने लगे तो छोटी बेटी को भी उन्होंने भीगी पलकों से विदाई दे दी। वह उसे हिदायत देना भी नहीं भूले कि अपने खाने-पीने का ध्यान रखे और उन्हें जाते ही फ़ोन करे। धीरे-धीरे उन्हें अपना एकाकीपन कचोटने लगा और उन्हें बेटियों की याद आने लगी। लेकिन बेटियाँ तो अपनी-अपनी ज़िन्दगी में व्यस्त हो गईं एक दिन ऐसा आ गया कि उन्हें अपने काम करने में भी परेशानी होने लगी। उन्हें शारीरिक, मानसिक और आत्मिक रूप से कमज़ोरी महसूस होने लगी। उन्होंने अपनी दोनों बेटियों को बुलाया और अपनी समस्या बताई ;लेकिन दोनों ने ही वापिस आने से इंकार कर दिया।

जब कोई विकल्प नहीं रहा तो जॉन सीनियर होम में आ गए और यहाँ आ कर उन्हें नए साथी मिले, कुछ अत्यधिक क्षीण थे, कुछ अपनी यादाश्त खो चुके थे और कुछ अपनी ज़िन्दगी के दिनों की उल्टी गिनती गिन रहे थे। शुरु-शुरु में दोनों बेटियाँ हर महीने बाद आती और अपने पिता के साथ समय बिताती। धीरे-धीरे यह अंतराल बढ़ता गया और उनका आना वर्ष में दो बार से एक बार बस फॉर्दर्स डे पर हो गया। अब हालत यह है कि दोनों में से एक ही बेटी आती है और दूसरी फ़ोन पर बात

कर लेती है।

आज सुबह से न तो दोनों का फ़ोन आया और न ही वे आईं। जॉन को ऐसा आभास हो रहा था कि आज दोनों ही आ कर उन्हें खुश कर देंगी। दोपहर का एक बज गया। नर्स खाना ले कर आई और उन्होंने यहकर लौटा दिया कि आज तो वे अपने बच्चों के साथ ही खाना खाएँगे। ४ बजे के करीब उनके फ़ोन की घंटी बजी; जिसे उन्होंने लपककर उठाया। फ़ोन उन की छोटी बेटी का था और उसने कहा कि वह आ नहीं पाएगी और उसने उन्हें शुभकामनाएँ दीं। जॉन कुछ पल ही बात कर सके, उनसे अधिक बात हुई नहीं। उसी समय कियारा का फ़ोन आया और छूटते ही कहने लगी कि वह क्षमा चाहती है कि वह फूल नहीं भेज पाई उसने यह भी कहा कि वह फॉर्दर्स डे का तोहफ़ा उन्हें मिलने पर दे देगी।

जॉन ने सोचा कि ये वही बच्चियाँ हैं; जो अपने नन्हें-नन्हें हाथों से कार्ड बना कर, छोटे-छोटे ग्लासों में पौधे उगाकर, छोटे-छोटे पुराने छल्ले और टूटे हुए पैन् के तोहफ़े उन्हें दिया करती थीं। सुबह सुबह नाश्ता बना कर गले में बाँहें डालकर अपनी मीठी आवाज़ में कहती थीं, 'हैप्पी फॉर्दर्स डे', सोचते-सोचते जॉन की आँखों में आँसू आ गए। वह बालकनी से उठे और आकर अपने बिस्तर में लेट गए और अपने विचारों में खो गए। तभी दरवाज़े पर दस्तक हुई और एक आवाज़ आई, 'हैप्पी फॉर्दर्स डे', यह आवाज़ थी कायल की। कायल एक ऐसा नवयुवक था जो सीनियर होम में वालंटियर था। वह एक यूनिवर्सिटी का छात्र था और यहाँ सप्ताह में दो-तीन बार अवश्य आता था और जॉन का खूब मन बहलाता था। कायल ने जॉन को फूल दिए और एक कॉफ़ी का प्याला दिया। उसे यह भी याद था कि वह कैसी कॉफ़ी पीते हैं। वह उन की मनपसंद फ्रैंच वनीला लाया था। जॉन ने उसे बहुत आशीर्वाद दिया।

उसके जाने के बाद सोच ने उन्हें अपने वश में कर लिया। उन्हें याद आया कि उन्होंने कहीं पढ़ा था कि 'अपने माँ-बाप को अकेले सीनियर होम में छोड़ने से पहले यह सोचना चाहिए कि यदि माँ-बाप ने अपने बच्चों को पैदा होते ही अनाथ आश्रम में छोड़ दिया होता तो क्या होता।'

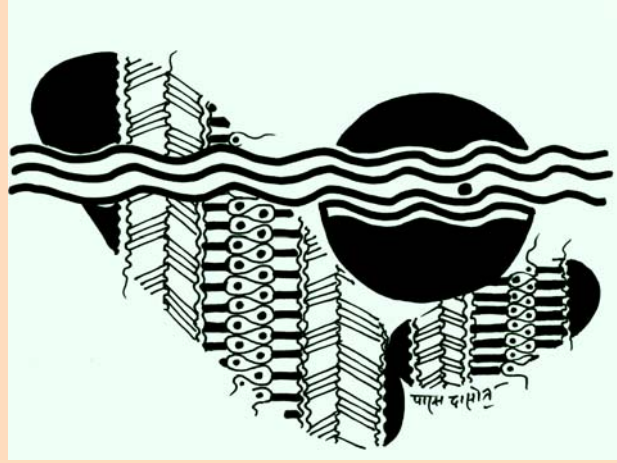
यह सोच कर जॉन ने कमरे की बत्ती बुझा दी।



लघुकथा

बचा लो उसे

डॉ. पूरन सिंह



पूरे दिन डेलीगेट्स के साथ डील करते-करते थककर चूर हो गया था मैं। होटल के अपने कमरे में आया तो आते ही कम्पनी के मैनेजर को फ़ोन कर दिया, 'डील फ़ाइनल करो ! मेरे पास ज़्यादा समय नहीं है !'

ठीक बीस मिनट बाद एक बेहद सुन्दर-सी लड़की मेरे कमरे में थी। उसने मेरी तरफ़ देखा और नज़रें झुका लीं। बिना कुछ कहे-सुने ही एक-एक कर काँपते हाथों से अपने कपड़े उतार कर बेड पर रखने लगी।

मैं एकदम भौंचक! अच्छा ये लोग इस हद तक उतर आए! रिश्तत की पेशकश टुक़राने पर यहाँ तक पहुँच गए!

मुझे अच्छा नहीं लगा। मैंने नोटों की गड्डी निकाल कर टेबुल पर रख दी और कहा, 'पैसे ले लो, कपड़े पहनो और जाओ।' उसने कपड़े पहने और बिना पैसे लिये ही चल दी तो मैंने उसे रोकते हुए पूछा, 'आपने पैसे नहीं लिये।'

'आपने जो किया ही नहीं उसके पैसे कैसे....।' फिर एक पल रुककर बोली, 'मैं बेईमान नहीं हूँ, लेकिन.....।' और फिर चलने लगी थी।

'लेकिन का क्या मतलब'-अनायास ही मेरे मुँह से निकल गया था।

'मेरे भाई का आज ऑपरेशन हैउसका मेरे सिवाय इस दुनिया में कोई नहीं है... उसके लिए पैसे चाहिए। ऑपरेशन न हुआ तो वह। आपनेठीक.... नहीं.... कि.....या।' उसकी

पलकें भीग रही थीं।

'ऑपरेशन कौन से हॉस्पिटल में है ? क्या नाम है आपके भाई का ?'

'लाइफ़ सेवर हॉस्पिटल में। मेरा भइया रकेश।' उसने कहा और हवा के झोंके की तरह कमरे से बाहर निकल गई थी। बाद में, वह हॉस्पिटल पहुँची। डॉक्टर के पास गई और फूट-फूटकर रो पड़ी थी, 'डॉक्टर साहब ! मैं पैसे का इंतजाम नहीं कर पाई.....डॉक्टर, मेरा भाई.... मेरा भाई।'

'रोते नहीं बेटा आपके भाई का ऑपरेशन चल रहा है। पूरा पेमेंट तो आपके मित्र ने कर दिया भई मान गएआज के जमाने में ऐसे लोग भी हैं..... आप बहुत खुशनसीब हैं जो आपको इतना अच्छा मित्र मिला।' डॉक्टर तो न जाने और क्या-क्या कहता रहता कि उसने रोक दिया था, 'कौन है वह ?'

'वहाँ.....वहाँ बैठा है वह।' मेरी ओर इशारा करके डॉक्टर चला गया था।

वह भागकर ऑपरेशन थियेटर के पास बने प्रतीक्षा-कक्ष में आ गई थी। उसने मुझे देखा और मुझसे लिपट गई थी। उसके होंठ कँपकँपाए थे, 'आपने एक औरत को वेश्या बनने से बचा लिया।.....मैं आपका यह.....ए ह...सा.....न।'

मैंने उसके होंठों पर हाथ रख दिया था। अपने-अपने पेशेंट के ठीक होने की आस लगाए बैठे लोग हम दोनों को देखे चले जा रहे थे।





हिन्दी की सुपरिचित कवयित्री शशि पाधा के पति मिलिट्री में थे अतः संस्मरण मिलिट्री जीवन की झलकियाँ प्रस्तुत करते हैं। संस्मरणों की पुस्तक प्रकाशन के लिए तैयार है। वेब पत्रिकाओं और दैनिक समाचार पत्रों में रचनाएँ प्रकाशित हुई हैं। 'पहली किरण', 'मनस मंथन', 'अनंत की ओर' कविता संग्रह हैं। अमेरिका में रहती हैं और मुक्त लेखन में संलग्न हैं।

10804, Sunset Hills Rd,
Reston, VA 20190
shashipadha@gmail.com

किसी भी समाज में सामाजिक प्रथाओं का अपना विशेष महत्त्व तथा तात्पर्य होता है। किसी न किसी विशेष कारणों से समाज के बुजुर्ग वर्ग ने इन प्रथाओं को बनाया होगा; ताकि घर, गाँव और फिर देश में एकता, शान्ति एवं सौहार्द की भावना बनी रहे। ये प्रथाएँ देश, काल एवं परिस्थिति के अनुसार बनती और बदलती रहती हैं। किन्तु ऐसा देखा गया है कि समय के साथ-साथ इन सामाजिक प्रथाओं का कहीं-कहीं दुरुपयोग भी होने लगा है।

अधिकतर ऐसी प्रथाओं का केंद्र बिन्दु नारी ही होता है। राजस्थान में सती प्रथा के चलन से बहुत सी मासूम विधवाओं को अपने पति की चिता पर बैठ कर भस्म होने के लिए बाध्य करने के कितने ही दिल दहलाने वाले दृष्टान्त मिलते हैं। वे अभागिन स्त्री अपने पति की मृत्यु से इतनी दुःखी होती है कि उसे उस समय अपने प्रिय के साथ भस्म होने के सिवाय शायद कुछ और सूझता ही नहीं है। और फिर गाँव के गाँव इस अवसर पर एकत्र होकर इसे धार्मिक रूप दे देते हैं। ऐसी कुरीतियों के कारण एक असहाय नारी को असमय ही मृत्यु की गोद में

झोंक दिया जाता है।

अगर आप मथुरा-वृन्दावन गए होंगे तो वहाँ मन्दिरों के आस-पास की गलियों में सैंकड़ों विधवाओं कोसिर मुँडवाए; जीर्ण-शीर्ण-सी सफेद साड़ी पहने, हाथ में भिक्षा का कटोरा लिये बैठे देखा होगा। कहते हैं कि इन भोली-भाली स्त्रियों को तीर्थ यात्रा के बहाने यहाँ पर छोड़ दिया जाता है और फिर ये कभी भी अपने घर लौटकर नहीं जा सकतीं। इन पर यह अन्याय केवल इसलिए होता है कि उनका परिवार उन्हें बोझ मानने लगता है। क्या यह उन नारियों के साथ घोर अन्याय नहीं? यहाँ तक कि उस स्त्री के माता-पिता भी उसे अपने घर में आश्रय देने के लिए तैयार नहीं होते।

उत्तरी भारत के पंजाब और हरियाणा प्रान्तों में विधवा के पुनर्विवाह से सम्बन्धित एक सामाजिक प्रथा है जिसे 'चादर ओढ़ाने' के नाम से जाना जाता है। जब किसी परिवार में कोई स्त्री विधवा हो जाती है तो कई ग्रामीण परिवारों में उसके पति की मृत्यु की तेहरवीं पर या छमाही के अवसर पर उस विधवा के ऊपर उसके दिवंगत पति के परिवार से या तो बड़े भाई द्वारा या छोटे भाई द्वारा चादर ओढ़ाई जाती है। इस रीति के बाद वह उसकी ब्याहता स्त्री हो जाती है। पंजाब और हरियाणा दोनों कृषि प्रधान प्रान्त हैं। जमीन ही इनकी सम्पदा है और इस सम्पदा को सुरक्षित रखने के लिए यहाँ के लोग कुछ भी कर सकते हैं। शायद अपनी जमीन को अपने ही परिवार में सुरक्षित रखने के लिए पुनर्विवाह की यह रीत निभाई जाती है, ताकि उस मृतक के हिस्से की जमीन-जायदाद अपने घर में ही रहे। विडम्बना यह है कि चाहे उस विधवा की सहमति हो या ना हो, चाहे चादर ओढ़ाने वाला देवर या जेट पहले से ही विवाहित हो और बाल-बच्चों वाला हो, या विधवा की आयु से दुगुना हो, इन संवेदनशील बातों की परवाह न करते हुए भी परिवार की विधवा को यह रस्म पूर्ति के लिए बाध्य किया जाता है।

पुनर्विवाह होना तो किसी भी समाज की प्रगति का द्योतक है, किन्तु इसे किसी भी विधवा की सहमति के बिना उस पर थोपा जाना नारी का शोषण है, अन्याय है। कौन जाने जिस शादी शुदा

सदस्य के साथ उसे बाँधा जा रहा है, उसकी स्त्री उसे स्वीकार करे या ना करे? कौन जाने वो उस घर में एककेवल सहायता करने वाले प्राणी (नौकर) की तरह ही रहे? ऐसे बहुत से दृष्टान्त मिलते हैं जब ऐसी स्त्रियों के साथ बहुत दुर्व्यवहार होता है। किन्तु गाँव पंचायतें इस विषय में चुप्पी साधे बैठी रहती हैं या ऐसी रस्म निभाने के लिए असहाय विधवा को बाध्य करती हैं। इन्हीं दो प्रान्तों के अधिकतर युवा सेना में भर्ती होते हैं और मातृभूमि की रक्षा में वीरगति को भी प्राप्त करते हैं। इन शहीदों के परिवारों से जब यूनिट के प्रतिनिधि मिलने जाते हैं, तो यह पता चलता है कि बहुत से शहीद सैनिकों की विधवाओं ने जब इस प्रथा का विरोध किया, तो उन्हें उनके परिवार, समाज से तिरस्कार ही मिला और उन्हें घर-गाँव छोड़ कर किसी अन्य स्थान पर आश्रय लेना पड़ा।

आज मैं आपको इस प्रथा से जुड़ी एक ऐसी महिला से परिचित कराती हूँ; जिसने अपने पति के सैनिक परिवार से समर्थन और सहारा पाकर इस प्रथा का विरोध किया और बड़े साहस से अपने परिवार के दबाव को टुकराया। इस तरह उस कर्मठ महिला ने मेहनत करके अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा के योग्य बनाया और स्वयं मान-आदर के साथ स्वतंत्र जीवन जीने में सफल रही। सन् 80 और नब्बे के दौरान आतंकवाद अपनी चरमसीमा पर था। उन्हीं दिनों भारत की उत्तरी सीमाओं पर कारगिल युद्ध के भयानक परिणाम स्वरूप कई वीरों के बलिदान भी हुए। ऐसे ही एक आतंकवादी हमले में सीमा पर तैनात हमारी पलटन के बहादुर सूबेदार महावीर सिंह यादव भी भारत माँ की रक्षा करते हुए शहीद हो गए। सारा देश उन वीरों के साहस और शौर्य को साक्षात् टेलीविजन पर देखता था। भावनाएँ ऐसी थीं कि भारत का जन-मानस उन वीरों के लिए कुछ भी करने को तैयार था। भारत सरकार ने भी सैनिक विधवाओं की आर्थिक सहायता हेतु प्रचुर मात्रा में धनराशि देने का निर्णय लिया, ताकि उस शहीद का परिवार इस भीषण दुःख के समय आर्थिक दृष्टि से अपने को सुरक्षित समझ सकें; किन्तु कई परिवारों में यही धनराशि

कलह, स्वार्थ और लालच का कारण बन गई। शिक्षित परिवारों में भी शहीद सैनिक के माता-पिता और पत्नी के बीच यह कलह होने लगी कि आखिर कौन इस धनराशि का सही हकदार हो सकता है। कई परिवारों में तो इस धन को धोखे से अनपढ़-मासूम विधवा से हथिया लिया गया।

बहुत से शहीद सैनिकों की पत्नियाँ कम पढ़ी लिखी होने के कारण बैंक आदि के नियमों से अपरिचित ही रहती हैं। ऐसे कई दृष्टान्त देख कर हमारी पलटन के अधिकारियों ने यह निर्णय लिया कि अगर किसी सैनिक की पत्नी अनपढ़ है, तो उसे इस धनराशि के सही उपयोग करने में सहायता दी जाए। यानी सरकार की ओर से मिली आर्थिक सहायता में मिली राशि को उस शहीद की पत्नी के नाम लम्बी अवधि के लिए फिक्स डिपॉजिट के रूप में बैंक में रखा जाए। इस निर्णय का मुख्य उद्देश्य यही था कि किसी विधवा के साथ धोखा धड़ी न हो। चूँकि शहीद की विधवाओं को पति की पेंशन भी मिलती है; अतः यह राशि केवल उसके परिवार के भविष्य में काम आने के लिए बैंक में सुरक्षित रक्खी जा सकती थी।

सूबेदार महावीर यादव के गाँव में जब हमारी यूनिट के प्रतिनिधि उनके परिवार से मिलने गये तो उनकी पत्नी ने यूनिट में हमारे पास आने की इच्छा जतलाई। वे बिलकुल अनपढ़ थी, बैंक आदि के नियमों का उसे पता नहीं था अतः यूनिट के अधिकारियों ने निर्णय लिया कि उसे यूनिट में बुलाकर ही बैंक की कारवाई से अवगत कराया जाए तथा उसके बच्चों के भविष्य को लेकर सलाह मशवरा किया जाए। मैंने उससे केवल एक बार पत्र व्यवहार किया था। मैं भी उससे मिलने को आतुर थी। मैं उसे केवल नाम से जानती थी। उसका नाम चम्पा था।

जिस दिन चम्पा अपने परिवार के साथ पहली बार यूनिट में आई, हम कुछ सैनिक पत्नियाँ छावनी में बने अतिथि गृह में उससे मिलने गई हरियाणवी पोशाक में लम्बी-दुबली वह महिला परिवार के सदस्यों से घिरी, चुपचाप-सी कमरे में बैठी थी। उसने इतना लम्बा घूँघट काढ़ा था कि मुझे समझ नहीं आ रहा था बिना उससे दृष्टि मिलाए कैसे उससे उसकी दुःख की बात करूँ। खैर, जो कुछ भी मैंने कहा, जो कुछ भी उसने सुना, हमारे बीच उसकी काली चुनरी का पर्दा बना रहा। मुझे यह

अवश्य लग रहा था कि वह रो रही थी, क्योंकि मेरे हाथ में धरे उसके हाथ काँप रहे थे। मैंने उससे बार-बार यही कहा कि वह निःसंकोच हो हमें जो भी कहना चाहती है, कहे ताकि हम हर प्रकार से उसकी सहायता कर सकें।

बातचीत के दौरान हमारी पलटन के मेजर राज ने उसे तथा उसके परिवार को बतलाना आरम्भ किया कि कैसे उसे मिली धनराशि को लम्बी अवधि के लिए बैंक में डाल दिया जाएगा; ताकि वो उस आर्थिक सहायता का भविष्य में सही उपयोग कर सकती है। इस सारी बातचीत के अंतर्गत न जानें मुझे क्यों लग रहा था कि मुझे इससे अकेले में भी बातचीत करनी चाहिए, शायद वो अपने पति के बारे में बहुत कुछ जानना चाहती हो। मैं भी सैनिक पत्नी हूँ और मैंने उस अबोली के काँपते हाथों की भाषा को पढ़ लिया था। मैंने मेजर राज से कहा, 'आप इनके परिवार के साथ बातचीत कीजिए। मैं महावीर की पत्नी के साथ दूसरे कमरे में थोड़ी देर बैठती हूँ ताकि यह घूँघट से बाहर सहज हो कर मुझसे अपना दुःख बाँट सके।'

हम दोनों साथ के कमरे में गई वहाँ बैठते ही घूँघट हटा कर, संयत हो कर उसने मुझसे बातचीत करनी आरम्भ की। मेरे यह पूछने पर कि परिवार में उसे कोई कष्ट तो नहीं, वो फूट-फूट कर रोने लगी। मैंने बड़े स्नेह से उससे कहा, 'देखो, आपके पति ने हमारी यूनिट के उच्च उद्देश्य की रक्षा करते हुए अपना जीवन दान दिया है। हम सब आपके ऋणी हैं। अब हमारा कर्तव्य है कि आपकी सहायता करें। आप निःसंकोच होकर मन की बात कहें।'

कुछ सहज हो कर उसने कहा, 'मेमसाब जी, मेरे ससुराल वाले आज से कुछ दिनों बाद ही मेरे छोटे देवर के हाथ से मुझ पर चादर डालने की रस्म की तैयारी कर रहे हैं। मेरे दो बड़े बच्चे हैं। मेरा देवर मुझसे बहुत छोटा है और पहले से ही विवाहित है। मैं आज तक उसे अपने बेटे के समान मानती रही। मैं यह बिलकुल नहीं चाहती। मुझे इस परिस्थिति से बचा लीजिए।' यह सुन कर मैं स्तब्ध रह गई। मैंने ऐसी रीति के विषय में पढ़ा-सुना ही था। आज मुझे इसके विरोध के लिए किसी नारी का साथ देना होगा!

मैंने उसका मन टटोलने के लिए पूछा, 'क्या आपके माता-पिता भी आपको बाध्य कर रहे हैं? क्या वे आपको अपने घर में कुछ दिन नहीं रख

सकते ताकि आप अपने मन की बात परिवार के सम्मुख रख सकें।'

एक ठंडी साँस लेकर बहुत ही निराश शब्दों में उसने कहा, 'यह उनकी सहमति से हो रहा है; क्योंकि हमारे समाज में यही रीत है। अगर वे इसका पालन नहीं करेंगे तो पूरे जीवन भर अपमान भोगते रहेंगे। उन्हें अपनी बिरदारी से निष्कासित कर दिया जाएगा।'

अब मेरे निर्णय लेने का समय था। मैंने उससे कहा, 'इसका एक ही रास्ता है कि आप कुछ दिन हमारी पलटन में ही रहो। हम सब आपकी सहायता करेंगे और फिर जैसा चाहोगी वैसा करेंगे।'

उसने बड़े साहस के साथ यही कहा, 'अगर आप साथ देंगी तो मैं इस परिस्थिति से लड़ने के लिए तैयार हूँ।'

कमरे से बाहर आते ही यह बात मैंने यूनिट के अधिकारियों को बताई। सब ने मिल मिला कर उसके परिवार को समझाया कि अगर वो इस रीत के लिए तैयार नहीं है, तो उसे मजबूर न किया जाए। परिवार के सदस्यों ने थोड़ा क्रोध जताया, थोड़ा अवरोध किया; किन्तु जब सब के सामने चम्पा से यह पूछा गया कि यही आपका अंतिम निर्णय है, तो उसने हामी में सर हिला। पता नहीं हमारा दृढ़ निश्चय देख कर अथवा घूँघट ओढ़े खड़ी उस विधवा के निर्णय को सुनकर क्या परिणाम हुआ कि उसका परिवार बहुत दुखी मन से उसे कुछ दिनों के लिए हमारे पास छोड़कर अपने गाँव लौट गया।

यूनिट में अपने पति के मित्रों के परिवारों के साथ निश्चिन्त होकर चम्पा अपना जीवन यापन करने लगी। उसके बच्चे यूनिट के स्कूल में पढ़ने लगे, उसे मिली धनराशि को भी लम्बे समय के लिए फिक्स डिपॉजिट स्कीम में डाल दिया गया। वह पहली बार यूनिट में रहने आई थी; किन्तु जल्दी ही सब से घुल-मिल गई और बड़े स्वाभिमान के साथ जीवन बिताने लगी। मैं भी कभी-कभी उससे मिल कर उसका हौंसला बढ़ाती रहती थी। लगता था कि उसने अपना तथा अपने बच्चों के भविष्य बनाने के लिए सही मार्ग चुन लिया था। बस उसे एक आश्रय की आवश्यकता थी।

हर दो या तीन वर्षों के बाद सैनिक अधिकारियों का स्थानान्तरण हो जाता है। मैं भी अपने इस परिवार को छोड़कर एक नए परिवार, एक नये

स्थान पर रहने चली गई। यूनिट के लोगों से हमें प्रत्येक परिवार के कुशल-मंगल की सूचना मिलती रहती थी। मुझे इस बात की बहुत प्रसन्नता थी कि सूबेदार महावीर यादव के बच्चे अच्छे स्कूलों में पढ़ रहे थे।

सन् २०११ हमारी पलटन ने अपना २५०वाँ स्थापना दिवस मानाया। इस उत्सव में सभी पुराने सैनिक परिवारों को भी आमंत्रित किया गया। तीन दिन तक चलने वाले इस महामिलन के उत्सव में एक दिन वीरगति को प्राप्त हुए सैनिकों के परिवारों को सम्मान देने के लिए निश्चित था ताकि नई पीढ़ी भी उनसे मिल सके और उन वीरों के बलिदान को याद किया जाए। सभी आमंत्रित अतिथि तथा यूनिट के सदस्य उन वीरों को श्रद्धांजलि देने के लिए एक बड़े से मैदान में एकत्र थे। समारोह के आरम्भ में एक अधिकारी ने यूनिट के २५० वर्ष पुराने गौरवमय इतिहास को दोहराते हुए विभिन्न युद्धों में वीरगति को प्राप्त हुए शहीदों को याद किया। अब कार्यक्रम था मैदान में उपस्थित उन शहीदों के परिवारों को स्मृति चिह्न भेंट करने का और इस विशेष कार्य के लिए मुझे आमंत्रित किया गया। एक सैनिक अधिकारी एक एक कर माइक्रोफोन पर शहीदों के

नाम बोल रहा था और मैं उनके परिवारों को भेंट दे रही थी। जैसे ही सूबेदार महावीर यादव (कीर्ति चक्र) का नाम बोला गया, मैंने देखा कि मेरे सामने मुस्कुराती हुई एक स्वावलंबी महिला खड़ी थी। मेरी आँखों के सामने वह दृश्य कौंध गया; जब मैं घुँघट में लिपटी, बेहद डरी हुई चम्पा से मिली थी। हम दोनों ही भावावेश में एक दूसरे के गले लग गई वह मुझे छोड़ ही नहीं रही थी और अस्फुट शब्दों में कुछ कहने का प्रयत्न कर रही थी। मैं भी उससे मिल कर बहुत खुश थी। हम दोनों ही एक दूसरे से वर्षों का हाल-चाल जानना चाहती थीं; किन्तु समय का अभाव हमारी इस मिलन घड़ी के मार्ग में आ खड़ा हुआ। माइक पर एक अगले सैनिक शहीद का नाम बोला जा रहा था। चम्पा ने फिर से कसकर मेरा हाथ थाम लिया। मैंने यूनिट की ओर से भेंट तथा स्मृति चिह्न देते हुए चम्पा से कहा, 'तुम्हारे एक साहसी कदम ने बहुत सी नारियों का मार्ग प्रशस्त किया है। तुम्हारे सुखी जीवन के लिए और तुम्हारी संतान की सफलता के लिए तुम्हें आज मैं हृदय से बधाई देती हूँ।' अब उसने जो मेरा हाथ छोड़ा तो उसमें कोई कम्पन नहीं था।



लेखकों से अनुरोध

बहुत अधिक लम्बे पत्र तथा लम्बे आलेख न भेजें। अपनी सामग्री यूनीकोड अथवा चाणक्य फॉण्ट में वर्डपेड की टैक्स्ट फाइल अथवा वर्ड की फाइल के द्वारा ही भेजें। पीडीएफ या स्कैन की हुई जेपीजी फाइल में नहीं भेजें। रचना के साथ पूरा नाम व पता, ई मेल आदि लिखा होना ज़रूरी है। आलेख, कहानी के साथ अपना चित्र तथा संक्षिप्त सा परिचय भी भेजें। चित्र की गुणवत्ता अच्छी हो तथा चित्र को अपने नाम से भेजें। पुस्तक समीक्षा के साथ पुस्तक आवरण का चित्र, रचनाकार का चित्र अवश्य भेजें।

-सम्पादक

सूचना

हिन्दी चेतना पत्रिका अब कैनेडा के साथ-साथ भारत से भी प्रकाशित हो रही है। पत्रिका के सदस्य बनना चाहते हैं या पत्रिका के एक-दो अंक पढ़ने के लिए मँगवाना चाहते हैं तो आप संपर्क कर सकते हैं-

रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' 9313727493

पंकज सुबीर 9977855399



SAI SEWA CANADA

(A Registered Canadian Charity)

Address: 2750, 14th Avenue, Suite 201, Markham, ON, L3R0B6

Phone : (905) 944-0370 Fax : (905) 944-0372

Charity Number : 81980 4857 RR0001

Helping To Uplift Economically and Socially Deprived Illiterate Masses Of India

Thank You For Your Kind Donation to **Sai Sewa Canada**. Your Generous Contribution Will Help The Needy and the Oppressed to win The Battle Against. Lack of Education And Shelter, Disease Ignorance And Despair.

Your Official Receipt for Income Tax Purposes Is Enclosed

Thank You , Once Again, For Supporting This Noble Cause And For Your Anticipated Continuous Support.

Sincerely Yours,

Narinder Lal

416-391-4545

Service To Humanity



(शोधार्थी, हिन्दी विभाग)
मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी
गच्चीबौली, हैदराबाद-५०००३२
सम्पर्क-०८९७७२१५६८१
ssiraj29@gmail.com

वर्तमान समय में मुस्लिम समाज में स्त्रियों ने अपनी सदियों की खामोशी तोड़ी है। अपने व्यक्तित्व जीवन का उद्देश्य, दर्शन उसका मन-मिजाज, रहन-सहन आदि सब कुछ बदल रहा है। अपनी अस्मिता, आत्मचेतना और अस्तित्वबोध के प्रति चेतना संपन्न और जाग्रत हो रही है। समकालीन मुस्लिम महिला लेखिकाओं ने अपने साहित्य के माध्यम से सदियों पुरानी पितृसत्तात्मक व्यवस्था को चुनौती दी है। समकालीन मुस्लिम महिला लेखिकाओं में नासिरा शर्मा, मेहरुन्निसा परवेज़, जाहिदा हिना, जीलानी बानो, हुस्न तबस्सुम 'निहाँ', किश्वर नाहीद, इस्मत चुगताई, कुर्तुल-एन-हैदर, तहमीना दुर्गानी, रुकैया सखावत हुसैन, तसलीमा नसरीन, गीतांजली श्री, जयश्री रॉय आदि समकालीन लेखिकाओं ने अपनी कहानियों के माध्यम से मुस्लिम समाज में पितृसत्तात्मक व्यवस्था के खिलाफ अपना विद्रोह अभिव्यक्त किया और अपने अधिकारों की माँग कर रही है।

समकालीन हिन्दी कहानियों में मुस्लिम नारी के विद्रोह या बगावत करने के पीछे पुरुषों का अब तक का समाज था, गुलामी थी, भेद-भाव, शोषण, अत्याचार, असमानता और कुंठा से जन्मा भयानक पीड़ा देनेवाला एहसास था। समकालीन मुस्लिम महिलाओं की कहानियों में मुस्लिम नारी का विद्रोह धर्म के प्रति, सामाजिक व्यवस्था के प्रति, आर्थिक व्यवस्था के प्रति, राजनीति के प्रति, नारी के प्रति,

सम्बन्धों के प्रति तथा सांस्कृतिक परिवेश के प्रति विद्रोही एवं बगावत के स्वर की अभिव्यक्ति मिलती है।

अत्याचार का सिलसिला जब असीम हो जाता है, तब या तो नारी उसे अपनी किस्मत समझकर सब कुछ चुपचाप झेल लेती है, या विद्रोह करती है। विद्रोही नारी के मन के तूफान को रोक पाना फिर नामुमकिन-सा हो जाता है। जिस प्रकार कच्ची-मिट्टी आग में तप कर सख्त हो जाती है, उसी प्रकार समय की मार को सह कर नारी का मन भी सख्त हो जाता है।

सईदा गज़दर की 'आज़ानों के देश में' कहानी में मुस्लिम स्त्री की सामाजिक स्थिति को प्रस्तुत करती है। इस कहानी में लेखिका ने सिपाही की पत्नी के माध्यम से समाज में पुरुष किस तरह से अपने जाल में फँसाकर उस पर अत्याचार करता है। इस सामाजिक व्यवस्था ने पात्रा को जिस्म फ़रोशी के लिए मजबूर किया। लेखिका इस पात्रा की स्थिति को देखकर कहती है 'तुमने गाँव जाने की कोशिश क्यों नहीं की?... गाँव जाकर भीयही करना था। गाँव के चौधरी और शहर के सेठ औरत से एक ही तरह की मजदूरी लेने के क्रायल हैं।' सामाजिक व्यवस्था में एक तरफ स्त्री की अस्मिता की बात होती है, उसकी आज़ादी की बात होती है, और दूसरी तरफ उसकी इज़्जत एवं उसके अस्तित्व के साथ खिलवाड़ किया जाता है, उसको मजबूरियों का शिकार बनाया जाता है। लेखिका ने सामाजिक व्यवस्था एवं कानून व्यवस्था पर अपने विद्रोही भावों को अभिव्यक्त करती है-'मेरे हिसाब से उस औरत को, औरत से तवाइफ़ बनाने में सरासर क्रसूर कानून का है, जिसने एक औरत से उसका रक्षक

छीना और एक परिवार से उसका 'सायबान' छीना, आज के मुजरिम को कोड़े मारना, हाथ काटना या संगसार करना ऐसा ही है जैसे हिस्टीरिया के मर्ज़ का इलाज दवा के बजाय झाड़-फूँक से किया जाए। शैतानी ज़ेहन का सुधार ही क़ानून का मकसद है।'

समकालीन कहानियों में मुस्लिम नारी का विद्रोह इस तथ्य पर आधारित है कि धर्म से कुरीतियों का सदा गहरा सम्बन्ध रहा है। धर्म की आड़ में मुस्लिम समाज में पितृसत्तात्मक व्यवस्था ने अनेक कुरीतियों का निर्माण कर लिया है, जिसे मुस्लिम समाज में सभी लोगों को मजबूरन स्वीकार करना पड़ता है। इस व्यवस्था के शोषण, अत्याचार एवं पितृसत्तात्मक व्यवस्था के नियमों का शिकार होना पड़ता है। 'सदियों से साँस लेती औरत ने जब अपनी आज़ादी के आसमान की तमन्ना की, तो सबसे पहली जंग उसे मजहब से ही लड़नी पड़ी।' समाज में धर्म के नाम पर होने वाले अनाचारों, धार्मिक पाखण्डों, अन्धविश्वासों, कुरीतियों तथा रूढ़ियों का मुस्लिम नारीद्वारा विरोध तथा उसके प्रति विद्रोह अभिव्यक्त हुआ है।

नासिरा शर्मा की 'संगसार' कहानी मुस्लिम समाज में नारी की नियति का उल्लेख करती है। और धर्म के प्रति अपना विद्रोह अभिव्यक्त करती है। इस कहानी की पात्रा आसिया की एक छोटी सी भूल मुस्लिम समाज के पितृसत्तात्मक व्यवस्था में बहुत बड़ा पाप मानी जाती है और इसकी एक ही सज़ा हो सकती है, संगसार जो पथरों से मार-मार कर उसकी जान ले लेना है। आसिया की माँ अपनी बड़ी बेटी आसमा से कहती है कि 'मर्द सीगा भी करेगा, ब्याहता के रहते दूसरी शादी भी करेगा और बाहर भी जाएगा, उसे कौन रोक सकता

है? लोग 'थू-थू' भी करेंगे तो फर्क नहीं पड़ता, मगर औरत यह सब करेगी, तो न घर की रहेगी, न घाट की। दूसरा शौहर करना तो दूर, किसी से आशनाई भी हुई तो दुनिया उसे हरामकारी और मजहब उसे जिनाकारी कहेगा, मगर उसके सिर पर तो इनक़लाब सवार है।' आसिया को समझाने के लिए विशेष रूप से खाला को बुलाया जाता है। मगर आसिया खाला के सभी समझौतों को नामंजूर करती है; क्योंकि आसिया को आजादी चाहिए। इसकी कीमत अगर जान देने से चुकती है, तो उसे यह भी स्वीकार है। आसिया बेख़ौफ़ शब्दों में अपने विद्रोही स्वर दिखाती है 'आपका पुराना क़ानून नई परेशानियों का हल नहीं जानता, मरते-घुटते इन्सान की मदद को नहीं पहुँचता, इसलिए आप जिन्दगी को ख़ौफ़ की दीवारों में चुन देना चाहती हैं ताकि इन्सान एक बार मिली जिन्दगी भी खुलकर न जी सके।' अंत में आसिया को इस बेख़ौफ़ मुक्ति की कीमत अपनी जान गवाँकर चुकानी पड़ती है। वह धार्मिक नियम और फतवों के आधार पर संगसार कर दी जाती है। कहानी के अंत में लेखिका ने यह सवाल उठाया है कि जब समाज आसिया को दोषी मानता था और उसकी सज़ा का पक्षधर था, तो फिर आसिया की मृत्यु पे 'उस रात औरतों ने चूल्हे नहीं जलाए, मर्दों ने खाना नहीं खाया, सब एक-दूसरे से आँखे चुराते रहे। यदि आसिया गुनाहगार थी; तो फिर उसके संगसार होने पर यह दर्द, यह कसक उनके दिलों को क्यों मथ रहा था।'

समय के साथ हर व्यवस्था या समाज में परिवर्तन होता रहता है। उसी तरह मुस्लिम समाज में भी परिवर्तन को देख सकते हैं। एक समय था जो कि मुस्लिम स्त्री को घर की चारदीवारी में कैद रहकर अपनी जिन्दगी गुज़ारनी पड़ती थी, अपने अधिकारों के प्रति जागरूक नहीं थी। मुस्लिम समाज में स्त्री को पर्दे के अन्दर रहकर पितृसत्तात्मक व्यवस्था के नियमों, कानून का पालन करना पड़ता था। लेकिन आज के समकालीन समय में मुस्लिम नारी को राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में देख सकते हैं। आधुनिक समाज में मध्य वर्ग तथा उच्च वर्ग की मुस्लिम महिलाएँ राजनीतिक क्षेत्र में समाज का प्रतिनिधित्व कर रही हैं। शिक्षित नारी में नई चेतना जाग्रत हुई; जिससे वह अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हुई है। शिक्षा के कारण नारी में रूढ़ियों, परंपराओं और अंधविश्वासों के प्रति विश्वास कम

हुआ है और वह अपने अधिकारों को पहचान कर राजनीतिक क्षेत्र में संघर्ष करने लगी है।

यह संघर्ष सिर्फ उच्च और मध्य-वर्ग के स्त्रियों के द्वारा ही नहीं; बल्कि निचले तबके की स्त्रियाँ भी अब जाग उठी हैं और वे भी इस संघर्ष में शामिल होने लगी हैं। पुरुष, स्त्री को भरपेट खाना, कपड़ा और घर की सुरक्षा देकर इस भूल में रहता कि उसने उस पर एहसान किया है। नारी भी इन एहसानों तले अपने आप को दबा हुआ पाती है और पति को अपना परमेश्वर मानती है। लेकिन ये मिथ टूटने लगे हैं और पितृसत्तात्मक राजनीति को समझने लगी है। वह इस मानसिक स्थिति से छुटकारा पाने में कामयाब हो रही है, पितृसत्तात्मक एहसानों तले अपना अस्तित्व मिटाना नहीं चाहती।

निष्कर्षतः समकालीन हिन्दी कहानियों में मुस्लिम नारी ने अनेक प्रकार से अपना विद्रोह अभिव्यक्त किया है। घर की चारदीवारी में कैद नारी, देहरी लाँघ अपनी पीड़ा को स्वयं सबके सामने प्रस्तुत करती है। केवल विरोध ही नहीं और भी क्या कर सकती है, अपने लेखन के माध्यम से बता रही है। धर्म, समाज, राजनीति, साहित्य सभी के द्वारा यह शोषण, अत्याचार के विरुद्ध आवाज़ उठाने लगी है। इसलिए कि वे पात्र सामाजिक मान्यताओं में बँधकर जीवन को जी नहीं पाती हैं। उनके विद्रोह के पीछे जो कारण हैं, वे आधुनिक नारी की विडंबना को भी चित्रित करते हैं।

समाज में धर्म के नाम पर होने वाले अत्याचारों, धार्मिक पाखण्डों, अन्धविश्वासों, कुरीतियों तथा रूढ़ियों का मुस्लिम नारी द्वारा विरोध तथा उसके प्रति विद्रोह अभिव्यक्त हुआ है। समकालीन कहानियों में मुस्लिम नारीके धर्म के प्रति विद्रोह एवं बगावत के स्वर को हर स्तर पर देखा गया है। मुस्लिम समाज में स्त्रियों को अनेक बन्धनों में रखा जाता था, उनकी आजादी, अस्तित्व को दबाया जाता था, वह समकालीन समय में धर्म की कूटनीति एवं धर्म की आड़ में हो रहे अत्याचार का खुले ढंग से विरोध करती नज़र आती है। साथ-साथ सामाजिक, आर्थिक, नारी के प्रति, सम्बन्धों के प्रति तथा राजनीतिक व्यवस्था के प्रति अपना विद्रोह अभिव्यक्त करती नज़र आती है। लेकिन मुस्लिम समाज में कुछ ऐसे भी तबके हैं, जिनमें स्त्रियों का जीवन दयनीय है।



“ढींगरा फ़ाउण्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय सम्मान” हेतु पुस्तकें आमंत्रित



“ढींगरा फ़ाउण्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय सम्मान”

वर्ष-2014 हेतु चयन प्रक्रिया प्रारंभ हो चुकी है। इस प्रक्रिया में वर्ष 2014 में प्रकाशित हिन्दी उपन्यासों तथा हिन्दी कहानी संग्रहों पर विचार किया जाएगा तथा वर्ष 2015 में सम्मान समारोह कैंनेडा /अमेरिका में आयोजित किया जाएगा। इस हेतु पुस्तकें आमंत्रित हैं। पुस्तक पर लिखें

“ढींगरा फ़ाउण्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय सम्मान वर्ष-2014 हेतु”

31 दिसम्बर 2014 तक प्राप्त पुस्तकें चयन प्रक्रिया में शामिल की जाएँगीं। सम्मान हेतु पुस्तक की दो प्रतियाँ इस पते पर भेजें-

पंकज सुबीर (समन्वयक-भारत)

हिन्दी चेतना, पी. सी. लैब

शॉप नं. 3-4-5-6

सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट

बस स्टैंड के सामने

सीहोर 466001, मध्य प्रदेश

दूरभाष 07562-405545

मोबाइल 09977855399

ईमेल subeerin@gmail.com

भारतीय राजनीति को समझ पाना आसान नहीं— डॉ. मारिया नेज्येशी

डॉ. मारिया नेज्येशी से विजया सती की हिन्दी चेतना के लिए विशेष बातचीत



डॉ. मारिया नेज्येशी

जन्म-29 अप्रैल 1953 बुदापैश्ट।

शिक्षा-पीएच डी (हिन्दी)

अध्यक्षा-भारोपीय अध्ययन विभाग-ओत्वोश

लोरान्द विश्वविद्यालय बुदापैश्ट, हंगरी।

लैटिन, प्राचीन यूनानी और संस्कृत पढ़ने के बाद हिन्दी अध्ययन में दत्तचित्त।

1981 से विभाग में हिन्दी अध्यापन।

अनुवादिका-हिन्दी की साहित्यिक रचनाओं का हंगेरियन में अनुवाद।

विविध हिन्दी सम्मेलनों में शिरकत।

हिन्दी पाठ्यपुस्तक महात्मा गांधी अंतर्राष्ट्रीय

हिन्दी विश्वविद्यालय से प्रकाशित।



विजया सती

प्रोफेसर हिन्दी विभाग

हान्कुक यूनिवर्सिटी ऑफ़ फ़ॉरन स्टडीज़

सिओल दक्षिण कोरिया।

मध्य यूरोप में कार्पाथ पर्वत मालाओं में स्थित हंगरी देश की राजधानी है-बुदापैश्ट। विश्व मानचित्र में एक सुन्दर पर्यटन नगरी के रूप में दर्ज बुदापैश्ट देश की समस्त महत्वपूर्ण गतिविधियों का केन्द्र है। यहाँ के बहुत पुराने और उल्लेखनीय शिक्षा संस्थान के रूप में ओत्वोश लोरान्द विश्वविद्यालय की मान्यता है। इस विश्वविद्यालय के कई विभागों में से एक है-भारोपीय अध्ययन विभाग। इस विभाग में लम्बे अरसे से संस्कृत भाषा पढ़ाई जाती रही है और पचास से अधिक वर्ष पहले हिन्दी का अध्यापन भी आरम्भ हो चुका है। इस समय विभाग की अध्यक्षता हैं-डॉ. मारिया नेज्येशी। वे १९८१ से विभाग में हिन्दी पढ़ा रही हैं। हिन्दी की विदुषी डॉ. मारिया नेज्येशी का विजया सती ने साक्षात्कार लिया; जो स्वयं हान्कुक यूनिवर्सिटी ऑफ़ फ़ॉरन स्टडीज़ सिओल, दक्षिण कोरिया के हिन्दी विभाग में प्रोफेसर हैं। प्रस्तुत है उनका वार्तालाप-

प्रश्न: मारिया जी, आपका हिन्दी के प्रति रुझान कैसे हुआ?

उत्तर: मैं विश्वविद्यालय स्तर पर लैटिन, प्राचीन यूनानी और संस्कृत भाषाएँ पढ़ती थी। मेरे गुरु प्रोफेसर तोतोशी चबा ने मुझे हिन्दी पढ़ने के लिए प्रेरित किया। १९८५ में मैं हिन्दी पढ़ने भारत गई। १० महीने वहाँ रह कर हिन्दी पढ़ी। मैंने भारतीय उपन्यासकार प्रेमचंद और हंगरी के लेखक मोरित्स जिग्मोंद के साहित्य पर शोध किया और भारत से पीएच डी की उपाधि प्राप्त की। जब मैं हंगरी में हिन्दी पढ़ती थी, तो वहाँ न हिन्दी की किताबें थीं, न ही अधिक हिन्दी बोलने वाले लोग। मैं प्रोफेसर हुकुम सिंह का नाम लेना न भूलूँगी; जिन्होंने मुझे हिन्दी सीखने में मदद की। वैसे वे गणित के ज्ञाता हैं।

प्रश्न: भारत में अपने अनुभव के विषय में कुछ बताइए।

उत्तर: भारत में जिस जीवन को मैंने देखा, वह

मेरे लिए नया और अलग अनुभव था। फिर भी मैं भारत से प्रेरित और प्रभावित होती चली गई और एक समय ऐसा आया; जब मैंने भारतीय पोशाक अपना ली और पश्चिमी पोशाक का त्याग कर दिया। मुझे भारतीय रिश्तों का संसार प्रिय है, जहाँ सब एक-दूसरे से जुड़े रहते हैं। हालाँकि अब बहुत कुछ बदल रहा है, लेकिन फिर भी मुझे यहाँ की अनौपचारिकता भी पसंद है। यहाँ मेरे भी कई नाते जुड़े और वे अब तक बरकरार हैं।

प्रश्न: आपको भारत में क्या पसंद है?

उत्तर: मुझे भारतीय भोजन में पूड़ी और आलू-मटर-पनीर बहुत पसंद है। मुझे भारतीय अचार, फलों में आम और भारतीय मसाले भी पसंद हैं। पोंडीचेरी, दक्षिण भारत और केरल मेरी प्रिय जगहें हैं। मुझे प्रकृति का साथ पसंद है। जहाँ भीड़-भाड़ कम हो, ऐसी जगह जाना अच्छा लगता है। मुझे भारतीय कला फिल्में अच्छी लगती हैं-‘उमराव जान’ फिल्म भी मुझे अच्छी लगी। नसीरुद्दीन शाह और शबाना आजमी मेरे प्रिय कलाकार हैं। मैं भारत के धार्मिक स्थानों में हर जगह जाती हूँ, मंदिर हो या मस्जिद या चर्च। मैं हर धर्म का आदर करती हूँ। भारतीय खबरें पढ़ती हूँ, पर सोचती हूँ कि भारतीय राजनीति को समझ पाना आसान नहीं।

प्रश्न: आप हिन्दी के साथ अपने सम्बन्ध के विषय में क्या कहना चाहेंगी।

उत्तर: मैं हिन्दी की बदौलत विश्वभर में घूमती हूँ। मैं कुछ वर्ष पहले जापान हिन्दी सम्मेलन में गई। बहुत से सम्मेलनों और गोष्ठियों में मुझे भारत से निमंत्रण मिलता है और मैं वहाँ जाती हूँ। मैंने विश्व हिन्दी सम्मेलन में भी भाग लिया। बहुत से भारतीय कवि-कलाकार-लेखकों से मेरा परिचय है। वे हिन्दी सम्बन्धी मशविरा भी देते हैं। प्रोफेसर असगर वजाहत लम्बे समय तक हमारे विभाग में विजिटिंग प्रोफेसर रहे और आज भी वे हर तरह की मदद के लिए तैयार रहते हैं। मैंने हिन्दी की कुछ रचनाओं के हंगेरियन भाषा में अनुवाद किए हैं।

नवीनतम कार्य उदय प्रकाश की कहानी 'वारेन हेस्टिंग्स का सांड' का अनुवाद है।

प्रश्न: अपने विभाग के विषय में कुछ कहिए।

उत्तर: शुरू में विभाग में हिन्दी अध्यापन कठिन रहा। कई वर्षों से परम्परा न होने के कारण शिक्षण सामग्री बहुत कम थी। हम पाठ्य सामग्री चुनते और संग्रह करते हैं। पहले पाठ्य पुस्तकें रूसी, जर्मन और अंग्रेजी भाषाओं में थीं। विभाग में पहले डिप्लोमा इंडोलोजी पाँच वर्ष का था। अब बी.ए और एम.ए हिन्दी है। तीस के लगभग छात्र-छात्राएँ पढ़ते हैं। अध्ययन की समाप्ति पर वे शोध आलेख लिखते हैं। हम उन्हें बोलचाल-वार्तालाप की हिन्दी से परिचित कराते हैं। वे हिन्दी अखबार पढ़ते हैं और कला फिल्म क्लब में हिन्दी फिल्म भी देखते हैं। विभाग की एक भित्ति-पत्रिका भी निकालते हैं। हमारा पुस्तकालय बहुत अच्छा है। वहाँ अठारह हजार से भी अधिक पुस्तकें हैं। अधिकतर पुस्तकें भारतीय दूतावास और भारत सरकार की भेंट हैं। कुछ श्रव्य कैसेट और रिकार्ड भी हैं। इस समय कई फिल्म कैसेट भी एकत्र किए हैं।

आधुनिक भारत में विद्यार्थियों की रुचि बढ़ती जाती है। हम कक्षा में बीसवीं शताब्दी के लेखक जैसे प्रेमचन्द, प्रसाद, वृन्दावनलाल वर्मा, जैनेन्द्र, अज्ञेय, शैलेश मटियानी, मन्नू भंडारी, मोहन राकेश, असगर वजाहत और राजेन्द्र यादव की रचनाओं से परिचित कराते हैं। विभाग में अध्यापन के लिए भारतीय विजिटिंग प्रोफेसर भी आते हैं। भारत सरकार के निमंत्रण पर हिन्दी पढ़ने हमारे छात्र भारत जाते हैं।

प्रश्न: विश्वविद्यालय के अतिरिक्त आप अनौपचारिक रूप से भी हिन्दी पढ़ाती हैं-उस विषय में भी कुछ बताइए।

उत्तर: मैं 1993 से भारतीय दूतावास में तीन स्तर पर ओरिएंटेशन कक्षाओं का संचालन कर रही हूँ। इसमें हंगरी के भारत प्रेमी हिन्दी भाषा और संस्कृति जानने के लिए आते हैं। हम उन्हें आरम्भिक भाषा-ज्ञान देते हैं। सप्ताह में एक भाषण आमंत्रित अतिथि विद्वान् का होता है; जो भारतीय कला, संस्कृति, समाज सम्बन्धी जानकारी देते हैं। हम सब मिलकर होली, दिवाली और हिन्दी दिवस मनाते हैं।

प्रश्न: दोनों देशों के पारस्परिक संबंधों पर आपकी टिप्पणी?

उत्तर: हंगरीवासियों की भारतीय कला, संस्कृति, भाषा और दर्शन के प्रति रुचि और जिज्ञासा है। यहाँ भारत-हंगरी मैत्री संघ की स्थापना तीस वर्ष पहले हुई। मैं तीन साल से उसकी अध्यक्ष के रूप में कार्य कर रही हूँ। इस संस्था में आयोजित होने वाले कार्यक्रम भी भारतीय कला, संस्कृति और समाज से जुड़े होते हैं। यह एक क्लब जैसा है।

प्रश्न: अपने छात्रों के विषय में कुछ कहें।

उत्तर: विभाग के छात्र पीएच डी की उपाधि प्राप्त कर विभाग में अध्यापन भी कर रहे हैं। वे समारोहों में दुभाषिण की भूमिका निभाते हैं। भारतीय दूतावास के सांस्कृतिक केन्द्रमें पहले भी और अब भी हमारे छात्र सहायक के रूप में काम कर रहे हैं। विभाग से एक छात्र ऑक्सफोर्ड में अध्यापन करते हैं। एक छात्रा शिकागो में पीएच डी कर रही है। एक छात्र वर्धा में शोध-छात्र है।

प्रश्न: सामान्यतः हिन्दी के भविष्य के बारे में और विशेष रूप से हंगरी में हिन्दी के भविष्य पर आपके क्या विचार हैं?

उत्तर: भारतीय संस्कृति और विशेष रूप से हिन्दी में हंगरी के लोगों की रुचि बढ़ती जा रही है। इसमें हमारे हिन्दी फिल्म क्लब का भी बड़ा योगदान है। हिन्दी फिल्म देखने वालों की संख्या भी लगातार बढ़ती जा रही है। पहले से अधिक लोग हिन्दी भाषा पढ़ते हैं। पर संस्कृत तथा हिन्दी भाषा की पढ़ाई के लिए प्राध्यापकों की कमी है। इसलिए नहीं कि प्राध्यापक नहीं होते, बल्कि इसलिए कि उनको आजकल विश्वविद्यालय में नौकरी नहीं मिलती। इंडोलोजी की नई पीठ बने, कुछ छात्रवृत्तियाँ भी हों तो विद्यार्थी अपनी पढ़ाई का खर्च निकाल सकेंगे। इसके साथ ही यदि विद्यार्थियों को भारत जाकर शोध करने के अवसर और छात्रवृत्ति मिले तो उनका उत्साह बढ़ेगा और वे अच्छा काम कर सकेंगे। हिन्दी के लिए समर्पित भाव से काम करने की ज़रूरत है। इस भाषा में अपार सम्भावनाएँ हैं। मैं हिन्दी के भविष्य के लिए अच्छी आशाएँ रखती हूँ।

प्रश्न: आपको भारत में क्या पसंद नहीं है?

उत्तर: गन्दगी ! गलियों और सड़कों के किनारे, यहाँ-वहाँ सभी जगह पर कूड़े का ढेर। केवल निजी रूप से स्वच्छ होना काफी नहीं है, आसपास का परिवेश और वातावरण भी तो साफ होना चाहिए।



हिन्दी चेतना विशेषांक कथा आलोचना अंक

अतिथि संपादक : सुशील सिद्धार्थ

यह विशेषांक समकालीन कथा लेखन को केन्द्रित कर लिखी गई आलोचना की पड़ताल करेगा। विगत डेढ़ दो दशक में कहानी और उपन्यास ने संवेदना व संरचना के स्तर पर स्वयं को संशोधित / समृद्ध किया है। इस संदर्भ में 'युवा कहानी' व 'नया उपन्यास' जैसी चर्चाएँ भी अस्तित्व में आईं। सहज जिज्ञासा है कि शब्दों में निहित अर्थ और पंक्तियों के बीच ठिठके आशय को पहचानने का काम करने वाली आलोचना की क्या स्थिति है। क्या कथा साहित्य में आ रहे परिवर्तनों को परखने के लिए आलोचना ने अपनी प्रचलित परिपाटी में कोई बदलाव किया है!

'हिन्दी चेतना' का यह विशेषांक ऐसे ही कुछ

प्रश्नों का उत्तर तलाशने का उपक्रम है।

अंक में हिन्दी आलोचना के शिखर व्यक्तित्व आचार्य नामवर सिंह का साक्षात्कार होगा। कथा-आलोचना पर डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी, ज्ञानरंजन, रविभूषण व मनेजर पांडेय की टिप्पणियाँ होंगी। रोहिणी अग्रवाल, अर्चना वर्मा, साधना अग्रवाल, दुर्गा प्रसाद गुप्त, राजेश राव, संजीव कुमार, प्रियम अंकित, विभास वर्मा, बलवंत कौर आदि कथा-आलोचना के विविध पक्षों पर विचार करेंगे।

प्रस्तुत अंक जिन मुद्दों पर गंभीर सामग्री

प्रस्तुत करने की कोशिश करेगा वे हैं -

1 रचना और आलोचना का रिश्ता। 2 अखरती क्यों है आलोचना। 3 नयी रचनाशीलता के लिए नयी आलोचना की दरकार। 4 कहानी- आलोचना के नये निकष। 5 उपन्यास-आलोचना की चुनौतियाँ। 6 समकालीन कथा साहित्य के कीर्तिमान और प्रतिमान। 7 प्रवासी कथा लेखन को परखने की कठिनाइयाँ। 8 प्रवासी कथा लेखन की विशिष्टताएँ। 9 प्रवासी कथा आलोचक।

दो परिचर्चाएँ होगी :

1 भारत का कथा लेखन और आलोचना।

2 भारतेतर देशों का कथा लेखन और आलोचना।

सुशील सिद्धार्थ: 09868076182, 08527086941

ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउन्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय सम्मान समारोह

Dhingra Family Foundation-

Hindi Chetna International Literary Award Ceremony

प्रथम सत्र: सम्मान समारोह (First Session: Award Ceremony)

दिनांक: २६ जुलाई २०१४, (Date: 26 July 2014), समय: १:३० से ५:००, (Time: From 1:30 to 5:00)

स्थान: स्कारबरो सिविक सेंटर, काउंसिल चैम्बर्स, १५० बरो ड्राइव, स्कारबरो, ओण्टारियो, M1P 4N7
(Venue: Scarborough Civic Center, 150 Borough Drive, Scarborough, Ontario, M1P 4N7)

प्रथम सत्र संचालन : पंकज सुबीर (First Session Master Of Ceremony: Pankaj Subeer)



प्रो. हरि शंकर आदेश

(उत्तरी अमेरिका -ट्रिनिडाड)

‘ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउन्डेशन-हिन्दी चेतना
अंतर्राष्ट्रीय साहित्य सम्मान’

(समग्र साहित्यिक अवदान हेतु)

Pro. Harishankar Adesh
(North America-Trinidad)

‘Dhingra Family Foundation-
Hindi Chetna International
Literary Award’ for Life Time
Achievement

महेश कटारे

(भारत)

‘ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउन्डेशन-हिन्दी चेतना
अंतर्राष्ट्रीय कथा सम्मान’

(उपन्यास-कामिनी काय कांतारे हेतु)

Mahesh Katare
(India)

‘Dhingra Family Foundation-
Hindi Chetna International
Literary Award’ for Novel
‘Kamini Kay Kaantare’

सुदर्शन प्रियदर्शिनी

(अमेरिका)

‘ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउन्डेशन-हिन्दी चेतना
अंतर्राष्ट्रीय कथा सम्मान’

(कहानी संग्रह -उत्तरायण हेतु)

Sudershan Priyadarshini
(America)

‘Dhingra Family Foundation-
Hindi Chetna International
Literary Award’ for Story
Book ‘Uttaraayan’



पंकज सुबीर

(सुप्रसिद्ध कहानीकार, उपन्यासकार एवं कवि)

प्रथम सत्र का संचालन एवं द्वितीय सत्र की अध्यक्षता करेंगे

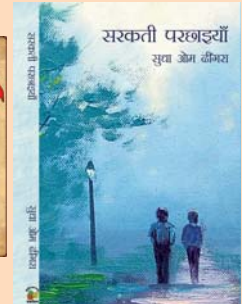
Pankaj Subeer
(Well Known Story Writer, Author & Poet)
Master of Ceremony for First Session and
Chairmanship for Second Session



द्वितीय सत्र: सुधा ओम ढींगरा के काव्य संग्रह ‘सरकती परछाइयाँ’

(शिवना प्रकाशन) का विमोचन एवं तत्पश्चात आयोजित कवि सम्मेलन
में आमंत्रित कवियों का काव्य पाठ। अध्यक्षता : पंकज सुबीर

(Second Session: Book Release Function of Sudha Om
Dhingra Poetry Book ‘Sarakti Parchhaiyan’(Shivna
Prakashan), Followed by Poetry Recitation by Invited
Poets. Chairmanship : Pankaj Subeer)



RSVP- Email: shiamtripathi@gmail.com, Phone: 905-475-7165

जुलाई-सितम्बर 2014

हिन्दी
चेतना

41



ई-पत्रिका ओपन बुक्स ऑनलाइन डॉट कॉम प्रबन्धन मण्डल के सदस्य। काव्य-संकलन 'परीं को खोलते हुए' का संपादन। काव्य-संग्रह 'इकडियाँ जेबी से' प्रकाशित। त्रैमासिक पत्रिका 'विश्वगाथा' के परामर्शदात्री सदस्य। रचनाएँ विभिन्न पत्रिकाओं, ई-पत्रिकाओं में प्रकाशित। एम-II / ए-१७, ए.डी.ए. कॉलोनी, नैनी, इलाहाबाद-२११ ००८ (उप्र)
संपर्क : ०९९१९८८९९११
saurabh312@gmail.com

सोचता हूँ जिसे.. वही हो क्या
डायरी से निकल गई हो क्या

छू गयी तो लगा मैं साहिल हूँ
साथ बहने चली नदी हो क्या

लग रही है वसुंधरा सुन्दर
आज तुम भी उधर जगी हो क्या

हो गयी फिर हरी-भरी तुलसी
क्या कहूँ, तुम मुझे मिली हो क्या

खुश मेरे साथ हो बहुत, लेकिन
खिलखिला कर कभी हँसी हो क्या

क्यों अँधेरे मुझे अजीब न हों
तुम उजाला, सही, मेरी हो क्या

इस दफे वादियाँ उदास लगीं
कौन जाने उन्हें कमी हो क्या

तुम मई हो भरे दिसम्बर में
या, दिसम्बर पगी मई हो क्या

बोलते इशारों की खूबियाँ समझती हैं
क्या कहें, छुपायें क्या, लड़कियाँ समझती हैं

बाग में अभी आई बच्चियाँ न जानेंगीं
किन्तु खौफ़ का मतलब तितलियाँ समझती हैं

कान में नरम सीकों के जिये सुहाने दिन
हो गये कभी के गुम.. बालियाँ समझती हैं

जी रहीं भरोसों में निर्निमेष आँखों के
चुभ रहे सवालें को मुट्ठियाँ समझती हैं

विषधरों ने चन्दन से मित्रता बना ली जो
तो कसूर कैसा है बाँबियाँ समझती हैं

लोकतंत्र की ताकत है सधे विचारों में
क्यों न फिर हवाबाजी तालियाँ समझती हैं ?

जाति-गर्व के किस्से खूब हैं चलन में पर
वंश की प्रथा का क्रम दाइयाँ समझती हैं

-०-

जी हज्जरी जब सधी होने लगी
भीत पुख्ता रेत की होने लगी

रौशनी जुगनू के भी तो पास है
चाँद को कुछ खलबली होने लगी

हादसे हतप्रभ बहुत हैं, देखकर
जिन्दगी फिर से खड़ी होने लगी

आज मेरे साथ फिर कौतुक हुआ
आज फिर उम्मीद सी होने लगी

लॉन में आयी, रुकी, पल भर, लगा-
धूप कितनी बातुनी होने लगी

खिड़कियों में बैठती हैं आजकल
इन हवाओं में नमी होने लगी

देखते ही सब भँवर गहरे हुए
एक धारा यों नदी होने लगी

यदि सुशासित देश-सूबा चाहिए
शाह क्या जल्लाद होना चाहिए

फुरसतों का दौर कैसा चाहिए
वक्त अलसाया उनींदा चाहिए

रात है, आवारगी है.. खूब है
कब कहा हमने, ठिकाना चाहिए

इश्क है गर डूबना.. तो पास जा..
डूबने वालों को दरिया चाहिए

नाम इक उड़ता हुआ फिर आ गया
होंठ पर फूलों का गमला चाहिए

वक्त क्या.. कर दूँ निछावर जिन्दगी
पर तुम्हें तो सिर्फ कंधा चाहिए

दुख मेरा है एक बच्चे की तरह
हर समय 'सौरभ' खिलौना चाहिए

-०-

दिन उगे का तो पहर लगता है
है अभी थोड़ी कसर, लगता है

घोर आपत्तियों के मौसम में
मौन तक आज मुखर लगता है

क्या हुआ साथ चलें, या न चलें
पर सुगम होगा सफ़र, लगता है

लोग दीवार उठाएँगे ही
छत बना यार.. अगर लगता है

जब सभी पास रहें हैंस-मिल कर
घर तभी प्यार का घर लगता है

बह रही शांत नदी के मन में
एक उल्टी है लहर लगता है

सांत्वनाएँ जो मिलीं कुछ यों मिलीं
अब निवेदन से भी डर लगता है



मेडिकल रिप्रेजेंटेटिव शशि पुरवार के नारी विमर्श के अर्थ, उजास साथ रखना, त्रिसुगंधी, आधी आबादी-ताँका, गजल और हाइकु के साझे संकलन हैं। कहानी, कविता, लघुकथा, काव्य की अलग-अलग विधाएँ, गीत, नवगीत, दोहे, कुण्डलियाँ, गजल, छंदमुक्त, चोका, माहिया और लेख राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में निरंतर छपती हैं।

नए हुए अनुबंध

नए छंद से, नए बंध से
नए हुए अनुबंध
नई सुबह की नई किरण में
नए सपन की प्यास
नव गीतों के रस में भीगी
मन की पूरी आस
लगे चिटकने मन की देहरी
शब्दों के कटिबंध
नई हवाएँ, नई दिशाएँ
बरसे नेही, बादल
छोटी-छोटी खुशियाँ भी हैं
इन नैनों का काजल
गमक रही है साँस-साँस भी
हो करके निर्बंध
नए वर्ष के नव पत्रों में
नए तराने होंगे
शेष रह गये सपन सलोने
पुनः सजाने होंगे
नई ताजगी आई लेकर
नए साल की गंध।।

होठों पर मुस्कान सजाकर

होठों पर मुस्कान सजाकर
हमने, गम की
पी है हाला,

ख्वाबों की बदली परिभाषा
जब अपनों को लड़ते देखा
लड़की होने का गम, उनकी
आँखों में है पलते देखा
छोटे भ्राता के आने पर
फिर ममता का
छलका प्याला,

रातों-रात बना है छोटा
सबकी आँखों का तारा
झोली भर-भर मिली दुआएँ
भूल गया घर हमको सारा
छोटे के

लालन-पालन में
रंग भरे सपनों की माला
बेटे-बेटी के अंतर को
कई बार है हमने देखा
बिन माँगे, बेटा सब पाए
बेटी माँगे, तब है लेखा
आशाओं का
गला घोटकर
अधरों, लगा लिया है ताला।।

सपन सलोने

सपन सलोने,
नैनों में
जिया, भ्रमर-सा डोला है
छटा गुलाबी, गालों को
हौले-हौले सहलाए
सुख मेंहदी हाथों की
प्रियतम की याद दिलाए
बिना कहे,
हाल जिया का
दो आँखियों ने, खोला है।
हँसी ठिठोली, मंगल-गीत

गूँज रहे हैं घर, अँगना
हल्दी, उबटन, तेल, हिना
खनके हाथों का कँगना
खिला शगुन के
चंदन से

चंचल मुखड़ा भोला है
छेड़े सखियाँ, थिरक रहीं
फिर, पैरों की पैजनियाँ
बालों में गजरा महके
माथे झूमर ओढ़नियाँ
खुसुर-फुसुर की
बतियों ने
कानों में रस घोला है
सखी-सहेली छूट रही
कल पिय के घर है जाना
फिर, रंग भरे सपनों को
स्नेह उमंगों से सजाना
मधुर,
तरानों से बिखरा
राग रंग का रोला है।

चम्पा चटकी

चम्पा चटकी इधर डाल पर
महक उठी अँगनाई
उषाकाल नित
धूप तिहारे
चम्पा को सहलाए
पवन फागुनी लोरी गाकर
फिर ले रही बलाएँ
निंदिया आई आँखियों में और
सपने भरे लुनाई....
श्वेत चाँद-सी
पुष्पित चम्पा
कल्प वृक्ष-सी लागे
शैशव चलता
टुमक-टुमक कर
दिन तितली-से भागे
नेह अरक में डूबी पैजन-
बजे खूब शहनाई....





इटवा (उ.प्र.) में जन्मी, सरस दरबारी की 11 कविताएँ प्रखर साहित्यिक पत्रिका 'दीर्घा' में 'विशेष फोकस' के अंतर्गत प्रकाशित हुईं। आकाशवाणी मुंबई से 'हिन्दी युववाणी' व मुंबई दूरदर्शन से 'हिन्दी युवदर्शन' की संचालक सरस जी के साझे काव्य संग्रह हैं-शब्दों के अरण्य में, अरुणिमा, बालार्क, एवं शब्दों की चहलकदमी।

शब्द ही तो हैं

हमें और कितना
तोड़ोगे-
मरोड़ोगे-
हमारी सहजता को द्विअर्थी जामा पहना-
और कितना तिरस्कृत करोगे ...!

यूँ तो एक अबोध बालक भी
अपनी हर बात कह लेता है
एक मूक जानवर
अपनी हर ज़रूरत जता देता है,
फिर शब्दों की क्या दरकार...!

हमारी उत्पत्ति, तुम्हारे लिए ही हुई ...
विचारों को बाँटने के लिए-
अपनी बात समझाने के लिए
एक सभ्य समाज के निर्माण के लिए
लेकिन तुमने-
हमारा दुरुपयोग किया..!
हमसे अपना वर्चस्व स्थापित कर
हमीं पर लांछन मढ़ दिया-
कभी लोगों को बरगलाया
झूठे वादों में उन्हें उलझाया

और अर्थों का अनर्थ कर डाला।
जानते थे प्यार की ताकत को
तुमने फिर भी ज़हर फैलाया
मनों में.....
सीमाओं पर उसे बोया
और हमको परास्त किया ...!

सुनो ...
अब भी मानो
हमें पहचानो
हम कुछ भी कर सकते हैं
हर जुल्म से दो हाथ कर सकते हैं-
हमें बेचारा ...कमज़ोर, न समझना
हम सियासत का रुख बदल सकते हैं ...!!!

ताप

मैंने जलते सूरज को,
अपनी अँजुरी में समेटना चाहा
ताकि जग का ताप हर लूँ-
ताकि, व्यथित, विक्षिप्त अन्तस् के कष्ट,
कम कर दूँ-
ताकि धरती की जलन को
कुछ और शीतल कर दूँ-
ताकि तपते खेतों को झुलसने से बचा लूँ..

लेकिन यह क्या ...!
मैंने तो जीवन का उद्गम ही रोक दिया-
वही ऊष्मा जो जीवनदायी थी-
मैंने उसी का रुख मोड़ दिया ...!!!

खेत भी त्राहि-त्राहि कर उठे-
फुनगियों पर रुका अनाज
मुरझाकर झड़ने लगा
विक्षिप्त व्यथित कायाएँ
रोगग्रस्त हो गईं....

यह मैंने क्या किया !
नहीं समझ पाई कि स्वयं तपकर ही तुम
जग को जीवन देते हो---
तपना ही तुम्हारी नियति है

और मेरी
धरती बन
साँझ को घर लौटने पर
उस ताप पर
मरहम बन जाना!!!

शापित

सूरज उससे अनभिज्ञ है
किरणें अनजान !
ख़ौफ़जदा रहती है वह
शाम के धुंधलके से-
और रात लाती है फरमान !!
चल...तेरे मरने का वक्त आ गया

बंद कर देती है ख्वाइशें, सपने, यादें
और रख देती है वह संदूकची
उसी आले पर !!!
जड़ लेती है चेहरे पर हँसी-
पोत लेती है रंग-रोगन
और बन जाती है नुमाइश ...

हसरतों पर कोई पाबन्दी नहीं
जितना चाहे चुग्गा डाल दे
घिरी रहती है ...
पर पालती नहीं उन्हें,
लहलुहान होने के डर से....
और नामुराद आँसू...!
मुँह छिपाकर गुज़र जाते हैं

हँसी उसके वस्त्र हैं-
उपहास आभूषण-
और रिश्ते !
एक मरीचिका-
जिसमें बस एक आस है ...
यहाँ रिश्ते कायम तो सभी करते हैं
पर निभाता ..कोई नहीं ...
सदियों से ब्रह्म कमल-सी खिलती आई है
जिसे सुबह होते ही
मुरझा जाना है!!!!!!





रश्मि प्रभा के, शब्दों का रिश्ता, अनुत्तरित, महाभिनिक्रमण से निर्वाण तक, खुद की तलाश, चैतन्य, मेरा आत्मचिंतन, एक पल काव्य संग्रह हैं और अनमोल संचयन, अनुगूँज, परिक्रमा, एक साँस मेरी, खामोश, खामोशी और हम, बालार्क सम्पादित संग्रह हैं। ऑडियो-वीडियो संग्रह-कुछ उनके नाम (अमृता प्रीतम-इमरोज के नाम)।

कई सम्मानों के साथ परिकल्पना ब्लॉगोत्सव द्वारा वर्ष २०१० की सर्वश्रेष्ठ कवयित्री से सम्मानित। पत्रिका 'द संडे इंडियन' द्वारा तैयार हिंदी की १११ लेखिकाओं की सूची में नाम शामिल। भोजपुरी फीचर फिल्म साई मोरे बाबा की कहानीकार और गीतकार।

कवि...
 मैं तुमको जीना चाहती हूँ।
 तुम हो यहीं ...
 मधुशाला,
 मधुबाला.....
 अपने एकांत संगीत में।
 कभी तेज, कभी शेष,
 कभी आशा, कभी गुमशुदा राहों की तरह।
 अपनी कलम में तुम्हें मढ़ना चाहती हूँ-
 तुम्हें लूँ तो कैसे ?
 स्व की तरह लेना सही होगा,
 क्योंकि जो तुम हो, वही तो मैं हूँ।
 क्या लिखते समय तुम्हारे अन्दर
 वह अल्हड़ लड़की नहीं थी,
 जो कभी गई बात में थी,
 कभी दीपशिखा के स्वप्निल आँखों में ...

कवि तुम्हारा परिचय यूँ है-

मैं जग-जीवन का भार लिए फिरता हूँ,
 फिर भी जीवन में प्यार लिए फिरता हूँ;
 कर दिया किसी ने झंकृत जिनको छूकर
 मैं साँसों के दो तार लिए फिरता हूँ!
 मैं स्नेह-सुरा का पान किया करता हूँ,
 मैं कभी न जग का ध्यान किया करता हूँ,
 जग पूछ रहा है उनको, जो जग की गाते,
 मैं अपने मन का गान किया करता हूँ!
 मैं निज उर के उद्गार लिए फिरता हूँ,
 मैं निज उर के उपहार लिए फिरता हूँ;
 है यह अपूर्ण संसार जो मुझको भाता
 मैं स्वप्नों का संसार लिए फिरता हूँ!
 मैं जला हृदय में अग्नि, दहा करता हूँ,
 सुख-दुःख दोनों में मग्न रहा करता हूँ;
 जग भव-सागर तरने को नाव बनाए,
 मैं भव मौजों पर मस्ते बहा करता हूँ!
 मैं यौवन का उन्माद लिए फिरता हूँ,
 उन्मादों में अवसाद लिए फिरता हूँ,
 जो मुझको बाहर हँसा, रुलाती भीतर,
 मैं, हाय, किसी की याद लिए फिरता हूँ!
 कर यत्न मिटे सब, सत्य किसी ने जाना?

नादान वहीं है, हाय, जहाँ पर दाना!
 फिर मूढ़ न क्यों जग, जो इस पर भी सीखे?
 मैं सीख रहा हूँ, सीखा ज्ञान भूलना!
 मैं और, और जग और, कहाँ का नाता,
 मैं बना-बना कितने जग रोज़ मिटाता;
 जग जिस पृथ्वी पर जोड़ा करता वैभव,
 मैं प्रति पग से उस पृथ्वी को तुकराता!
 मैं निज रोदन में राग लिए फिरता हूँ,
 शीतल वाणी में आग लिए फिरता हूँ,
 हों जिस पर भूषों के प्रसाद निछावर,
 मैं उस खंडर का भाग लिए फिरता हूँ!
 मैं रोया, इसको तुम कहते हो गाना,
 मैं फूट पड़ा, तुम कहते, छंद बनाना;
 क्यों कवि कहकर संसार मुझे अपनाए,
 मैं दुनिया का हूँ एक नया दीवाना!
 मैं दीवानों का एक वेश लिए फिरता हूँ,
 मैं मादकता निःशेष लिए फिरता हूँ;
 जिसको सुनकर जग झूम, झूमके, लहराए,
 मैं मस्ती का संदेश लिए फिरता हूँ!

और मेरा परिचय यूँ-

शब्दों की गुफाओं में
 एक मौन तपस्या
 कब दिन हुआ
 कब रात हुई
 सब मौन रहा
 बादल गरजे, बिजली कड़की
 बूँद-बूँद पानी बरसा
 बूँद-बूँद के भावों से
 शब्दों का परिधान बना
 आकृति जो साकार हुई
 मेरा सपना साकार हुआ-
 कुछ देर रुको
 और गौर करो-
 मैं हूँ शब्दांश
 मैं हूँ भावार्थ
 मैं ही हूँ गुंजित प्रतिध्वनि
 मैं मौन भी हूँ
 मैं स्वर भी हूँ

रचना श्रीवास्तव की क्षणिकाएँ



मैं विस्मित अनकही बातें हूँ
यह नाम तो बस एक माया है
सच भावों की एक छाया है
मेरा परिचय यही पहले था
मेरा यही परिचय आज भी है

अपने मौन और शब्द में तुम कहते हो-

एक दिन मैंने
मौन में शब्द को धँसाया था
और एक गहरी पीड़ा,
एक गहरे आनंद में,
सन्निपात-ग्रस्त सा,
विवश कुछ बोला था;
सुना, मेरा वह बोलना
दुनिया में काव्य कहलाया था।

आज शब्द में मौन को धँसाता हूँ,
अब न पीड़ा है न आनंद है
विस्मरण के सिन्धु में
डूबता सा जाता हूँ,
देखूँ,
तह तक
पहुँचने तक,
यदि पहुँचता भी हूँ,
क्या पाता हूँ।

मैं आरम्भ का एक तिनका

‘एक खिलखिलाती हँसी मेरे पास रुकी है,
एक गुनगुनाती नदी मेरे पास गा रही है,
सूरज-
नाए विचार, नया तेज, नई दृढ़ता
किरण कवच में लेकर आया है
बड़ों का आशीर्वाद,
बच्चों की मासूमियत
हवाओं में झूम रही है.....
आओ,
हम इन्हें मिलकर बाँट लें
और एक नई शुरुआत करें !

□

अमेरिका निवासी रचना श्रीवास्तव लखनऊ
(उत्तर प्रदेश) से हैं। मन के द्वार हजार (३४
कवियों के अवधी में अनूदित ५४२ हाइकु),
भोर की मुस्कान(हाइकु संग्रह), आधी आबादी
का आकाश (हाइकु संग्रह-डॉ. अनिता कपूर-
रचना श्रीवास्तव) के अतिरिक्त विभिन्न संग्रहों में
कहानियाँ, कविताएँ, हाइकु प्रकाशित।
rach_anvi@yahoo.com

मैं तुम्हारा हूँ
पर खोने से डरती हो शायद
इसीलिए
टूटा बाल पलक का
हाथ पे रख
आँख बंद कर बुदबुदाती हो प्रार्थना
और फूँक मार देती हो।

-o-
तुम्हारा प्यार
जैसे बंद कमरे की
खोल दी हो खिड़कियाँ किसी ने
धूप का एक टुकड़ा
हाथों में कुछ अधखिले पुष्प ले कर
नंगे पाँव अंदर आया
और सीलन भरे
हर कमरे को महका गया।

-o-
तुम्हारा प्यार
भजन की वो तिलस्मी पंक्तियाँ
जो जादू की छड़ी से
उदास तितली को छूता है
और वो
तुम्हारे रंग की खुशबू से
महकने लगती है।

-o-

घायल भावनाएँ तुम्हारी
सिसकती रही
लाख पूछने पर
तुमने कहा
नागफनी से उलझ गई थी
पर ये नहीं कहा कि
वो नागफनी का जंगल
मेरी ही जीभ पर उगा है।

-o-
पथरीली राह पर
बेखौफ चलती मैं
अपने पैरों पर
अभिमान करती रही
पर आज
अचानक जो मुड़ के देखा
रिस रहा था लहू
तुम्हारी घायल हथेलियों से।

-o-
प्रेम का शब्द
उछाला जो अम्बर की ओर
बादल का एक टुकड़ा
घरती पर आ गिरा
सुबह
धरती भीगी-सी थी

-o-
आँखों की कोठरी में
जन्मे थे सपने
कुछ घायल हुए
कुछ टूट गए
कुछ में जंग लग गया
अब घर के कोने-कोने में
बिखरे हैं उनके पुर्जे
मेरी आँखें
मेरी ही सपनों का जंकयार्ड बन गई हैं।

□



मेरठ की ज्योत्स्ना प्रदीप कविता, कथा, तथा लेख आदि लिखती हैं। उर्वरा-सम्पादक डॉ.शैल रस्तोगी में हाइकु, पंचपर्णा-सम्पादक शैल रस्तोगी में कविताएँ सम्मिलित। अभिनव इमरोज, उदन्ती,समृद्ध सुखी परिवार, साहित्यकुंज, हिन्दी हाइकु, त्रिवेणी में रचनाएँ प्रकाशित।

ps9353@gmail.com

नव-स्वर

मैं
राधा न सही
मीरा न सही
पर क्या मुझे तुम्हारे
वंशी-स्वर सुनने का
कुछ हक नहीं ?
तुम तो
बाँस के खोखलेपन को भी
भर देते हो।
छिद्रों को भी तो
स्वर देते हो।
फिर मैं
इतनी खोखली भी नहीं
आओ!
वेणु समझकर ही
अधरों से लगा लो
साँसे भरकर तो देखो
शायद, मुझमें भी
कोई नव-स्वर सुनाई दे।

पेड़ों की पातों

सीखो पेड़ों की पातों से
टूटे पर अश्रु बहाते नहीं
माटी में भी, मिल जाएँ पर
दुखड़ा कभी भी गाते नहीं।
वाचाल आँधियाँ बहकाकर
निज साथ उड़ा ले जाती हैं
बिन सुने ही आहें-कराहें
अकेला ही छोड़ आती हैं
पत्थरों से टकराएँ चाहे
चोटें तब भी दिखते नहीं
सीखो पेड़ों की पातों से
टूटे पर अश्रु बहाते नहीं।
फलों-फूलों के प्रहरी बने
धर्म-कर्म खूब निभाते हैं
पादप से कुछ भी तोड़ो तुम
पत्ते भी तो संग आते हैं
दुःख से पीले पड़ जाएँ पर
पीड़ाएँ कभी गाते नहीं
सीखो पेड़ों की पातों से
टूटे पर अश्रु बहाते नहीं।
धागों में पिरोकर देखो न
बंदनवार बना लो चाहे
मंदिर, गुरुद्वारे, गिरजाघर
पीर, मजार सजा लो चाहे
कितना भी मान-सम्मान मिले
फिर भी कभी इतराते नहीं
सीखो पेड़ों की पातों से
टूटे पर अश्रु बहाते नहीं।

माँ का स्नेह

माँ तेरे जैसा स्नेह मुझे
जीवन में फिर से मिला नहीं।

मेरी छोटी-सी चोटों को, धीरे-धीरे वो सहलाना
कितना प्यार सा लगता था, रानी-सी बिटिया कहलाना
हृदय के छाले फूटे-फटे, किसी ने इन्हें सिला नहीं।
माँ तेरे जैसा स्नेह मुझे
जीवन में फिर से मिला नहीं।

मैं छोटी-छोटी बातों पर, जोर-जोर से रो जाती थी
फिर तू ही चुपके से आकर, माँ मुझको मौन कराती थी
अब तो हर क्षण है रूठा रे, मनवाना मन का मिला नहीं।
माँ तेरे जैसा स्नेह मुझे
जीवन में फिर से मिला नहीं।

जिस घर में लड़की पलती है, उसका तो वो भी गेह नहीं
जहाँ मेहंदी के पाँव धरे, माँ जैसा उस घर स्नेह नहीं
माँ री मैं पराई हो चली पर, तुझको कुछ भी गिला नहीं।
माँ तेरे जैसा स्नेह मुझे
जीवन में फिर से मिला नहीं।

माँ बनकर ही इस औरत ने, आँचल तले अमृत पाया है
ममता का रस पीने के लिए, भगवान् धरा पर आया है
वह फूल कितना अभागा रे, तेरी छँयाँ जो खिला नहीं।
माँ तेरे जैसा स्नेह मुझे
जीवन में फिर से मिला नहीं।



Mahesh Patel

Zan Financial & Accounting Service

Mortgage, Life Insurance, Book Keeping, Personal Income Tax,
Corporate Income Tax, RRSP & RESP

88 Guinevere Road, Markham,
ON L 3S 4 v2 416 274 5938
Mahesh2938@yahoo.ca



सविता अग्रवाल कविता, संस्मरण, लघुकथा, हाइकु, क्षणिकाएँ लेखन की विभिन्न विधाओं में रूचि रखती हैं। विभिन्न पत्रिकाओं और समाचार पत्रों-हिंदी टाइम्स, अंतरजाल पत्रिकाओं-साहित्य कुंज, हिन्दी हाइकु, सहज साहित्य, अम्स्टेल्यांगा (हॉलैंड) अखिल विश्व ई पत्रिका में सविता जी की रचनाओं का प्रकाशन होता रहता है। 2001 से सपरिवार कैनेडा में निवास है।

मन की खोज

एक विशाल नीला कम्बल
मेरे सिर से कोसों दूर है
पर क्या है उसके आगे ?
एक अथाह शून्य
कल्पना से परे
मेरी सोच न पहुँच सकती है कभी
उसके आयत को नापने की
सोचती हूँ
क्या कभी खोज पाऊँगी ? उसका विस्तार।
और नाप पाऊँगी दायरा ?
शायद छुपा है वहाँ एक विस्तृत एकाकीपन
जिसकी कल्पना से भी मन घबराता है
पर अचानक क्यों ये मन
उस शून्य को ढूँढना चाहता है
वह अनदेखा एकाकीपन मुझे
खींचता रहता है अपनी ओर
उस शून्य में समा जाना चाहता है
अपनी हथेली में बंद कर लेना चाहती हूँ
वह नीला कम्बल, सितारों जड़ा।

गूँज

ऋतु बदली
परखी है पेड़ों ने गूँज उसकी
हवा के संग कभी गुनगुनाती है
कभी चीत्कार भरे शब्दों से
पत्तों का हृदय चीर जाती है
कभी बर्फ की परतों सी
गात को टंडा कर
गर्मी पा उसकी
पानी हो जाती है
शाखों की आँखों से कभी
टप-टप कर बरस जाती है
खुशी से कभी पेड़ों को
झूला झुलाती है
बादल का संदेशा कभी
पृथ्वी पर लाती है
अपनी ही भयानक गूँज से
डरकर कभी
रात के सत्राटे में
बर्फ की चादर में मुँह ढककर
वक्ष पर धरती के सो जाती है
अगली ध्वनि के ख़्वाब लिये
सुप्तावस्था में चली जाती है
गूँज तो गूँज है
गूँजती रहती है
हर समय हर जगह
बहती ही रहती है
धरा का आनन
गुंजायमान करती है

सिलसिला

आज मेरे दिमाग की रुई को
धुन दिया है
एक अनोखे धुनकर ने
तार-तार हो गई रुई
जो बरसों से जुड़ी थी
अपने ही रेशों से मिल
सुख आनंद में पड़ी थी
किन्तु
उस में से आज मैंने
एक बिनौला निकाला है
जो छिप कर
रुई में धँसा था
रुई के प्रेम में
बरसों से फँसा था
हो गया है अलग वह
पानी से, रेत-सा
तभी-चंचल हवा का झोंका
मुस्कराकर आया
उड़ा ले गया बिनौले को
उगाने को एक और पौधा
कपास का, यहीं कहीं
मेरे ही इर्द गिर्द
अपने अस्तित्व को
बनाये रखने की चाह में
छोड़कर मुझे
अकेला
सिर धुनते रहने की राह में।



Dr. Rajeshvar K. Sharda MD FRCSC
Eye Physician and Surgeon

Assistant Clinical Professor (Adjunct)
Department of Surgery, McMaster University



1 Young St., Suite 302, Hamilton On L8N 1T8

P: 905-527-5559 F: 905-527-3883

Email: info@shardaeyesinstitute.com

www.shardaeyesinstitute.com



डॉ.सतीशराज पुष्करणा

प्यास जो लगी
बूँदे पल भर में
हो गई नदी ।
○
रात है काली
चलो जलाएँ दीये
लिखें-दिवाली ।
○
खारा पानी पी
नभ ने बरसाया
पानी मीठा ही ।
○
बच्चों की खुशी
ऐसा लगा-जैसे कि
प्रकृति हँसी ।
○
मिटी थकान
देखकर बच्चे की
शुभ्र मुस्कान ।
○
नदी जो सूखी
तटों की खाई बढ़ी
आदमी जैसी ।
○
कटे न दिन
महँगाई की मार-
चुभते पिन ।
○
पानी काँपा है
कोई प्यासा खड़ा है
नदी-तट पे ।
○
सभी जाएँगे
पर कुछ यादों में
हम पाएँगे ।
○
उनका आना-
सँभली नहीं खुशी
आँखें छलकों ।



डॉ. उर्मिला अग्रवाल

ठिटुरती मैं
सच तुम्हारा प्यार
जाड़े की धूप ।
○
धूप सेंकती
गठियाए घुटने
वृद्धा सर्दी के ।
○
लजीली धूप
सिमटी सिकुड़ी-सी
बैठी ओसारे ।
○
पसरे हुए
दर्द-भरे सन्नाटे
दोस्ती के गाँव ।
○
लिपटा हुआ
आसमानी चादर
उजला चाँद ।
○
नेह पीती है
तभी रोशनी देती
दिये की बाती ।
○
सजाता सूर्य
गुलाबी चुनरिया
संध्या के माथे ।
○
जलतरंग
बज उठा घर में
बच्चे हँसे है ।
○
तेरे जिक्र से
खुल-खुल जाती है
स्मृति-पोटली ।
○
भोर का ध्वज
पंछियों ने उठाया
शोर मचाया ।



हरकीरत 'हीर'

रिमझिम-सी
सावन की फुहार
छाया खुमार ।
○
बदला आज
मौसम का मिजाज
क्या छुपा राज !
○
भीगी धरती
मस्ती में सरबोर
मौसम हुआ ।
○
ये बरसात
छेड़े बूँदों का साज
महकी रात ।
○
ले अँगड़ाई
दादुर भी निकले
छेड़ा है राग ।
○
नन्हा-सा बीज
छतरी ले के आया
खिल मुस्काया ।
○
मेघा जो आए
पंख फैला नहाए
चिड़िया गाए ।
○
क्यों है उदास?
पतझड़ के बाद
आता बसंत ।
○
छूटे न कभी
रिश्ता ये तेरा-मेरा
नेह से भरा
○
रोया ये कौन
पत्तों से है लिपटों
दर्द की बूँदें ।





अमेरिका में रह रहीं अदिति मजूमदार का जन्म पश्चिम बंगाल के कोलकाता शहर में हुआ। कोलकाता विश्वविद्यालय से एम.ए तथा जाधवपुर विश्वविद्यालय से बी.एड.की डिग्री प्राप्त कर शिक्षण और लेखन में कार्यरत रहीं। 2006 में अमेरिका आने के उपरांत कई विदेशी पत्र-पत्रिकाओं में लेख छपने लगे; जिससे लिखने की और प्रेरणा मिली।

एक दिन

एक दिन यह सुन
दिल मेरा दहक गया
किसी नवजात कन्या को
सड़क पर कोई छोड़ गया।

क्या यह कोई मजबूर माँ थी
या कन्या होने की सजा थी।

ऐसा क्यों होता है कि
नवजात कन्या को ही
छोड़ा जाता है
नवजात बालक को
गले लगाया जाता है

कन्याएँ ही,
जो बालकों का जन्म देगीं
यह बात कब किसी के समझ आएगी....

कन्याओं की हत्या
होती ही जा रही है
कभी शिशु अवस्था में,
तो कभी वधु के रूप में,
वह कहाँ बच पा रही है ?

आए दिन
घटनाएँ सुन कर
दिल दहकता है
कोई तो बताए
कि कब वक्त बदल सकता है।

यादें

तुम्हारी यादों की लौ लिये
चुपके से
मन के आँगन में खड़ी थी
पुरवाई की खुशबू में
तुम्हें ढूँढ़ रही थी....

काली बदली में
तुम कहीं खो गए
आँधियों की लहरों में
तुम्हें ढूँढ़ने चली थी
बीते कल के अधूरे सपने लिये
चुपके-चुपके तुम्हें खोज रहीं थी....

अविरल दीपशिखा लिये हाथों में
जीवन-डोर-बाँधने चली थी
तुम कहीं खो गए अकेला छोड़ मुझे
ज्योतिर्मय भोर की आस लिए खड़ी थी।

मौसम

मौसम का क्या भरोसा
आज शुष्क तो कल भीगा !

भीगे मौसम में,
भीगने का मन होता है
सर पर छत का आश्वासन हो
तो भीगने का मन होता है !

छत न हो तो
तन मन
आँखें नम रहती हैं
छत वालों को देखकर
मन की आस बढ़ती है
पैरों तले ज़मीन नहीं
सर पर छत नहीं
क्या सपने देखने का हक नहीं?

मौसम आते-जाते
दशा में सुधार नहीं
इस दुर्दशा से निकलने की
आशा भी नहीं.
सर पर छत न होने का ग़म
छतवालों को कहाँ पता !!!

मौसम का क्या भरोसा
आज शुष्क तो कल भीगा !
दिल में इरादा है तो
कमज़ोर भी ज़ोर लगा देता है,
मौसम का क्या भरोसा
बदलते देर लगती नहीं



Tel : (905) 764-3582
Fax : (905) 764-7324
1800-268-6959

Professional Wealth Management Since

Hira Joshi, CFP

Vice President & Investment Advisor

RBC Dominion Securities Inc.

260 East Beaver Creek Road
Suite 500
Richmond Hill, Ontario L4B 3M3
Hira.Joshi@rbc.com

भाषांतर



इन्गोबोर्ग बाखमन

जन्म-२५ जून १९२६, क्लेंगफोर्ड, ऑस्ट्रिया।
मृत्यु-१७ अक्टूबर १९७३ (आयु ४७), रोम,
इटली।

नागरिकता-ऑस्ट्रिया।

सम्मान-४७ की आयु का सम्मान १९५३, जॉर्ज
बुशनर सम्मान १९६४, एंटोन विलगेंस सम्मान।



हरमन हेस्से

जन्म-२ जुलाई १८७७, जर्मनी साम्राज्य।

मृत्यु-९ अगस्त १९६२ (८५ वर्ष),

लेखन-कवि, कथाकार, उपन्यासकार।

नागरिकता-जर्मन, स्विस्।

सम्मान-साहित्य में नोबल प्राइज १९४६, गेटे
सम्मान १९४६



saarasansaar@gmail.com

literature@saarasansaar.com

आस्ट्रियाई लेखिका इन्गोबोर्ग बाखमन की दो कविताएँ

अनुवाद: अमृत मेहता

रहस्य

आएगा और क्या
आएगा कुछ नहीं।
अनंतकाल तक
आएगा न वसंत
लिखा है हर पंचांग में
प्रफुल्लता का अंत।
ग्रीष्म भी नहीं
ग्रीष्म जैसा भी
कुछ नहीं।
होना नहीं उदास
कहता है कोई राग
और कोई तो
कहता भी
कुछ नहीं।

शांतिदूत

इस प्रलय के बाद
आ जाए सब को मौत
कोई भी न बचे
केवल बचे कपोत।
सागर में जाती डूब
जो डूबते हुए
पत्ता न फेंकता
यह श्वेत शांतिदूत।



जर्मन नोबल पुरस्कार विजेता

हरमन हेस्से की कविता

अनुवाद: अमृत मेहता

कब तक गायन?

जर्जर निढाल
चरमराती टूट कर
झुकी डाल
झूलती रही
साल दर साल,
सूखी,
कराहती
सुनाती
हवा में अपना
गान,
न पत्ते,
न छल,
जर्जर, निढाल,
नहीं उसके लिए दीर्घ
जीवन, है तो दीर्घ
मृत्यु का जाल।
गायन उसका
कर्कश अनवरत
उद्धत, बेहाल
कब तक गायन?
एक ग्रीष्म
और,
एक शरद
काल।

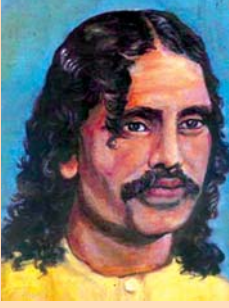




पंजाबी लहर
PUNJABI LEHRAN ENTERTAINMENT
पंजाबी लहरियाँ
پنجابی لہراں
ENTERTAINMENT IS ALL WE DO
WWW.PUNJABILEHRAN.COM

Tel: 416-677-0106
Fax: 416-233-8617

Satinder Pal Singh Sidhwan
Producer & Director
www.punjabilehran.com
info@punjabilehran.com



अपनी भाषा

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल
बिन निज भाषा-ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल।

अंग्रेजी पढ़ि के जदपि, सब गुन होत प्रवीन
पै निज भाषा-ज्ञान बिन, रहत हीन के हीन।

उन्नति पूरी है तबहिं, जब घर उन्नति होय
निज शरीर उन्नति किये, रहत मूढ़ सब कोय।

निज भाषा उन्नति बिना, कबहुँ न ह्यै हैं सोय
लाख उपाय अनेक यों, भले करे किन कोय।

इक भाषा इक जीव इक, मति सब घर के लोग
तबै बनत है सबन सों, मिटत मूढ़ता सोग।

और एक अति लाभ यह, या में प्रगट लखात
निज भाषा में कीजिए, जो विद्या की बात।

तेहि सुनि पावै लाभ सब, बात सुनै जो कोय
यह गुन भाषा और महँ, कबहुँ नाहीं होय।

विविध कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार
सब देसन से लै करहु, भाषा माहि प्रचार।

भारत में सब भिन्न अति, ताहीं सों उत्पात
विविध देस मतहू विविध, भाषा विविध लखात।

सब मिल तासों छाँड़ि कै, दूजे और उपाय
उन्नति भाषा की करहु, अहो भ्रातगन आय।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (९ सितंबर १८५०-७ जनवरी १८८५) आधुनिक हिंदी साहित्य के पितामह कहे जाते हैं। वे हिन्दी में आधुनिकता के पहले रचनाकार थे। इनका मूल नाम 'हरिश्चन्द्र' था, 'भारतेन्दु' उनकी उपाधि थी। उनका कार्यकाल युग की सन्धि पर खड़ा है। उन्होंने रीतिकाल की विकृत सामन्ती संस्कृति की पोषक वृत्तियों को छोड़कर स्वस्थ परम्परा की भूमि अपनाई और नवीनता के बीज बोए। हिन्दी साहित्य में आधुनिक काल का प्रारम्भ भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से माना जाता है। भारतीय नवजागरण के अग्रदूत के रूप में प्रसिद्ध भारतेन्दु जी ने देश की गरीबी, पराधीनता, शासकों के अमानवीय शोषण का चित्रण को ही अपने साहित्य का लक्ष्य बनाया। हिन्दी को राष्ट्र-भाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने की दिशा में उन्होंने अपनी प्रतिभा का उपयोग किया। भारतेन्दु बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। हिंदी पत्रकारिता, नाटक और काव्य के क्षेत्र में उनका बहुमूल्य योगदान रहा। हिंदी में नाटकों का प्रारंभ भारतेन्दु हरिश्चंद्र से माना जाता है। भारतेन्दु के नाटक लिखने की शुरुआत बंगला के विद्यासुंदर (१८६७) नाटक के अनुवाद से होती है। यद्यपि नाटक उनके पहले भी लिखे जाते रहे किंतु नियमित रूप से खड़ीबोली में अनेक नाटक लिखकर भारतेन्दु ने ही हिंदी नाटक की नींव को सुदृढ़ बनाया। उन्होंने 'हरिश्चंद्र पत्रिका', 'कविवचन सुधा' और 'बाल विबोधिनी' पत्रिकाओं का संपादन भी किया। वे एक उत्कृष्ट कवि, सशक्त व्यंग्यकार, सफल नाटककार, जागरूक पत्रकार तथा ओजस्वी गद्यकार थे। इसके अलावा वे लेखक, कवि, संपादक, निबंधकार, एवं कुशल वक्ता भी थे। भारतेन्दु जी ने मात्र ३४ वर्ष की अल्पायु में ही विशाल साहित्य की रचना की। पैंतीस वर्ष की आयु (सन् १८८५) में उन्होंने मात्रा और गुणवत्ता की दृष्टि से इतना लिखा, इतनी दिशाओं में काम किया कि उनका रचनाकर्म पथदर्शक बन गया।

प्रमुख कृतियाँ

मौलिक नाटक

वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति (१८७३ई., प्रहसन), सत्य हरिश्चन्द्र (१८७५), श्री चंद्रावली (१८७६, नाटिका), विषस्य विषमौषधम्

(१८७६, भाण), भारत दुर्दशा (१८८०, ब्रजरत्नदास के अनुसार १८७६, नाट्य रासक), नीलदेवी (१८८१, प्रहसन), अंधेर नगरी (१८८१), प्रेमजोगनी (१८७५, प्रथम अंक में केवल चार अंक या गर्भांक, नाटिका), सती प्रताप (१८८३, केवल चार अंक, गीतिरूपक)

अनूदित नाट्य रचनाएँ

विद्यासुन्दर (१८६८, 'संस्कृत चौरपंचासिका' का बँगला संस्करण), पाखण्ड विडम्बना (कृष्ण मिश्रिकृत 'प्रबोधचंद्रोदय' का तृतीय अंक), धनंजय विजय (१८७३, कांचन कवि कृत, संस्कृत नाटक के तीसरे अंक का अनुवाद), कर्पूर मंजरी (१८७५, सट्टक, कांचन कवि कृत संस्कृत नाटक का अनुवाद), भारत जननी (१८७७, नाट्यगीत), मुद्रा राक्षस (१८७८, विशाखदत्त के संस्कृत नाटक का अनुवाद), दुर्लभ बंधु (१८८०, शेक्सपियर के 'मर्चेट आप वेनिस' का अनुवाद)

काव्यकृतियाँ

भक्तसर्वस्व,
प्रेममालिका (१८७१),
प्रेम माधुरी (१८७५),
प्रेम-तरंग (१८७७),
उत्तरार्द्ध भक्तमाल (१८७६-७७),
प्रेम-प्रलाप (१८७७),
होली (१८७९),
मधुमुकुल (१८८१),
राग-संग्रह (१८८०),
वर्षा-विनोद (१८८०),
विनय प्रेम पचासा (१८८१),
फूलों का गुच्छ (१८८२),
प्रेम फुलवारी (१८८३)
कृष्णचरित्र (१८८३)
दानलीला
तन्मय लीला
नये जमाने की मुकरी
सुमनांजलि
बन्दर सभा (हास्य व्यंग)
बकरी विलाप (हास्य व्यंग)
निबंध संग्रह भारतेन्दु ग्रन्थावली (तीसरा खंड) में संकलित है। नाटक शीर्षक प्रसिद्ध निबंध (१८८५) ग्रंथावली के दूसरे खंड में दिया गया



रिसर्च फैकल्टी असोसिएट, हिन्दी विभाग
गौतम बुद्ध यूनिवर्सिटी, यमुना एक्सप्रेस-वे,
नियर कासना, गौतम बुद्ध नगर,
ग्रेटर नोएडा - २०१ ३१२
renuyadav0584@gmail.com

‘अरे हमार रनियाँ... रनियाँ रे रनियाँ... हमार रनियाँ हमके कहाँ छोड़ भगलस रे रनियाँ... अरे हमार बछिया... लाली चुनरिया ओढ़वउले क सपना हम देखनी, सपना के माटी में मिलउलू रे बछिया... चुटकी सेनुरवा के कोइला में मिलउलू रे रनियाँ... सपना देखाइ कहाँ भगलू रे रनियाँ...’

चीख-पुकार, रोआ-रोहट सुनकर गाँव वाले दौड़े-दौड़े आए-दुआरे पर बउकी की लाश देखकर अवाक !

‘अरे अभी तो कल ठीक थी और आज...! बेचारी का सोलह दिन बाद तो बियाह था, फिर अब ! ऐसा कैसे हो सकता है, अचानक मौत ! आह ! अरे इसके तो ओठ करिया गए हैं, लगता है वह ज़हर खाई है ! हाँ-हाँ ज़हर ही खाई है !’

और फिर जल्दी-जल्दी बाँस कटा, टिलठी तैयार हुई और बउकी की लाश बिलखते माई-दादा के सामने से उठा ले जाई गई। नाते रिश्तेदारों को तो छोड़ो तिलौली जैसे छोटे से गाँव में पूरे लोगों को तो पता भी नहीं चला कि बउकी मर गई। बउकी तो बऊकड़ थी दुहाये से बियाह के डर से ज़हर-माहूर खाकर मर गई ! यह घटना सन् २००० में घटी।

दो साल बाद उसी गाँव में चन्द्रसिलवा ने ज़हर खा लिया, सुना था कि वह गर्भवती थी। वह तो जहाँ बैठती थी सिल-पाथर हो जाती है। किसी ने कुछ कर दिया होगा ! अब इज़्जत की खातिर मर गई तो ठीक ही है।

उसके चार साल बाद सुरसतिया की लाश उँखियाड़ी में मिली, बेचारी घोहा में कपार रगड़-रगड़ कर मर गई। किसी औरत ने उसे खेत में जाने से पहले किनारे पर रखी बाल्टी से पानी निकाल कर पीते हुए देखा था और यह भी देखा था कि तब उसके नाक, कान में सोने की खील और बाली थी पर मरने के बाद तो है ही नहीं ! का पता कि उसकी माई निकाल ली हो, और कुछ दिनों से उसके बहकने की खबर चल ही रही थी, पक्का इसके माई-दादा ने ज़हर दे दिया होगा ! भला ऐसी लड़की का जीना कलंक ही है ! अच्छा हुआ कि मर गई। बियाहे के बाद भी किसी और से परेम !

पता नहीं कैसे पुलिस वालों को पता चल गया और आ टपके, पर हुआ कुछ नहीं। १२ हजार से १० हजार रुपये, १० से ८ हजार और ८ से ६ हजार रुपये में पुलिस पट गई। मामला रफ़ा-दफ़ा हो गया, जबकि उस दिन १५ अगस्त का दिन था।

मौत के बाद बऊकी चुड़ैल नहीं बन सकी; क्योंकि सबको उसके बारे में पता नहीं था। लेकिन कट गई उँखियाड़ी, सुरसतिया जाग गई, गाँव वालों को पकड़ने लगीं। चन्द्रशीलवा दोहरा भूत बनी, वो तो जागी ही थी उसके अन्दर का अजन्मा बच्चा भी बदला लेने के लिए जाग गया ! फिर क्या था सोखा-ओझा से बइठवाया गया, पूजा पाठ करवाकर गाँव को शुद्ध किया गया।

यह काल्पनिक कहानी नहीं; बल्कि गोरखपुर के एक छोटे से गाँव ‘तिलौली’ की दास्तान है। जहाँ मनुष्यता से बड़ी वर्चस्ववादी सत्ता की नाक है। वहाँ औरतों की तो नाक ही नहीं होती, सिर्फ देह होती है और देह ही अदृश्य रूप से भाई-बाप, पति-पुत्र, परिवार और समाज की नाक से जुड़ी होती है तथा जिस सामान्य नाक से वे साँसें लेती हैं ; वे साँसें वर्चस्ववादी सत्ता की अमानत होती हैं, जो हर पल अपने पति, पिता और परिवार की नाक बचाने के लिए चलती या रुकती हैं। साँसों की गति भी परिवार के संस्कारों पर आधारित होती है, जैसी आज्ञा वैसी साँस। वह नाक ही है जो मिटकर पूरे समाज को पानी-पानी होने से बचा लेता है, वह नाक ही है जो किसी जायज़ रिश्ते की मोहर के

साथ गर्व के साथ खड़ी हो जाती है तथा वह नाक ही है जो निरन्तर मर-खपकर रह-सहकर स्वर्ग का दरवाज़ा खोल देती है। नाक बचाने की राजनीति स्त्री के संस्कारों में नीर-क्षीर की भाँति घोल दी जाती है, मरे तो मरे, पर नाक न कटने पाए !

सिमोन द बोउवार का कथन ‘स्त्री स्त्री पैदा नहीं होती, स्त्री बना दी जाती है’ और वहीं से शुरू होती है त्याग, ममता, करुणा, प्रेम और भय की कहानी। वर्चस्ववादी सत्ता के विश्वास पर यदि वह खरे उतरे तो ठीक, नहीं तो मिटा दो ! आसान बात तो यह है कि भाई-बाप की इज़्जत के नाम पर स्त्रियाँ आसानी से मिटने को भी तैयार हो जाती हैं। वैसे भी वे हर रोज़ भाई-बाप की इज़्जत पर दाग लग जाने के डर से मरती ही रहती हैं, फिर क्या फर्क पड़ता है कि एक दिन उनकी चुप्पी को और चुप कर दिया जाए। ऐसी लड़कियों का एक ही राग-अलाप कि हम तो अपने माँ-बाप के लिए ही जी रहे हैं, वरना हमें और किसी से क्या लेना देना। माँ-बाप की इज़्जत की खातिर ही बऊकी ने तड़प-तड़प कर जान गवाँ दी और उसकी माँ उसके सिरहाने बैठी-बैठी साँसें खत्म होने की गिनती, गिनती रही, और सुबह होने पर चिल्ला-चिल्ला कर ऐसे रोई कि सुनने वालों का कलेजा फट गया ! वह नहीं कह सकी अपनी व्यथा ; क्योंकि उसे पति या पुत्री में से किसी एक को चुनना था ! क्या करे-पति है तो सर्वस्व है, बच्चे तो और भी जने जा सकते हैं, पति पर हजार बच्चे कुर्बान। कपार रगड़-रगड़ कर मरने वाली सुरसतिया के मरने के बाद भी उसकी माई का लालच अपरम्पार रहा, वह अपने बेटी के नाक कान की खील और बाली भी निकाल लाई फिर रोते-रोते दुबारा उसकी लाश के पास पहुँची। चन्द्रशीलवा के मरने के बाद फूले पेट को देखकर लोग समझ गए कि उसका पैर भारी था, इसलिए उसका काम तमाम करना सही ही था, लेकिन घर वालों के रोने से बन का पत्ता झहराने लगा।

सबकी नज़र में एक ही बात थी कि लड़कियाँ बदचलन थीं, इसलिए इनका मरना ही ठीक था। जिस तरह एक गन्दी मछली पूरे तालाब को गन्दा

कर देती है, उसी तरह ये लड़कियाँ पूरे गाँव को कलंकित कर देंगी। किन्तु उन लड़कियों के लिए एक ही बात सत्य थी कि 'लागा चुनरी में दाग छुड़ाऊँ कैसे?' सच तो यह है कि इनके लिए तो प्रेम से बड़ा सत्य और प्रेम से बड़ा झूठ इस दुनिया में कुछ भी नहीं था। इन लड़कियों ने जिस प्रेम को अपनी आत्मा का सबसे बड़ा सत्य समझा, इनके प्रेमी उसी वर्चस्ववादी सत्ता के एक प्रतीक थे, जिन्होंने दैहिक सौन्दर्य के अलावा और कुछ जाना ही नहीं। मौत के पश्चात् भी वे अपनी नाक की खातिर न तो इन प्रेम-पुजारियों को देखने आए और न ही कभी स्वीकार किया कि ये हमारी प्रेमिकाएँ थीं। नाक के लिए ही उनका प्रेम झूठा हो गया। जिसने भी जाना, यही समझा कि रोज़ टीक-फाँकर घास गढ़ने वाली लड़कियाँ टी.वी. देख-देखकर बिगड़ गई थीं। हिरोइन बनने का सपना देखते-देखते बेचारे इन सीधे-सादे भोले-भाले लड़कों को फँसा ही डाला। धर्म, नैतिकता, परम्पराओं में मँजे, संस्कारों से सँवरे इन लवडों के मन में भला ऐसी बात भी कैसे आ जाए! अगर आ भी गई तो लड़कपन है, लड़कियों को तो अपने भाई-बाप के नाक के बारे में सोचना चाहिए था।

क्या सोचें ये लड़कियाँ ! सोचा तो इन्होंने यह भी नहीं था कि 'प्रेम गली अति साँकरी', जिसमें प्रेमी की 'नाक' और 'प्रेम' दोनों एक साथ समा ही नहीं सकते। इन्होंने इतना ही जाना था कि 'दृग उखलत टूटत कुटुम', पर ये नहीं जाना कि कुटुम्बी खुद टुटने से पहले इन्हें तोड़-तोड़ कर मिटा डालेंगे ! इनके सपनों के पंख न सिर्फ मरोड़े जाएँगे; बल्कि जड़ से ही साफ़ कर दिए जाएँगे- 'न रहेगा बाँस और न बजेगी बाँसुरी' !

मौत का तमाशा देखने वालों में से किसी ने ये सोचा ही नहीं होगा कि उन छटपटाती, मरती लड़कियों से कैसे एक-एक साँस कराकर निकली होगी। वे अंतिम साँस में तड़पती हुई उस समय अपनी रक्षा के लिए किसे याद कर रही होंगी ? उस समय क्या बचा पाई होंगी उन लड़कों की खोखली नाक ? क्या उस समय उनके लिए सबसे बड़ा सत्य रह पाया होगा प्रेम ? क्या उस समय उनकी नजरों में बची रह गई होगी भाई-बाप की प्रतिष्ठा ? क्या बच पाई होगी स्वर्ग-नरक की चाह ? क्या आखिरी साँसों में भी किसी और की नाक बचाने की सद्भावना बरकरार रख पाई होगी ?

परंतु आश्चर्यजनक बात यह है कि धर्म, नैतिकता,

परंपरा और प्रतिष्ठा के अनुयायियों का काठ-कोरा दिल यह सब करने बाद भी अपनी नाक पर मक्खी तक नहीं बैठने देते। समाज में सदैव उनकी नाक ऊँची ही रहती है और यदि किसी को इनके गुनाहों के विषय में पता भी होता है तो सत्ता की ओरियानी के नीचे मुँह में बातें भुनभुनाकर अपनी बातें भुनाने में लग जाते हैं, जहाँ सिर्फ स्वार्थ प्रबल होता है न कि परार्थ।

ऐसे महान अनुयायियों से प्रश्न है कि क्या वर्चस्ववादी सत्ता की नाक इतनी सफ़ेद है; जिसे प्रेम के दाग से दाग लग जाने का भय निरंतर सताता रहता है ? या इनकी नाक इतनी कमज़ोर है कि बेटियों के हिल जाने से हिल जाती है ? क्या इनकी नाक रूढ़ परंपराओं से इतनी भयभीत है कि उस पर प्रेम का बल पड़ते ही उसे कट जाने का भय सताता है ? या इतनी जर्जर कि बेटियों की जान लिये बिना बच ही नहीं सकती ?

कदाचित् इन्हीं सब बातों को ध्यान में रखते हुए गगन गिल बेटियों को 'झर जाने' की सलाह देती हैं; क्योंकि सबकी नाक बचाने वाली औरतों की तो नाक ही नहीं होती...!!!

□



Hindi Pracharni Sabha

(Non-Profit Charitable Organization)

Hindi Pracharini Sabha & Hindi Chetna ID No. 84016 0410 RR0001

'For Donation and Life Membership

we will provide a Tax Receipt'

Annual Subscription: \$25.00 Canada and U.S.A.

Life Membership: \$200.00

Donation: \$

Method of Payment: Cheque, payable to "Hindi Pracharni Sabha"

Contact in Canada:

Hindi Pracharni Sabha

6 Larksmere Court

Markham,

Ontario L3R 3R1

Canada

(905)-475-7165

Fax: (905)-475-8667

e-mail: hindichetna@yahoo.ca

Contact in USA:

Dr. Sudha Om Dhingra

101 Guymon Court

Morrisville,

North Carolina

NC27560

USA

(919)-678-9056

e-mail: ceddlt@yahoo.com

Contact in India:

Pankaj Subeer

P.C. Lab

Samrat Complex Basement

Opp. Bus Stand

Sehore -466001, M.P. India

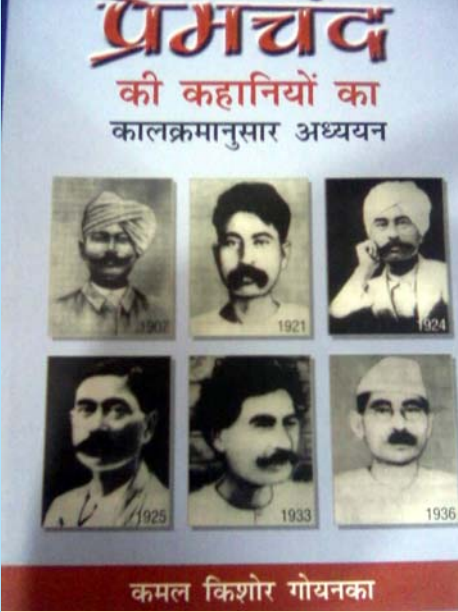
Phone: 07562-405545

Mobile: 09977855399

e-mail: subeerin@gmail.com

प्रेमचंद की कहानियों का कालक्रमानुसार अध्ययन

डॉ. कमल किशोर गोयनका



प्रकाशक-

नटराज प्रकाशन

ए/९८, अशोक विहार, फेज प्रथम

नई दिल्ली-११००५२

मूल्य-२३० रुपये



9-डी कॉर्नर व्यू सोसाइटी, 15/ 33 रोड
बांद्रा, मुंबई 400050
फ़ोन: ९९८७९३८३५८

प्रेमचंद गंगा के भगीरथ: कमल किशोर गोयनका

देवी नागरानी

प्रखर उपन्यास-सम्राट श्री प्रेमचंद जी ने खुद भी कहा है : 'व्यक्ति की बुद्धि और उसकी भावनाओं को प्रभावित करनेवाली रचना को ही साहित्य कहते हैं' वे आगे कहते हैं 'जिस रचना में साहित्य का उद्घाटन हो, जिसकी भाषा प्रौढ़ एवं परिमार्जित एवं सुंदर हो, जिस में दिल और दिमाग पर असर डालने का गुण हो, जिस में जीवन की सच्चाइयाँ व्यक्त की गई हों वही साहित्य है।'

कोई भी रचनाकार समय और समाज से निरपेक्ष होकर लेखन को अंजाम तलक पहुँचा ही नहीं सकता। काल और परिवेश का सूक्ष्म पारखी ही जीवंत रचनाओं को जन्म दे सकता है, क्योंकि रचना का जन्म शून्य से नहीं हुआ करता, अपितु सृजन के गर्भ से स्रष्टा का वैयक्तिक एवं सामाजिक परिवेश से हुआ करता है। जब वैयक्तिक वेदनाएँ लेखनी को माध्यम बनाकर समूचे वर्ग की वेदनाएँ बन जाती हैं तो महान रचना का जन्म होता है। और अभिव्यक्ति की व्यापकता रचना की ख्याति का सबब बनकर उसे कालजयी बना देती है।

एक ऐसी ही कालजयी कृति है 'प्रेमचंद की कहानियों का कालक्रमानुसार अध्ययन' जिसके सृजनहार श्री कमल किशोर गोयनका हैं। उनके साहित्य के क्षितिज का विस्तार आज जिस फ़लक को छू रहा है, वह यही प्रमाणित करता है कि वे एक ऐसे आलोचक और शोधकर्मा हैं; जो देश-विदेश में रचे जा रहे हिन्दी साहित्य को गंभीरता से लेते हैं, और साहित्य की नई प्रवृत्ति की दिशा में कुछ मान्यताएँ, कुछ शंकाएँ, कुछ समाधान; जो उन्होंने अपनी क्रलम की धारदार अभिव्यक्ति से, अनेकों साक्षात्कारों व बातचीत के दौरान विस्तार से खुलासा किए हैं, जिनको पढ़ते हुए जाना जाता है कि उनका लगाव हिन्दी के साहित्य के प्रति साधना बन गया है। इसी राह की विडंबनाएँ, अड़चनें, उपेक्षाएँ अनेकों पड़ावों पर साहित्य का मूल्यांकन करने वालों की विचारधारओं के रूप में सामने आई होंगी, उन्हें भी एक पड़ाव समझकर पार करते हुए उन्होंने अपनी विचारात्मक सोच-समझ, गहरे अध्ययन से एक रचना संसार का सृजन किया है। हिन्दी साहित्य के प्रचार-प्रसार तथा प्रतिष्ठा

हेतु यह प्रोत्साहन का कार्य क्राबिले-तारीफ़ है।

प्रेमचंद साहित्य के अध्येता-डॉ. कमल किशोर गोयनका रचित ७५७ पन्नों वाले इस प्रेमचंद शास्त्र को पढ़ते हुए एक बात निश्चित रूप से सामने आई कि उनकी रचनात्मक शिराओं में प्रेमचंद कुछ यूँ रच बस गए हैं कि उन्होंने प्रेमचंद के जीवन, परिवेश, व साहित्य में धँसकर जिस साहित्य का सृजन किया है, वही उनके रचनाधर्मिता की प्रामाणिकता है; जो उन्हें प्रेमचंद स्कॉलर और प्रेमचंद विशेषज्ञ के नाम से एक अलग पहचान से अलंकृत करने से नहीं चूकी। यह हिन्दी में एक अनूठे ढंग का प्रयास है और भविष्य में मील का पत्थर माना जाएगा। यही नहीं इससे प्रेरणा पाकर कुछ और शोधकर्ता इस प्रकार के कार्य शुरू करेंगे, और हिन्दी में अन्य यशस्वी कवि-लेखकों के विश्वकोश के निर्माण-कार्य से संलग्न होंगे।

इस ग्रंथ के अन्त में परिशिष्ट-ग के अंतर्गत लिखी प्रेमचंद की २६ पुस्तकों की, अन्य साहित्यकारों पर १७ पुस्तकें, हिन्दी के प्रवासी साहित्य पर ६ संग्रहों की सूची दर्ज है। हिन्दी साहित्य जगत में इन कृतियों की संपन्नता उनकी अक्षय कीर्ति की आधार शिला है और रहेगी।

प्रेमचंद की कहानियों के इस कालक्रमानुसार अध्ययन को आठ अध्यायों में विभाजित किया गया है।

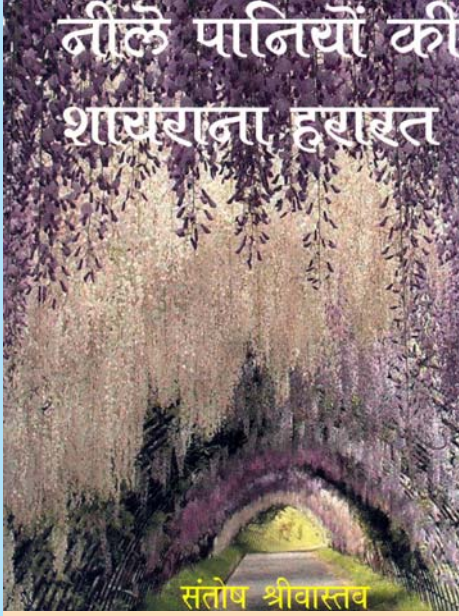
अध्याय: एक-प्रेमचंद : कहानीकार का इतिहास, कहानी की स्थिति, कहानियों की संख्या और हिन्दी-उर्दू-कहानी संग्रह, अध्याय: दो-प्रेमचंद की कालक्रमानुसार सूची, अध्याय: तीन-प्रेमचंद का कहानी दर्शन, अध्याय: चार-प्रथम दशक (१९०८-१९१०), अध्याय: पाँच-द्वितीय दशक (१९११-१९२०), अध्याय: छः-तृतीय दशक (१९२१-१९३०), अध्याय: सात-चतुर्थ दशक (१९३१-१९३६), अध्याय: आठ-उपसंहार

परिशिष्ट क, ख, ग, में प्रेमचंद की कहानी 'सौत' की मूल पाण्डुलिपि, कुछ कहानियों की अंग्रेजी रूपरेखाएँ, कमल किशोर गोयनका की प्रकाशित पुस्तकों की सूची शामिल हैं।

□

नीले पानियों की शायराना हरात (यात्रा संस्मरण)

संतोष श्रीवास्तव



प्रकाशक-

नमन प्रकाशन-४२३१
१ अंसारी रोड, दरियागंज,
नई दिल्ली-११०००२
मूल्य-३२५ रुपये



अर्शना रेजीडेन्सी, रहपुरा चौधरी मार्ग, केन्द्रीय
कारागार के पीछे, इज्जतनगर, बरेली, उ.प्र.।
मोबाइल ९८३७०८५३२६

सृजनात्मक मौलिकता का साक्ष्य

रघुवीर

यात्रा संस्करण विधा पर अब लेखकों द्वारा बहुत कम लिखा जा रहा है। अज्ञेय, राहुल सांकृत्यायन जैसे बिरले ही हैं जिन्होंने साहित्य को ध्येय बनाकर यात्राएँ कीं और इस विधा पर कलम चलायी। यात्राएँ केवल विश्व मानचित्र पर दिये देशों, शहरों और गाँवों की भौगोलिक जानकारी के लिए ही नहीं होतीं, बल्कि उससे हमारे जीवन के अनुभवों का विस्तार होता है और जीवन के प्रति नजरिये का भी।

चर्चित लेखिका संतोष श्रीवास्तव ने पिछले १०-१२ वर्षों में अपने यात्रा संस्मरणों की रोचकता और जानकारियों से इस विधा में अपनी कलम माँज ली है। उन्होंने अभी तक २२ देशों की यात्रा की है, जिन पर लिखे गये संस्मरण राष्ट्रीय स्तर की सभी महत्वपूर्ण पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं। इन्हीं संस्मरणों को संकलित किया गया है 'नीले पानियों की शायराना हरात' पुस्तक में इस पुस्तक में १७ देशों के यात्रा संस्मरण हैं, जो संतोष श्रीवास्तव की सृजनात्मक मौलिकता का साक्ष्य हैं।

'चाँद की आँख से झरा द्वीप...मॉरीशस' इस संग्रह का पहला संस्मरण है, जो पूरे मॉरीशस की सैर कराता है। उस अतीत को बतलाता है जब १५०५ ईस्वी में एक पुर्तगाली नाविक समुद्र के रास्ते मॉरीशस के वीरान तट पर आया था और वहाँ की प्राकृतिक समृद्धि देख दंग रह गया था। दूर-दूर तक एक भी इन्सान नहीं, लेकिन प्राकृतिक खूबसूरती ऐसी कि वह पलक झपकाना भूल गया और उसने इस द्वीप को अपने राजा को नजराने के रूप में दे दिया। फिर हॉलैण्ड के डच का शासन, फ्रांसीसियों का शासन और फिर अंग्रेजों का शासन रहा यहाँ...लेकिन मॉरीशस को बसाया भारत के बिहार, पूर्वी उत्तर प्रदेश के निवासियों ने, जिन्हें सुनहले सपने दिखाकर अंग्रेज गिरमिटिया मजदूर बनाकर मॉरीशस ले गए। तमाम जुल्मों की रूह कँपा देने वाली तस्वीर... 'धन्य हैं मेरे देश के वासी...मेरे पुरखों के खून से उपजी मॉरीशस की मिट्टी को माथे से लगाने को मन तड़प उठा।' लेखिका समकालीन हिन्दी साहित्य सम्मेलन में भाग लेने मॉरीशस गई थीं और उनकी पारखी नजर

ने मॉरीशस की प्राकृतिक सुन्दरता, दर्शनीय स्थल, बोली, भाषा, करैसी, खानपान, रहन-सहन, उत्सव, परम्परा के साथ हिन्दी के प्रति वहाँ के निवासियों के विशेष लगाव का बेहद रोचक भाषा-शैली में वर्णन किया है।

'मौरियों के देश में-ऑस्ट्रेलिया' के विभिन्न शहरों की यात्रा करते हुए लेखिका लिखती हैं कि शाम के छह बजे भी यहाँ चमकती दोपहर रहती है। यहाँ सूरज आराम नहीं करता। रात साढ़े नौ बजे सूरज के अस्त होते ही सभी कार्यालय और बाजार बन्द हो जाते हैं। कहवाघरों, रेस्तराओं, फुटपाथ पर सजी टेबिल-कुर्सियों के दरम्यान कहकहे, मुस्कुराहटें, खुशियाँ क्रदम-बोसी करती नजर आती हैं। हिन्दी में बात करते ऑस्ट्रेलियन चकित कर देते हैं और तब मालूम होता है कि हिन्दी नाट्य थियेट्रों, विश्वविद्यालयों, सिनेमाघरों में किस क्रदर अपनी जड़ें जमा चुकी है। काबिले तारीफ वर्णन है ऑस्ट्रेलिया का।

न्यूजीलैंड के खूबसूरत पर्वतीय नगर क्वींसटाउन जाते हुए रास्ते में टोकेपो झील का वर्णन करते हुए वह लिखती हैं-'में झील के सौन्दर्य पर न्यौछावर हो गयी। दूर-दूर तक बहते हल्के नीले और बॉटल ग्रीन पानियों की झील मानसरोवर की याद दिला रही थी। यह न्यूजीलैंड की सबसे पुरानी झील है।' अद्भुत भाषा-शैली सहित लेखिका एक ऐसे कैनवास पर तमाम दृश्यों को चित्रित करती चलती हैं, जिसका एक सिरा आसमान को छूता है तो दूसरा धरती को।

संतोष श्रीवास्तव की विदेश यात्रा का सिलसिला २००४ से आरम्भ हुआ, जब वह अंतरराष्ट्रीय पत्रकार मित्रता संघ की सदस्य मनोनीत हुईं और हिन्दी के प्रचार-प्रसार में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका को उन्होंने साबित किया। यही वजह है कि जर्मनी, स्विटजरलैण्ड, ऑस्ट्रिया, इटली, फ्रांस, बेल्जियम, नीदरलैण्ड (हॉलैण्ड), स्कॉटलैण्ड, इंग्लैण्ड, जापान, थाईलैण्ड और उजबेकिस्तान के यात्रा संस्मरणों में उन्होंने हिन्दी की स्थिति पहले स्पष्ट की है और यह बहुत गर्व की बात है कि वैश्विक स्तर पर हिन्दी उच्च शिखर पर है। हिन्दी ने शिक्षा, फिल्म,

नाटक, गीत, संगीत, साहित्य, बाज़ार, व्यापार और कारपोरेट जगत में विश्व स्तर पर खुद को प्रतिष्ठित किया है। जर्मनी के संस्मरण में वह लिखती हैं— 'हाइडलबर्ग यूनिवर्सिटी के सभी विद्यार्थी हिन्दी के जानकार थे। विशाल यूनिवर्सिटी में प्रवेश करते ही मैं रोमांचित हो उठी। यहाँ हिन्दी और संस्कृत के इंस्टीट्यूट, डिपार्टमेंट, प्रोफेसर्स और विद्यार्थी देख मैं दंग रह गयी। जर्मन विद्यार्थी और प्रोफेसर्स भी ऐसी धारा प्रवाह हिन्दी बोलते हैं कि आपको दाँतों तले अँगुली दबानी पड़े। यहाँ के पुस्तकालयों में संस्कृत के वेद, पुराण, उपनिषद और महाकाव्य के साथ-साथ आधुनिक लेखकों की पुस्तकें भी उपलब्ध।'

'डेढ़ हजार झीलों में झिलमिलाता है स्विट्ज़रलैंड का सौन्दर्य' छोटा सा देश, लेकिन जितनी अधिक प्राकृतिक सुन्दरता उतने ही सुन्दर दिल और सुन्दर शकल के लोग...हकीकत में दूध की नदी बहती हो जैसे...चॉकलेट, आइस्क्रीम चीज़ आदि जितने भी मिल्क प्रोडक्ट हैं, वे बहुत सस्ते और बहुतायत से हैं।

प्रत्येक देश का वर्णन वहाँ बिताए लम्हों के संग बहुत रोचकता और सजीवता से कलमबद्ध किया है लेखिका ने, जो एक शिल्पकार द्वारा गढ़ी गयी मूर्ति से कम नहीं है। भाषा की सरलता, भावनाओं का सुन्दर प्रस्तुतीकरण एवं विचारों की मौलिकता संतोष की रचनाओं की विशेषता है। प्रत्येक वाक्य मधुरता में छलकता है।

ऑस्ट्रिया का वर्णन 'जहाँ बिथोविन और मोजार्ट की धुनों का गुंजन है' तब अधिक मार्मिक बन पड़ता है जब वे साल्ज़बर्ग में प्रख्यात ऑस्ट्रियन लेखक स्टीफ़न स्वाइग के मकान को देखने गईं, जो भव्य किले से कम न था। 'लेखक को कभी अपने दुःख-दर्द नहीं देखने चाहिए। वह तो दूसरों के दुःख-दर्द अपनी कलम से बाँटने के लिए पैदा होता है।' इस वाक्य के ज़रिये लेखिका ने मानो लेखन की एक ही समय में कई दिशाओं, संस्कृतियों को अपने दायरे में समेट लिया है।

दुनिया के सबसे छोटे देश वाटिकन, जो १०९ एकड़ क्षेत्रफल और एक हजार की आबादी का है, का वर्णन करते हुए लेखिका लिखती हैं कि वाटिकन चर्च को देखने और समझने के लिए कई दिन चाहिए। उसके ज़र्रे-ज़र्रे में कहानियाँ छुपी हैं। इटली के रोमाँ खुद को राम की सन्तान कहते हैं। पृथ्वीराज

चौहान के शासनकाल में आक्रमणकारी मुहम्मद गौरी से हारकर भागे हुए जो राजपूत इटली में आए वे रोमाँ कहलाने लगे। इन्हें जिप्सी भी कहते हैं। फ्रांस में लेखिका ने परफ्यूम के उत्पादन और प्रचलन के अद्भुत इतिहास का वर्णन किया है। बेल्जियम के डॉ. कामिल बुल्के के भारत प्रेम से अभिभूत लेखिका ने वहाँ की प्रत्येक इमारत, गली-कूचे, साहित्य एवं दर्शन का खुलकर वर्णन किया है। हॉलैंड (नीदरलैंड) के क्यूकेनहॉफ गार्डन में २५ रंगों, शेड्स के ट्यूलिप के फूलों का ८० एकड़ ज़मीन में लहलहाता साम्राज्य देख 'सिलसिला' फिल्म याद तो आनी ही थी।

स्कॉटलैंड में लेखकों को बहुत अधिक सम्मान दिया जाता है। इंग्लैंड, जापान जहाँ के जापानी कवि बोन्चो और रीटो की हाइकु कविताओं ने साहित्य में एक नयी विधा को जन्म दिया। परमाणु बम की त्रासदी झेल चुके जापान के विकास को देख लगता ही नहीं कि यहाँ कभी मानवता का विनाश हुआ था। वहाँ की टी सेरेमनी (चाय महोत्सव) का वर्णन करते हुए लेखिका लिखती हैं कि यह वाकई एक उत्सव के रूप में मनाया जाता है। चटाई पर वज्रासन की मुद्रा में लकड़ी के कटोरे में डाली गई बिना दूध और शक्कर की चाय को दोनों हाथों से पकड़कर पीना बड़ा रोमांचक था।

इसी तरह उजबेकिस्तान के शहर समरकन्द में ग्रेट सिल्क रोड से गुज़रते हुए वह महसूस करती हैं कि बाबर का दादा तैमूर इसी रोड से ऊँट पर सवार होकर भारत गया था। वहाँ के लोगों के लिए वह भले ही फरिश्ता था पर मेरे देश के लिए तो लुटेरा ही था। मैं देख रही थी ग्रेट सिल्क रोड को... जैसे तैमूर का ऊँटों का काफ़िला चला जा रहा हो जिन पर लदा है भारत का बेशकीमती खज़ाना... सोना, चाँदी, हीरे, जवाहरात, खूबसूरत, कमसिन लड़कियाँ जिनके भाई, पिता, पति को क्रल्लेआम में मौत के घाट उतार दिया गया था।

इसी तरह के अनेक दृश्यों को लेखिका ने शृंगार की तरह पिरोया है। उनके लेखन की संवेदना पाठक को स्पन्दित करने में सक्षम है। पाठक भावनाओं के अतिरेक में बहता हुआ बाहर और भीतर की सच्चाई से साक्षात्कार करता हुआ ताकत महसूस करता है। यात्रा संस्मरण की विधा में यह पुस्तक निश्चय ही मील का पत्थर साबित होगी।



उत्तराखण्ड में महाप्रलय

डॉ. सुधा गुप्ता

उत्तराखण्ड में महाप्रलय

हाइकु काव्य



उत्तराखण्ड में महाप्रलय (हाइकु-संग्रह)

नलिनिकान्त

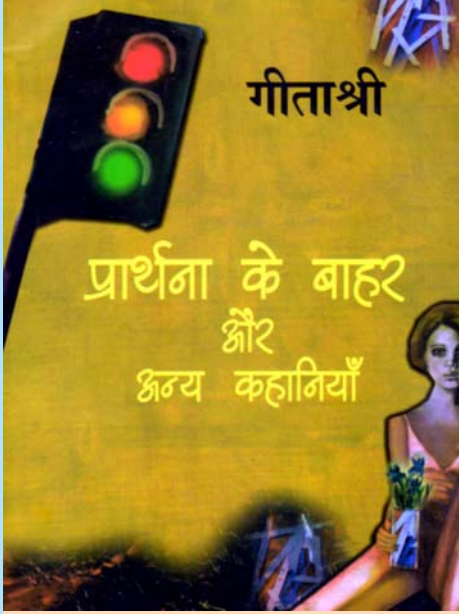
प्रकाशक : सरस्वती प्रेस, उत्तर बाज़ार,
अण्डाल, पश्चिम बंगाल

कविताश्री के सम्पादक श्री नलिनिकान्त लगभग नौ दशक के अपने अनुभवों को समेटे एक संवेदनशील, वयोवृद्ध, ज्ञानवृद्ध, दृढ़ संकल्पी, दशकों से हाइकु-सेवा में सन्नद्ध। प्रकृति के अनन्य पुजारी। झारखण्ड में जन्मे कवि को अपनी जन्मभूमि से अटूट लगाव है। जैसा कि शीर्षक से स्पष्ट है प्रथमखण्ड 'उत्तरखण्ड में महाप्रलय' में जून, २०१३ में हुई विनाश लीला का विशद यथार्थ वर्णन १२५ हाइकु में किया गया है। जल-प्रलय के कारणों और हिमालय की पावन भूमि पर आधुनिक विज्ञान, सभ्यता और निहित स्वार्थों द्वारा किए गए अत्याचारों को संकेतित किया गया है। दूसरे खण्ड 'पावन पर्यावरण' के अन्तर्गत चौदह शीर्षक में १०३ हाइकु हैं। प्रकृति-पूजन, फूलों का संसार, हबा, बदरा, चैताली, पर्यावरण, पेड़, वर्षा-मंगल, प्रकृति शीर्षकों में प्रकृति का स्तवन है। प्रस्तुत हाइकु-काव्य मनोरम और संग्रहणीय है। वरिष्ठ हाइकुकार की जिजीविषा और सतत सृजनधर्मिता को नमन !



प्रार्थना के बाहर और अन्य कहानियाँ

गीताश्री



प्रकाशक-
वाणी प्रकाशन
4695, 21 ए, दरियागंज,
नई दिल्ली-११०००२
मूल्य-१२५ रुपये



पी. सी. लैब, सम्राट कॉम्प्लेक्स बेसमेंट
बस स्टैंड के सामने, सीहोर 466001, मप्र
ईमेल subeerin@gmail.com

अपने समय के आगे की कहानियाँ

पंकज सुबीर

गीताश्री उन कहानीकारों में से हैं जिन्होंने कम लिखा है लेकिन जो कुछ भी लिखा है उसे पूरी शिद्दत के साथ लिखा है। उनकी कहानियों में जो पात्र आते हैं उन पात्रों का अध्ययन करने पर पता चलता है कि इन पात्रों को कितने मनोयोग के साथ गढ़ा गया होगा। उर्दू शायरी में जिसे कहते हैं कि गजल की नोंक-पलक सँवारना, वैसा ही गीताश्री ने अपनी पात्रों के साथ किया है। फिर चाहे वो 'प्रार्थना के बाहर' की प्रार्थना हो, 'सोन मछरी' की रुम्मा हो, 'गोरिल्ला प्यार' की अर्पिता हो या 'दो पन्ने वाली औरत' की आसावरी हो, ये पात्र बहुत सुगठित हैं। बहुत कम कहानीकारों के पात्र ऐसे मिलते हैं। गीताश्री की कहानियाँ घटनाओं से ज्यादा पात्रों की कहानियाँ हैं। और सबसे अच्छी बात यह है कि ये पात्र आपके, हमारे जीवन से ही टहलते हुए गीताश्री की कहानियों में चले आते हैं, ये मंगल ग्रह से उतरे या ज़बरदस्ती उतारे हुए पात्र नहीं होते। गीताश्री की कहानियों को उतना न्याय नहीं मिल पाया है तो उसके पीछे भी एक कारण है, दरअसल ये कहानियाँ अपने समय से कुछ आगे की कहानियाँ हैं। जैसे हृदयनाथ मंगेशकर का संगीत होता था, अपने समय से कुछ पहले रच दिया गया संगीत। जैसे कि गीताश्री की 'ताप' कहानी है। यह कहानी परिभाषा के मायने से सचमुच बोलड कहानी है लेकिन, इसकी बोलडनेस उस तरह नहीं है जिस प्रकार से हिन्दी कहानी में बोलड होने को परिभाषित किया जा रहा है। यह कहानी कुछ दुस्साहस करती है, इसलिये बोलड है। यह कहानी कुछ जमे हुए को तोड़ने का प्रयास करती है, इसलिए बोलड है। यह कहानी अपने समय के आगे का कोई दृश्य उठाकर पाठक के सामने रखती है इसलिए ये बोलड है।

शीर्षक कहानी 'प्रार्थना के बाहर' की ही बात की जाए तो ये कहानी भी बोलड होने के सारे मापदंडों पर खरी उतरती है। जैसा कि मैंने पहले भी कहा कि स्त्री और पुरुष की देह की बातें करना ही बोलडनेस नहीं है, अगर यही बोलडनेस है तब तो पनघट पर, विवाहों में, स्त्रियाँ इशारों इशारों में या सीधे सीधे बरसों से ये बातें करती आई हैं। बोलडनेस का मतलब है कि उस सब में

कोई विद्रोह का एक बिन्दु तलाश लेना। उन सबके बीच में अपने अस्तित्व का एक टुकड़ा सच तलाश लेना। जो इस कहानी की नायिका प्रार्थना करती है। वो सही मायने में बोलड है; क्योंकि उसके लिए ज़िंदगी एक उत्सव है, जिसको वो हर पल अपने लिए शक्ति संचय का कारण बना कर जी रही है, वो हारती हुई दिखती है और जीत जाती है। ये कहानी देह की कहानी होकर भी देह के इतर के संसार की कहानी है। ठीक इसी प्रकार का संसार गीताश्री ने अपनी चर्चित कहानी 'गोरिल्ला प्यार' में भी रचा है। वहाँ भी कथा नायिका रोने-पीटने के बजाए विकल्प तलाशती है और वो भी तुरंत, एक पल की देरी किये बगैर। ये कहानी केवल इसी मायने में विलक्षण है कि इसमें गीताश्री ने एक नया रास्ता खोला है। अर्पिता का त्वरित निर्णय कि विकल्प तलाशा जाए, कहानी को भीड़ से अलग कर देता है।

गीताश्री का कहानी संग्रह इस मामले में भी अलग है कि इसमें एक ही प्रकार की कहानियाँ नहीं हैं। इसमें यदि देह के बहाने प्रश्नों के उत्तर तलाशती हुई कहानियाँ हैं तो दूसरी और 'देवीजी' और 'सोन मछरी' जैसी कहानियाँ भी हैं जो सामाजिक पृष्ठभूमि पर लिखी गई हैं। मगर एक बात जो इन कहानियों को पढ़ते समय हर समय महसूस होती है वो ये है कि गीताश्री के लिए स्त्री बहुत महत्वपूर्ण है। स्त्री और उसके प्रश्न ये गीताश्री की कहानियों के मूल स्वर हैं। गीताश्री की नायिकाएँ चिर विद्रोहिणी हैं। ये नायिकाएँ होते रहने को स्वीकार करने को तैयार नहीं हैं। ये होना चाहती हैं। जैसा कि 'एक रात ज़िंदगी' की शाइस्ता भी कहती है 'मैं अपनी यातना के कुछ साल यूँ ही गुमशुदा नहीं रहने दूँगी चैताली... मैं जवान तो हुई ही नहीं कभी.....'

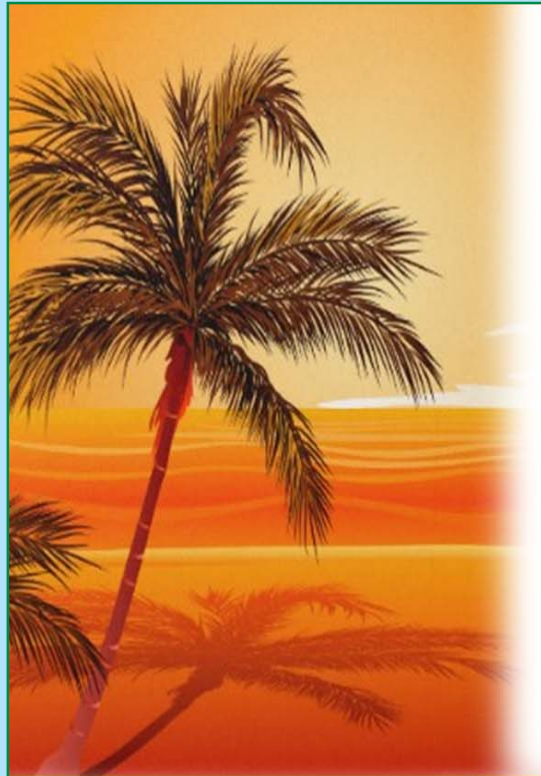
कहानी संग्रह में गीताश्री एक ही विषय को कई तरीके से देखती हैं। जैसे 'दो पन्ने वाली औरत' में प्रश्न का दूसरा पहलू भी है। यहाँ समय के बीत जाने के बाद की कथा है। यहाँ पर देह की दुनिया के निर्मम होने की कथा है। यह देह के वसंत के ठीक बाद के पतझर की कहानी है। पॉवर गेम की विशेषता ये ही होती है कि उसको पॉवर के साथ

ही खेला और खोला जा सकता है। एक समय के बाद देह स्वतः ही इस पॉवर गेम से बाहर होने लगती है क्योंकि, पॉवर गेम वसंत में खेला जा सकता है पतझड़ में नहीं। गीताश्री का ये संग्रह इसलिए भी उल्लेखनीय है कि इसमें एक ही सिक्के के दो पहलू 'एक रात ज़िंदगी' और 'दो पन्ने वाली औरत' में दिखाई देते हैं। दोनों में कथा नायिका उम्र के ढलान पर है, लेकिन दोनों का ट्रीटमेंट बिल्कुल अलग है। कहानीकार की अपनी दृष्टि का विस्तार यदि उसके कहानी संग्रह में दिखाई देता है तो इससे उसके विचारों की वुसअत समझ में आती है, अन्यथा तो बाज कहानी संग्रह लगभग एक ही विषय को एक ही तरीके से कहानी दर कहानी सामने रखते चले जाते हैं। यदि पाठक को पढ़ते समय लगे कि पिछली ही कहानी को कुछ फेर बदल करके सामने रख दिया है तो वो ठगा हुआ महसूस करता है। ठीक है कि एक विषय होता है और उस विषय पर लिखना लेखक को पसंद होता है; किन्तु कहानियाँ लेखक अपने लिए नहीं पाठक के लिए लिखता है। गीताश्री का कहानी संग्रह पाठक के लिए लिखा गया संग्रह है।

'बह गई बैगिन नदी' कहानी इस संग्रह की विषय वैविध्य को दर्शाने वाली एक और कहानी है। कहानी सरोकारों की कहानी है। कहानी एक गंभीर कहानी है जिसका इस कथा संग्रह में होना नितांत आवश्यक था। इसलिए भी कि जैसा मैंने पूर्व में कहा कि इससे लेखक की दृष्टि का विस्तार समझ में आता है। एक पुरानी कहावत है 'अंधा चूहा घट्टी के आस पास', लेखक को इस कहावत को हमेशा अपने जेहन में रखना चाहिए। कि कहीं ऐसा न हो कि वो भी अंधे चूहे की ही तरह घट्टी (एक ही विषय) के आस पास घूमता रहे। 'बह गयी बैगिन नदी' कहानी एक ऐसी ही कहानी है जो पाठक को मुतमईन करती है कि लेखिका की मुट्टी विषयों को लेकर तंग नहीं है। यह कहानी जिस प्रकार दो बिम्बों को लेकर समाप्त होती है वो अद्भुत है। हालाँकि एक मंचीय कविता के साथ कहानी को समाप्त करने पर कहीं कुछ खटकता है लेकिन, उसके ठीक ऊपर आदिवासी लोक गीत की पंक्तियाँ आश्रस्त करती हैं कि इस सब का एक खास मतलब है। कहानी चौकरी लेखकीय दृष्टि का परिचय देती हुई गुज़रती है।

इन सबके बीच में कभी कभी लेखक का भी मन होता है कि वो अपने मन की भी कुछ कहे कुछ लिखे। जैसे 'दो लफ़्ज़ों की एक कहानी' जैसी कहानी, जो नितांत प्रेम की कहानी है। इसमें प्रेम प्याले के बाहर छलक-छलक जा रहा है। इस प्रेम का सौंदर्य उसके विछोह में उसके दुख में है और उन सारे आँसुओं में है; जो प्रेम में बह रहे हैं। प्रेम की विशिष्टता ही आँसुओं में होती है। हो सकता है कि इस प्रकार की कहानियाँ कुछ लोगों को कमजोर लगे लेकिन, ये कहानियाँ प्रेम में रह कर ही पढ़ी जा सकती हैं। प्रेम जिसके बारे में कहा जाता है कि वो इन्सान को अंदर से खूबसूरत बनाता है और जिसके लिए न उम्र की सीमा हो न जन्म का हो बंधन कहा जाता है।

कुल मिलाकर ये कि समय के आगे के समय में झाँकना दुःस्साहस होता है और ऐसा दुःस्साहस गीताश्री कर रही हैं इसके लिये बधाई। मुझे उम्मीद है कि आज नहीं तो कल ये कहानियाँ अपना उचित मूल्यांकन करवा लेंगी तथा अपने हिस्से का वो कोना तलाश लेंगी जिस पर इनका हक है।



PRIYAS

INDIAN GROCERIES

1661, Denision Street,
Unit# 15

(Denision Centre)
MARKHAM, ONTARIO.
L3R 6E4

Tel: (905) 944-1229, Fax : (905) 415-0091

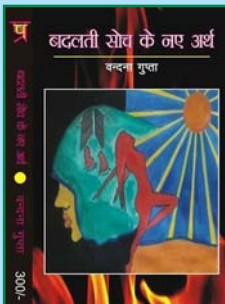
पुस्तकें



उपन्यास: गुलाम मुंठी
लेखक: निर्मला भुराड़िया
प्रकाशक: सामयिक प्रकाशन, दिल्ली
संस्करण: २०१४
मूल्य: ३९५ (हार्डबाऊंड)



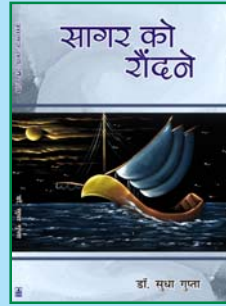
काव्य संग्रह: एक देश और मेरे हुए लोग
रचनाकार: विमलेश त्रिपाठी
मूल्य : ९९.०० रुपये मात्र
बोधि प्रकाशन, जयपुर
संस्करण-सितंबर, २०१३



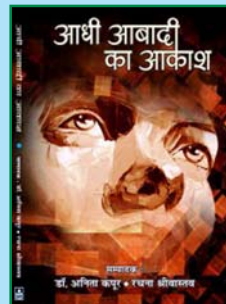
काव्य संग्रह : बदलती सोच के नए अर्थ
रचनाकार: वंदना गुप्ता
मूल्य : ३०० रुपये
परिलेख प्रकाशन
नजीबाबाद



डॉ. सुधा गुप्ता के हाइकु में प्रकृति
रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'-डॉ. भावना कुँअर,
मूल्य : ५०० रुपये,
प्रकाशक: अयन प्रकाशक: १/२०, महरौली, नई
दिल्ली-११० ०३०



सागर को रौंदना है (सेदोका संग्रह)
डॉ. सुधा गुप्ता,
वर्ष : २०१४
मूल्य : २०० रुपये; प्रकाशक: अयन प्रकाशक:
१/२०, महरौली, नई दिल्ली-११००३०

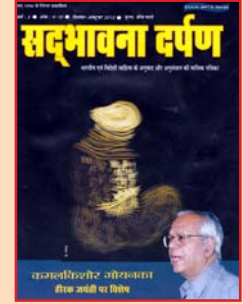


आधी आबादी का आकाश (हाइकु-संग्रह)
सम्पादक : डॉ. अनिता कपूर, रचना श्रीवास्तव
प्रकाशक: अयन प्रकाशक: १/२०, महरौली, नई
दिल्ली-११० ०३०
मूल्य : २०० रुपये

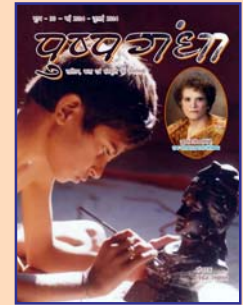
हमसफ़र पत्रिकाएँ



शोध दिशा



सद्भावना दर्पण



पुष्पगन्धा



हरिगंधा

BEST DEALS FLOORING

Residential & Commercial



Free Delivery
Under Pad
Installation

Residential
Commercial
Industrial
Motels & Restaurants

Free Shop at
Home Service Call:
416-292-6248

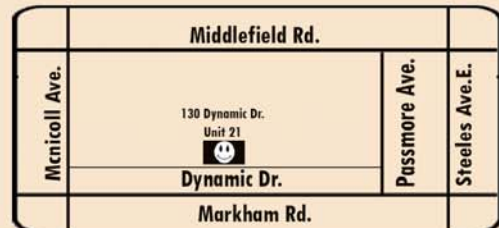
WE ALSO SUPPLY

• BASE BOARDS • QUATER ROUNDS • MOULDINGS • CUSTOM STAIRS • ALL KINDS OF TRIMS ■ CARPET BINDING AVAILABLE

FREE - Installation - Under Padding - Delivery

Call: **Raj** OR **GARY** 416-292-6248

130 Dynamic Drive Unit#2, Scarborough, ON M1V5C9



Custom Blinds - Ceramic Tiles - Hall Runner



Jaswinder Saran
Sales Representavie

Direct: 416-953-6233

Office: 905-201-9977

HomeLife/Future Realty Inc.

Independently Owned and Operated Brokerage*

205-7 Eastvale Dr. Markham, ON L3S 4 N8
Highest Standed Agents.....Highest Results!....

www.bestdealsflooring.ca



जुलाई-सितम्बर 2014

प्रोफेशनल
सेवा

61

देवी नागरानी के सिन्धी कहानी संग्रह 'अपनी धरती' का लोकार्पण



चाँदीबाई हिम्मत लाल मनसुखानी कॉलेज में देवी नागरानी के सिन्धी कहानी संग्रह 'अपनी धरती' का लोकार्पण समारोह सम्पन्न हुआ। यह महत्त्वपूर्ण दिन 'सिन्धी दिवस' एवं मुशाइरे के तौर पर सुबह १०.०० से ३.०० बजे तक इस कॉलेज में मनाया गया। जहाँ पर मुंबई महानगर व और स्थानों से पधारे सिन्धी विद्वान् व कविगण भी पधारे थे।

सुरेशचन्द्र शुक्ल के कहानी संग्रह 'सरहदों के पार' का लोकार्पण



डॉ. कमल किशोर गोयनका, हरी सिंह पाल, सुरेशचन्द्र शुक्ल 'शरद आलोक', डॉ. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, नासिरा शर्मा, डॉ. गिरिशजशरण अग्रवाल और पूनम माटिया ने सुरेशचन्द्र शुक्ल के कहानी संग्रह 'सरहदों के पार' का लोकार्पण किया।

अशोक 'अंजुम' के दोहा संग्रह 'चम्बल में सत्संग' का लोकार्पण



विवेक बंसल द्वारा कवि श्री अशोक 'अंजुम' तथा पर्सियन की प्रख्यात विदुषी प्रो. अजरमी दुख्त सफ़वी का सार्वजनिक अभिनन्दन किया गया ! इस अवसर पर अशोक 'अंजुम' के नए दोहा संग्रह 'चम्बल में सत्संग' का लोकार्पण भी किया गया ! कार्यक्रम की अध्यक्षता अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के पूर्व उप कुलपति प्रो. ख्वाजा शमीम ने की तथा संचालन डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ ने किया !

विश्व मैत्री मंच का प्रथम हिन्दी साहित्य सम्मेलन हिमाचल प्रदेश में आयोजित



हेमंत फाउंडेशन के विश्व मैत्री मंच द्वारा आयोजित महिला पत्रकारों एवं साहित्यकारों का प्रथम सम्मलेन 22मई को धर्मशाला(हिमाचल प्रदेश) में प्रख्यात लेखिका जया शर्मा 'केतकी' की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। उद्घाटन सत्र में संतोष श्रीवास्तव ने अपने बीज वक्तव्य में संस्था के उद्देश्यों पर प्रकाश डालते हुए कहा -यह मंच महिलाओं की ओर से महिलाओं के लिए उठाया हुआ ऐसा कदम है जो उन होनहार महिलाओं को ठोस जमीन देने के लिए कटिबद्ध है जो वक्त के तकाजों में घुट कर रह गई हैं। सुमीता केशवा ने प्रस्तावना प्रस्तुत करते हुए संस्था की गतिविधियों की जानकारी दी। प्रथम सत्र में प्रतिभागियों के परिचय स्वागत के साथ कहानी पाठ हुआ। द्वितीय सत्र में विभिन्न प्रदेशों से पधारि लेखिकाओं ने -हिंदी साहित्य के विश्व स्तरीय परिप्रेक्ष्य में स्त्री की भूमिका, विषय पर खुली चर्चा की। अपने अध्यक्षीय वक्तव्य में जया केतकी ने कहा -नारी केवल नारी के विषय में नहीं सोचती, वह पूरे परिवार, समाज, देश के साथ पूरे विश्व के बारे में सोचती है, उसकी इस सोच

को यह संस्था अंजाम देगी यह हर्ष का विषय है। कार्यक्रम का संचालन मीनू मदान, सरस्वती वन्दना प्रभा शर्मा और आभार प्रदर्शन डा.ज्योति गजभिये ने किया। सम्मेलन के द्वितीय दिवस के कार्यक्रम का आयोजन डलहौजी में हेमंत के जन्म दिवस 23 मई 2014 को प्रख्यात लेखिका एवं 'बिंदिया' की सम्पादक गीताश्री की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। कार्यक्रम की मुख्य अतिथि डा.विद्या चिटको, विशेष अतिथि डा.रोचना भारती, डा. कृष्णा खत्री थीं। अतिथियों के स्वागत के पश्चात सुमीता केशवा ने स्व. हेमंत को श्रद्धांजलि देते हुए उनकी कविता 'जियो मुझे' का पाठ कर कार्यक्रम की शुरुआत की। अपने अध्यक्षीय भाषण में गीताश्री ने कहा कि -महिलाएँ अपनी पीड़ा, दर्द को नहीं लिखेंगी तो वे खत्म हो जायेंगी। निश्चय ही पीड़ा ने आप सबकी कविताओं को जन्म दिया। इस अवसर पर विभिन्न विधाओं की आठ पुस्तकों का विमोचन किया गया। तत्पश्चात काव्य संध्या में सभी साहित्यकारों ने गीत, ग़ज़ल और कविताओं का पाठ किया। संस्था के आगे के कार्यक्रमों की रूपरेखा तैयार करते हुए सर्वसम्मति से महाराष्ट्र की अध्यक्ष प्रमिला शर्मा एवं डॉ. रोचना भारती छत्तीसगढ़ की अध्यक्ष मधु सक्सेना एवं सरोज गायकवाड़, भोपाल की अध्यक्ष डॉ. जया शर्मा 'केतकी' आंध्र प्रदेश की संपत देवी मुरारका तथा अमेरिका की डॉ. विद्या चिटको को नियुक्त किया गया। कार्यक्रम में सरस्वती वन्दना मधु शृंगी, संचालन प्रमिला शर्मा तथा आभार लक्ष्मी यादव ने किया।

-सुमीता केशवा कार्याध्यक्ष- हेमंत फाउंडेशन



सारस की चाल

मैं चला सारस की चाल
सर पर टोपी पैरों में नाल
सारस बोला
क्यों करते हो मेरी नक़ल
क्या मैं कभी हंस बना
चाल बदल
अपनी जड़ों में रहो
क्यों करते दल बदल।
पाश्चात्य छोड़ अपनी
जड़ों को सम्भालों
माटी से जुड़े रहों
ख़्वाब की नदी में न डूबो
राजा बनने की चाह में
अपने जड़ों को न भूलों।

अदिति मजूमदार (अमेरिका)

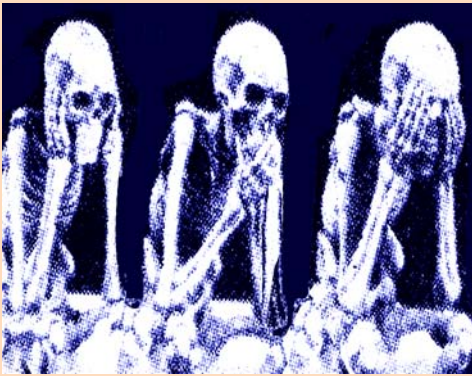
मैं सारस हूँ

सारस के पैरों की भाँति
हमने अपने पैर किए।
बाँध लकड़ी पैरों में
अपने-अपने सर ऊँचे किए।
हँस-हँस कर और मुँह बनाकर
मन सबके हर्षित किए।
कद को ऊँचा उठा के हमने
मन भावन नाटक किए।
कोई करता नृत्य नए और
कोई चले जोकर सा भाई।
किसी ने पहनी टोपी निराली
कोई चले है चाल मतवाली।
एक सारस जो दूर खड़ा था
देख रहा था, मुस्काया
चिढ़ा कर बोला सारस इनको
मुझ-सा न बन पाओगे।
मेरी लम्बी चोंच है प्यारों
उसे कहाँ से लाओगे ?
मैं चलता पत्थरों के अन्दर
क्या तुम वह कर पाओगे ?
पानी से मैं मछली लाता
भूखे पेट की भूख मिटाता।
तुम तो प्यारों कमर से अपनी
आधा भी न झुक पाओगे।
केवल हाथों को ही ऊपर
और नीचे मटकाओगे।
मैं सारस हूँ जान लो भैया
तुम प्राणी ही कहलाओगे।

सविता अग्रवाल 'सवि' (कैनेडा)

कैसे बन गए इंसान

सारस ने आकाश में उड़ते,
जब देखा सागर तट पर,
सोचा यह अजीब से पक्षी
कहाँ से आये हैं भटक कर।
मेरे जैसी लम्बी टांगें
पर चोंच लगती है छोटी,
नीचे जा कर देखूँ ज़रा,
मुझसे मुंडी भी है मोटी।
एक बात तो पक्की हो गई,
मछली तक नहीं इनकी पहुँच
न इनकी है लम्बी गर्दन,
ना ही लम्बी इनकी चोंच।
पंख नहीं दिए ईश्वर ने,
पर दे दिए छोटे हाथ,
वृक्षों के फल खाते होंगे,
या हाथों से तोड़ के पात।
बहुत ही छोटे गोड़े इनके,
क्या अंडे देते हैं खड़े-खड़े ?
मेरी तरह इनके भी
अंडे होंगे बहुत बड़े।
नीचे उतर जब उसने देखा,
बोला-यह क्या हो गया भगवान्!
मैं तो लाया था सुंदर बच्चे,
यह कैसे बन गए इंसान!
सुरेन्द्र पाठक (कैनेडा)



इस चित्र को देखकर आपके मन में कोई रचनात्मक पंक्तियाँ उमड़-धुमड़
रही हैं, तो देर किस बात की, तुरन्त ही कागज़ क्रलम उठाइए और
लिखिए। फिर हमें भेज दीजिए। हमारा पता है :

HINDI CHETNA

6 Larksmere Court, Markham, Ontario, L3R 3R1,
e-mail : hindichetna@yahoo.ca



एक मंच पर खड़े हुए हैं, एक बूढ़ा और एक जवान संगीत-जगत के दोनों प्रेमी, हाव-भाव ये करें ब्यान एक गुरु, दूजा है चेला, गाना गाने में मशहूर अपनी कला को प्रदर्शित करके, मनोरंजन करते भरपूर सब लोगों का दिल बहलाते, बूढ़े की ढल गई जवानी बहुत सा धन कमाया इसने, हुई न पूरी जो थी ठानी जो कला है इसके अंदर, वो अब किसको सिखलाएँ ? जो उसने उस्ताद से सीखी, आगे किसको शिष्य बनाएँ ? बहुत देर तक मिल ना पाया, बूढ़े को कोई अच्छा शिष्य जो मिलता वो धन का लोभी, हुआ किसी से न यह खुश इसको चाहिए था वो बंदा, संगीत में जिसकी रुचि अपार अब तक जो कुछ इसने जाना, उसे सौंप दे सारा भार जीवन के अंतिम चरण में, मिल गया इसको अच्छा शिष्य इसे लगा इस युवक में है, संगीत कला का उज्वल भविष्य अब उसके साथ मंच पर, यह भी है प्रदर्शन करता दूर करता उसकी नुटियाँ, उसमें अपने गुणों को भरता पहले-पहले तो लोगों ने, इनका बड़ा मजाक उड़ाया देखा जब गाने का ढंग तो, सबने इनका ही गुण गाया

चित्र को उल्टा करके देखें

इतिहास में एक बूढ़ा और एक जवान संगीत-जगत के दोनों प्रेमी, हाव-भाव ये करें ब्यान एक गुरु, दूजा है चेला, गाना गाने में मशहूर अपनी कला को प्रदर्शित करके, मनोरंजन करते भरपूर सब लोगों का दिल बहलाते, बूढ़े की ढल गई जवानी बहुत सा धन कमाया इसने, हुई न पूरी जो थी ठानी जो कला है इसके अंदर, वो अब किसको सिखलाएँ ? जो उसने उस्ताद से सीखी, आगे किसको शिष्य बनाएँ ? बहुत देर तक मिल ना पाया, बूढ़े को कोई अच्छा शिष्य जो मिलता वो धन का लोभी, हुआ किसी से न यह खुश इसको चाहिए था वो बंदा, संगीत में जिसकी रुचि अपार अब तक जो कुछ इसने जाना, उसे सौंप दे सारा भार जीवन के अंतिम चरण में, मिल गया इसको अच्छा शिष्य इसे लगा इस युवक में है, संगीत कला का उज्वल भविष्य अब उसके साथ मंच पर, यह भी है प्रदर्शन करता दूर करता उसकी नुटियाँ, उसमें अपने गुणों को भरता पहले-पहले तो लोगों ने, इनका बड़ा मजाक उड़ाया देखा जब गाने का ढंग तो, सबने इनका ही गुण गाया



चित्रकार :
अरविंद नारले



कवि:
सुरेन्द्र पाठक

आलोचना मनुष्य की मूल प्रवृत्ति है



हर मनुष्य के भीतर एक आलोचक होता है। इसका अनुभव मुझे बुक क्लब की बैठकों में होता है; जहाँ पुस्तक को पढ़ने के बाद उस पर चर्चा होती है। इस देश में पुस्तकें पढ़ने वाले अभी भी बहुत हैं। अंतरजाल घर-घर जाल फैलाने में सफल रहा है; पर हाथ में मुद्रित किताब पकड़कर पढ़ने वाले वर्ग को यह अधिक प्रभावित नहीं कर पाया। यहाँ परगनों में बुक-क्लब बने हुए हैं। पढ़ने के शौकीन इसके सदस्य होते हैं। इनकी सदस्यता की कोई फ़ीस नहीं होती; शर्त सिर्फ़ इतनी ही होती है, पुस्तकों को गंभीरता से लिया जाए। एक पुस्तक का चुनाव करके सब उसे पढ़ते हैं और पंद्रह दिन बाद परगना के ही क्लब हॉउस में चुनी गई पुस्तक; जो सभी ने पढ़ी होती है, अपनी पसंद ना पसंद के साथ, सकारात्मक, नकारात्मक, निष्पक्ष, पक्षपातपूर्ण, विचारवादी, गुटवादी और कुछ तो सिर्फ़ आलोचना के लिए ही आलोचना करते हैं। उस चर्चा में बोलने वाले के व्यक्तित्व का भी पता चलता है। कई बार आलोचना व्यक्तित्व से प्रभावित लगती है। इन बैठकों से मैंने बहुत कुछ सीखा है। ये बैठकें पाठकों की होती हैं; अगर पाठकों के भीतर बैठा आलोचक बेबाकी से बात कह सकता है, तो जो हैं ही साहित्यिक आलोचक उनका मूल्यांकन कितना महत्वपूर्ण होता होगा।

कभी-कभी लगता है आलोचना मनुष्य की मूल प्रवृत्ति है। किसी में कम होती है तो किसी में अधिक। कई पैदाइशी आलोचक होते हैं; स्वयं की ग़लत बातों को भी सही सिद्ध करते हैं और दूसरों की सही बातों को ग़लत। कइयों में तो यह प्रवृत्ति इतनी हावी हो जाती है कि उनका संतुलन ही बिगड़ जाता है और वे आत्ममुग्धता की श्रेणी में पहुँच जाते हैं। साहित्यकारों में तो यह रोग भयंकर रूप लिये है। रचनाओं की आलोचना हो न हो, पर एक दूसरे को कटघरे में खड़ा करने की कसर नहीं छोड़ी जाती।

साहित्य में आलोचना और समीक्षा का क्या महत्व है या होना चाहिए, इनसे जुड़े कई बिन्दु मेरे विचारों को उद्वेलित करते रहते थे। सोचा 'हिन्दी चेतना' का अक्टूबर अंक विशेषांक होता है, क्यों न इसे आलोचना को समर्पित कर दिया जाए। यह अंक कथा आलोचना अंक होगा और अतिथि संपादक हैं सुशील सिद्धार्थ। यह विशेषांक समकालीन कथा लेखन को केंद्रित करके लिखी गई आलोचना की पड़ताल करेगा।

आखिरी पन्ने तक पहुँचते हुए आपने विशेषांक का विज्ञापन देखा होगा। अगर नहीं देखा तो जरूर देखें।

यह अंक आपको कैसा लगा? आपकी शुभकामनाओं और प्रतिक्रियाओं के इंतज़ार में....

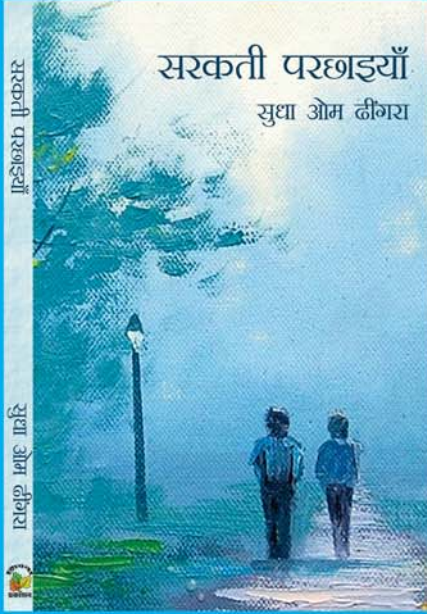
आपकी मित्र

सुधा ओम ढींगरा

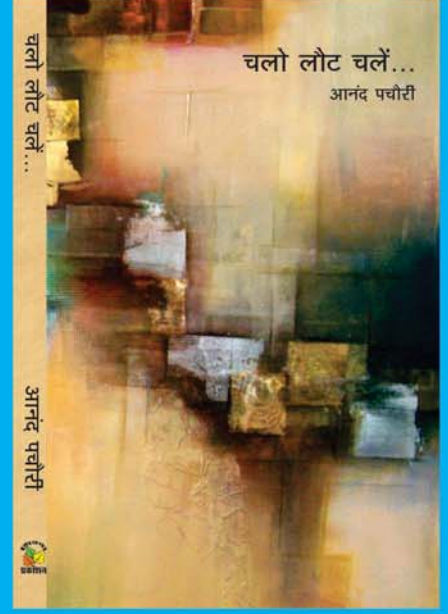


डूबता हुआ सूरज निराशा का प्रतीक नहीं होता, बल्कि, प्रतीक होता है एक नई शुरुआत का, शुरुआत जो अगले दिन एक नई सुबह के साथ होगी। अगले दिन यही सूरज फिर नई आशाएँ, नए सपने, नई उम्मीदें लेकर पूरब में आ खड़ा होगा।

शिवना प्रकाशन



शिवना प्रकाशन
के नए सेट की पुस्तकें

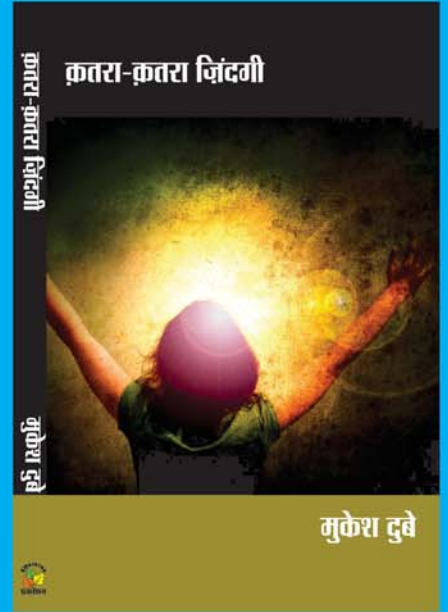
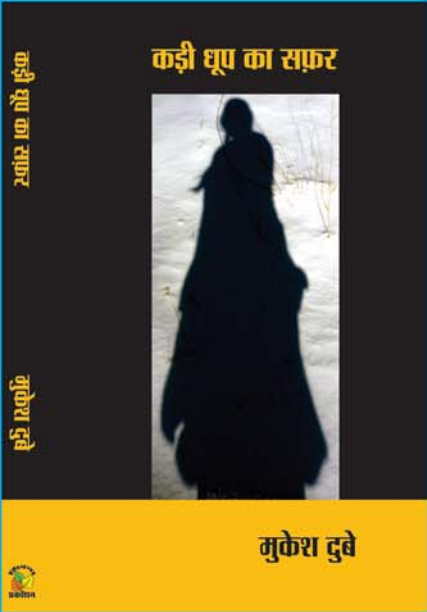


सरकती परछाइयाँ (काव्य संग्रह)
सुधा ओम ढींगरा
ISBN: 978-93-81520-08-6
सजिल्द संस्करण : 2014
मूल्य : 150.00 रुपये



चलो लौट चलें (काव्य संग्रह)
आनंद पचोरी
ISBN: 978-93-81520-09-3
पहला सजिल्द संस्करण : 2014
मूल्य : 150.00 रुपये

तितलियों को उड़ते देखा है...? (काव्य संग्रह)
मधु अरोड़ा
ISBN: 978-93-81520-12-3
पहला सजिल्द संस्करण : 2014
मूल्य : 150.00 रुपये



कड़ी धूप का सफ़र (उपन्यास)
मुकेश दुबे
ISBN: 978-93-81520-10-9
पहला सजिल्द संस्करण : 2014
मूल्य : 150.00 रुपये

क़तरा-क़तरा ज़िंदगी (उपन्यास)
मुकेश दुबे
ISBN: 978-93-81520-11-6
पहला सजिल्द संस्करण : 2014
मूल्य : 150.00 रुपये

शिवना प्रकाशन

शॉप नं. 3-4-5-6

पी. सी. लैब, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट
बस स्टैंड, सीहोर, मध्यप्रदेश 466001

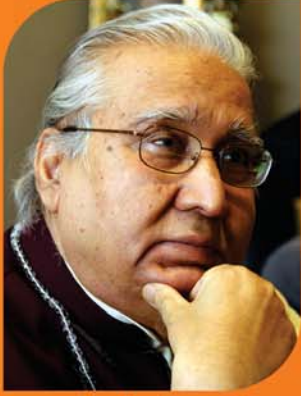
फोन 07562-405545, 07562-695918

मोबाइल +91-9977855399

Email: shivna.prakashan@gmail.com
http://shivnaprakashan.blogspot.in

ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउन्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय सम्मान समारोह

Dhingra Family Foundation-Hindi Chetna International Literary Award Ceremony



प्रो. हरि शंकर आदेश

(उत्तरी अमेरिका -ट्रिनिडाड)

'ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउन्डेशन-हिन्दी चेतना
अंतर्राष्ट्रीय साहित्य सम्मान'

(समग्र साहित्यिक अवदान हेतु)

Pro. Harishankar Adesh
(North America-Trinidad)

'Dhingra Family Foundation-
Hindi Chetna International
Literary Award' for Life Time
Achievement

महेश कटारे

(भारत)

'ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउन्डेशन-हिन्दी चेतना
अंतर्राष्ट्रीय कथा सम्मान'

(अपन्यास-कामिनी काय कांतारे हेतु)

Mahesh Katare
(India)

'Dhingra Family Foundation-
Hindi Chetna International
Literary Award' for Novel
'Kamini Kay Kaantare'

सुदर्शन प्रियदर्शिनी

(अमेरिका)

'ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउन्डेशन-हिन्दी चेतना
अंतर्राष्ट्रीय कथा सम्मान'

(कहानी संग्रह -उत्तरायण हेतु)

Sudershan Priyadarshini
(America)

'Dhingra Family Foundation-
Hindi Chetna International
Literary Award' for Story Book
'Uttaraayan'

प्रथम सत्र: सम्मान समारोह

(First Session: Award Ceremony)

दिनांक: 26 जुलाई 2014

(Date: 26 July 2014)

समय: 1:30 से 5:00

(Time: From 1:30 to 5:00)

स्थान: स्कारबरो सिविक सेंटर, काउंसिल चैम्बर्स, 150 बरो ड्राइव,
स्कारबरो, ओण्टारियो, M1P 4N7

(Venue: Scarborough Civic Center, 150 Borough
Drive, Scarborough, Ontario, M1P 4N7)

प्रथम सत्र संचालन : पंकज सुबीर

(First Session Master Of Ceremony: Pankaj Subeer)

पंकज सुबीर

(सुप्रसिद्ध कहानीकार, उपन्यासकार एवं कवि)

प्रथम सत्र का संचालन एवं द्वितीय सत्र की
अध्यक्षता करेंगे

Pankaj Subeer

(Well Known Story Writer,
Author & Poet)

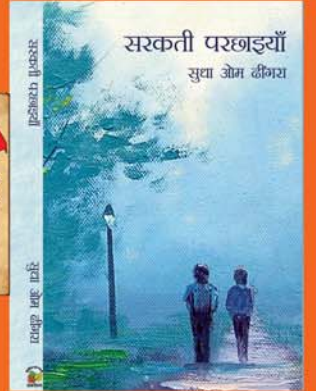
Master of Ceremony for First
Session and Chairmanship for
Second Session



द्वितीय सत्र

पुस्तक विमोचन एवं कवि सम्मेलन

Second Session: Book Release & Poetry Recitation



द्वितीय सत्र: सुधा ओम ढींगरा के काव्य संग्रह 'सरकती परखाइयों'
(शिवना प्रकाशन) का विमोचन एवं तत्पश्चात आयोजित कवि
सम्मेलन में आमंत्रित कवियों का काव्य पाठ।

अध्यक्षता : पंकज सुबीर

(Second Session: Book Release Function of Sudha
Om Dhingra Poetry Book 'Sarakti
Parchhaiyan'(Shivna Prakashan), Followed by
Poetry Recitation by Invited Poets. Chairmanship :
Pankaj Subeer)